प्रवेशांक

विज्ञान परिचर्चा

जुलाई, सितंबर 2010
त्रैमासिक पत्रिका
वर्ष 1 अंक 1

अधिशासी सम्पादक

देवी प्रसाद उनियाल,
वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी, उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद्, (यूकॉस्ट)

प्रबन्ध सम्पादक

कमला पन्त,
अध्यक्ष, पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल)

प्रधान सम्पादक

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.), डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

सम्पादन सहयोग

शशिकान्त गुप्त
एसोशिएट प्रोफेसर (से.नि.), डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

अजय कुमार बियानी
एसोशिएट प्रोफेसर, डी.बी.एस. कालेज, देहरादून

नीलाम्बर पुनेठा
जिला समन्वयक, यू–कास्ट, पिथौरागढ़

अशोक कुमार पंत
राज्य समन्वयक, राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस, उत्तराखण्ड

दिनेश चन्द्र शर्मा
सम्पादक, बाल प्रहरी, अल्मोड़ा

© vigyan pricharcha, 2010

प्रकाशकीय कार्यालय
मृत्युंजय धाम, 18, शास्त्री नगर, हरिद्वार रोड, देहरादून–248001

फोन : 0135-2669236

मोबाइल : 09759348564, 09412047994, 09897020782, 09837862096

ईमेल : pahal_uttarakhand@yahoo.co.in

वेबसाइट : www.pahal_understanding.org

विज्ञान परिचर्चा के लेखों में प्रकाशित सभी विचार लेखकों के अपने हैं तथा लेखकीय स्वतन्त्रता के अन्तर्गत व्यक्त किये गये हैं। उनके साथ सम्पादक अथवा प्रकाशक का सहमत होना या उन विचारों का पत्रिका की नीति से कोई सम्बन्ध होना आवश्यक नहीं है।

विज्ञान परिचर्चा

जुलाई, सितंबर 2010
त्रैमासिक पत्रिका
वर्ष 1

पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लांचर्स (पहल), भारतीय विज्ञान लेखक संघ (इस्वा) उत्तराखंड प्रभाग तथा उत्तराखंड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका, अंतर्भूत उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् समाचार पत्रक–मई से अगस्त 2010

अनुक्रम

संपादकीय
प्रणामांजलि — 04

भारतीय विज्ञान लेखक संघ, उत्तराखंड प्रभाग – एक परिचय — 06

पीपुल्स एसोसियेशन आफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) – एक परिचय — 09

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस — 12

उत्तराखंड के विज्ञान ऋषि – 1, आदित्य नारायण पुरोहित — 14

रेडियो संचार प्रणाली सक्षिप्त परिचय – राजेन्द्र पाल — 18
जमीन पर लंबी दूरी तक, जमीन से हवा में, हवा से हवा में, पानी में, अतरिक्ष में जहाँ
न हवा है न पानी, सब जगह हम बातें कर सकते हैं

हमारी संस्कृति की दशा : तकनीक स्वीकार, विज्ञान अस्वीकार – मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी — 21
वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित अत्याधुनिक तकनीकें तो सबको चाहिये पर
अंधविश्वासों से निकल कर वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने के लिये लोग तैयार क्यों नहीं होते

चिकित्सा प्रौद्योगिकी का कृष्ण पक्ष – पुरूषोत्तम उपाध्याय — 23
मानव ने चिकित्सा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अद्भुत उन्नति कर ली है परन्तु स्वयं मानव यदि उन्नत नहीं हुआ तो क्या उपयोग?
एक अनुभवी, वरिष्ठ चिकित्सा विज्ञानी की चिन्ता

विद्युत् चुम्बकीय तरंगों के जैविक प्रभाव – श्रीराम वर्मा — 25
आज हम विद्युत् चुम्बकीय तरंगों के सतत सम्पर्क में रहते हैं पर सावधानी तो अपेक्षित है ही

अब जंगली खरपतवार से प्राप्त सुगंधित तेल भी बनेंगे आर्थिकी के साधन – आदित्य कुमार — 27
प्रकृति ने हमें जो भी दिया है, काम का है; फिर चाहे वह खर–पतवार ही क्यों न हो

जैवविविधता मूल्यांकन – एक परिदृष्टि – एस. के. गुप्ता — 29
अब शुरू हो स्कूली पाठ्यक्रम से ही

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग समाचार–पत्रक, मई से अगस्त, 2010 — 31

वृक्ष विज्ञान – वीणापाणी जोशी — 39
प्राचीन भारतीय वांग्मय में उपलब्ध वनस्पति वैज्ञानिक तथ्यों पर एक विमर्श

पत्थर का जन्म प्रमाण–पत्र – अजय कुमार बियानी — 41
कैसे पता लगाते हैं कि कोई पत्थर कितना पुराना है एक जटिल वैज्ञानिक प्रक्रिया का सुबोध,
रोचक विवरण

उत्तराखण्ड के विज्ञान संस्थान–1 – बृजेश कुमार, अच्युतानन्द शुक्ला, एस.के. श्रीवास्तव 44
भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून, एक अवलोकन

कालका – शिमला मार्ग – अशोक दुबे 49
एक कुछ पुराने दस्तावेज में क्या आप आज का प्रतिबिंब देख सकते हैं?
एक हास्य व्यंगात्मक आलेख

विज्ञान के नये आयाम – दीपाली राणा 50
विद्यार्थियों के लिये नये अवसर

पर्यावरण शिक्षा शुरू हो अब स्कूली पाठ्यक्रमों से ही – रिजवान अहमद 54
विद्यार्थी जीवन में ही यदि पर्यावरण की समझ आ जाय तो भावी पीढ़ी निश्चय ही अधिक सुखी होगी

कैसे बनाएँ विज्ञान शिक्षण को लोकप्रिय एवं प्रभावी – अनंत गंगोला 55

परितन्त्र की कहानी ..... एक था हरियाला वन – दिनेश चन्द्र शर्मा 57
आधुनिक बच्चों का पंचतन्त्र

माह जून से सितम्बर तक पहल संस्था द्वारा आयोजित गतिविधियों की एक झलक 58

अपना विज्ञान ज्ञान बढ़ाइये – मीन मन्थन – राहुल राणा 64

सिकता कण हम (विज्ञान कविता) – मुकुन्द जोशी 65

मछली जो मछली नहीं है 66

विज्ञान व्यंग चित्र 67

ग्लोबल वार्मिंग (विज्ञान कविता) – दिनेश चमोला 'शैलेश' 67

विज्ञान वर्ग पहेली 68

जैवविविधता हमारे जीवन का आधार है। इसे संरक्षित, सुरक्षित करके हम संसार के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह कर सकते हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2010 को अन्तर्राष्ट्रीय जैव विविधता वर्ष घोषित किया है। हमारा दायित्व है कि हम जैव विविधता को समझते हुए दूसरों को भी इसके महत्व से अवगत कराएँ। आइए जैवविविधता के कुछ तकनीकी पहलुओं को समझने का प्रयास करें।

सम्पादक

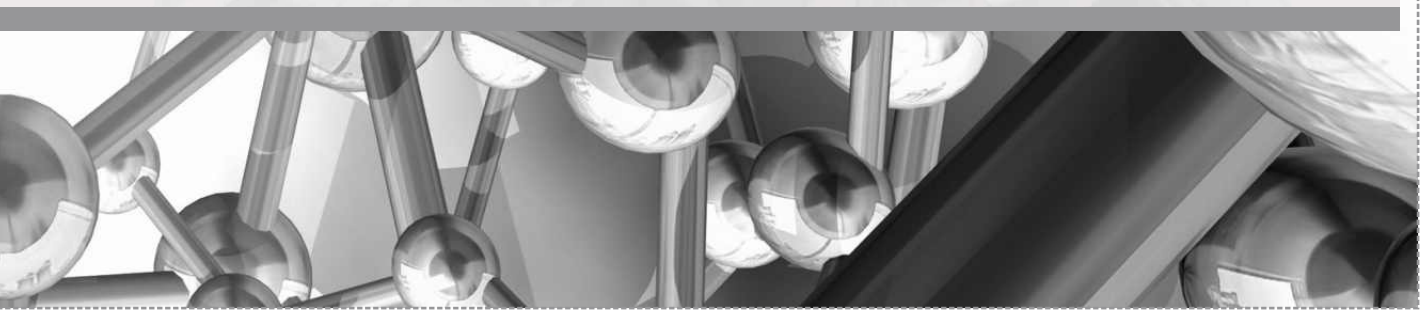

संपादकीय
प्रणामांजलि

विज्ञान परिचर्चा का प्रवेशांक आपके सम्मुख प्रस्तुत है। पत्र-पत्रिकाएँ तो प्रकाशित होती ही रहती हैं पर परिचर्चा के रूप में पत्रिकाओं की भीड़ का एक हिस्सा बनने का हमारा कोई विचार नहीं है। विज्ञान परिचर्चा के रूप में हम उत्तराखण्ड में एक ऐसा मंच स्थापन करने जा रहे हैं जिसके माध्यम से यहाँ के विज्ञान लेखकों को अपने अध्ययन के परिणामों को सर्वजन सुलभ करने का अवसर मिले, इस क्षेत्र के जनसामान्य के बीच वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास हो, पाठकों को उनकी अपनी भाषा में अधुनातन वैज्ञानिक तथ्यों तथा निष्कर्षों की जानकारी मिले, विद्यार्थियों में वैज्ञानिक अभिरुचि का विकास हो, वैज्ञानिक हिन्दी में विज्ञान लेखक बनने के लिए प्रोत्साहित हों तथा सर्वतोपरि इस राज्य की जनता सामाजिक तथा वैचारिक स्तर पर रूढ़ियों, अंधविश्वासों तथा अतार्किक परंपराओं के जंजाल से मुक्ति पाकर वैज्ञानिक सोच के साथ अभिव्यक्ति के माध्यम से इकीसवीं सदी की ओर आधुनिक ढंग से प्रगति पथ पर अग्रसर हो।

विज्ञान परिचर्चा एक विज्ञान पत्रिका तो अवश्य है परन्तु हमारा अपेक्षित पाठक वर्ग वैज्ञानिक या विज्ञान का अध्येता नहीं है। हम वैज्ञानिक सिद्धान्तों तथा जन साधारण के बीच की दूरी पाटना चाहते हैं। इसीलिये पत्रिका में आप जो भी जानकारी पायेंगे वह तकनीकी शब्दावली के जंजाल से जहाँ तक हो सके, बचा के प्रस्तुत की जा रही है। हमारा प्रयास है कि ऐसा करते समय प्रस्तुति का स्तर कहीं भी, कभी भी कम न हो। रामचरितमानस लिखते समय गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा कि –

'बुध–विश्राम सकल जन रंजनि,
राम कथा कलि कलुष विभंजनि'
(1.30.5)

विद्वानों के चित्त के लिए विश्राम और जन सामान्य के मन को आनन्द इस प्रकार दोनों के द्वारा आदर पाने योग्य रचना अत्यन्त कठिन कार्य है। परन्तु उद्देश्य हमारा भी यही है। सफलता–असफलता तो बाद की बात है। हमें विश्वास है कि हमारा यह प्रयास आपको अवश्य संतोष प्रदान करेगा क्योंकि जैसा कि महाकवि कालिदास ने कहा है – 'आपरितोषात् विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम्' अर्थात जब तक विद्वानों को सन्तोष न हो तब तक किसी भी प्रयोग को साधुवाद नहीं दिया जा सकता। विज्ञान परिचर्चा का यह अंक आप द्वारा अवश्य प्रशंसित होगा। इसमें हमारी कोई विशेषता नहीं है । हमें जिन विद्वान् लेखकों का सहकार्य प्राप्त हुआ है तथा जिनके बल पर ही हम इस धनुष को उठाने की कल्पना भी कर सके उन्हीं का यह सारा श्रेय है। हाँ, जो कमियाँ, त्रुटियाँ या प्रमाद हैं वे हमारे हैं। यदि सुधी पाठक इंगित करेंगे तो आगामी

अंको में परिमार्जन निश्चित रूप से किया जायेगा।

जब हमने हिन्दी में विज्ञान प्रत्रिका प्रकाशित करने का विचार विद्वद्वृन्द के सम्मुख रखा तो अनेक प्रश्न उठे। विज्ञान की आधुनिकतम खोजें अंग्रेजी भाषा में उपलब्ध होती हैं। इंटरनेट पर सारी सामग्री अंग्रेजी में मिलती है। आज का पढ़ा लिखा समाज अंग्रेजी बखूबी जानता है। नई पीढ़ी के अधिकांश बच्चे अंग्रेजी माध्यम से पढ़ते हैं। वे विज्ञान को अंग्रेजी में पढ़ लेंगे। आप ऐसी सारी जानकारियों का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करके किसे पढ़वाना चाहते हैं। हिन्दी में विज्ञान पत्रिका के पाठक कितने हो सकते हैं? दूसरे हिंदी में लिखी वैज्ञानिक जानकारी को अधिकांश लोग विश्वसनीय नहीं मानते। अंग्रेजी अखबारों के विज्ञान स्तम्भ हिंदी अखबारों की तुलना में अधिक स्तरीय होते हैं। तीसरे यदि आप अंग्रेजी लेखों का हिन्दीकरण कर भी लें तो आसानी से पाठकों को समझ में नहीं आयेगा। चौथे आपको हिन्दी विज्ञान लेखक मिलेंगे भी कितने? एक नहीं, दो नहीं, अनेक प्रश्नों के दुर्लंध्य पर्वत खड़े कर दिये गये हमारे सामने। परन्तु हमें इनमें से हर प्रश्न का उत्तर पता था। हमने सारे जाने माने बैज्ञानिकों, विद्यार्थियों, पत्रकारों तथा बुद्धिजीवियों से चर्चा की; लेखन सहायता मांगी और हमें जो सहयोग मिला, मिल रहा है, उसने हमारे संकल्प को दृढ़ता प्रदान की। सबसे बड़ी बात हुई कि हमें प्राप्त लगभग सारा साहित्य मौलिक लेखन था; इंटरनेट या कहीं इधर उधर से उठाया हुआ नहीं। सभी लेखकगण भी स्वयं स्थापित वैज्ञानिक तथा अनुसन्धानकर्ता हैं अतः उनके लिखे की अधिकृतता भी निश्चित है। हाँ, कुछ लेखकों ने हिन्दी में लिखने में अपनी असमर्थता या कठिनाई अवश्य व्यक्त की तो हमने उनसे अनुरोध किया कि वे अंग्रेजी में ही लिखें, हिन्दी रूपान्तरण हम कर लेंगे। हमने जब भी ऐसा किया तो वह हिंदी रूपान्तरण भी लेखक को दिखा कर उनसे स्वीकृत करा लिया जिससे लेखक का मूल भाव ज्यों का त्यों व्यक्त हो सके। तकनीकी वैज्ञानिक शब्द हमने विज्ञान तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा स्थापित मानक शब्द ही लिये हैं। हाँ, कहीं सरलता अथवा प्रवाह को दृष्टिगत रखते हुए आवश्यकतानुसार अंग्रेजी शब्द ही रहने दिये हैं।

हिन्दी में विज्ञान प्रत्रिका का प्रकाशन कर हम कोई नया कार्य नहीं कर रहे हैं यह हम जानते हैं। अनेक पत्रिकाएँ इस क्षेत्र में हमारी अग्रजा या पथ प्रदर्शिकाएँ हैं। सन् साठ के दशक में विद्यार्थियों के लिए 'विज्ञान लोक' नाम से एक अत्यन्त सुन्दर पत्रिका आगरा से प्रकाशित होती थी। भारत सरकार की 'विज्ञान प्रगति' तथा 'आविष्कार' स्तरीय पत्रिकाएँ हैं। इलाहाबाद से निकलने वाली 'विज्ञान', वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग की 'विज्ञान गरिमा सिन्धु', जयपुर से प्रकाशित पत्रिका 'विज्ञान चेतना', विश्व हिन्दी न्यास, न्यू यॉर्क से प्रकाशित पत्रिका 'विज्ञान प्रकाश' जैसी अनेक पत्रिकाओं के अतिरिक्त विभिन्न वैज्ञानिक संस्थान भी अपनी अपनी हिन्दी विज्ञान पत्रिकाएँ प्रकाशित कर रहे हैं। अभी कुछ समय पहले तक उत्तराखण्ड से भी 'विज्ञान विलोकी' का प्रकाशन होता था जो अब बन्द हो गया है। जयपुर से तो एक विज्ञान समाचार पत्र 'वैज्ञानिक दृष्टिकोण' भी निकलता है। किन्तु नवसृजित उत्तराखण्ड राज्य में पत्र पत्रिकाओं की भारी भीड़ के बीच भी एक स्तरीय वैज्ञानिक पत्रिका का अभाव यहाँ की वैज्ञानिक गतिविधियों पर प्रश्नचिन्ह लगा रहा था। हमने विज्ञान परिचर्चा के माध्यम से बस इसी शून्यता को भरने का प्रयास किया है। इस प्रयास को लक्ष्य तक ले जाने में आप सभी के सहयोग की कामना है।

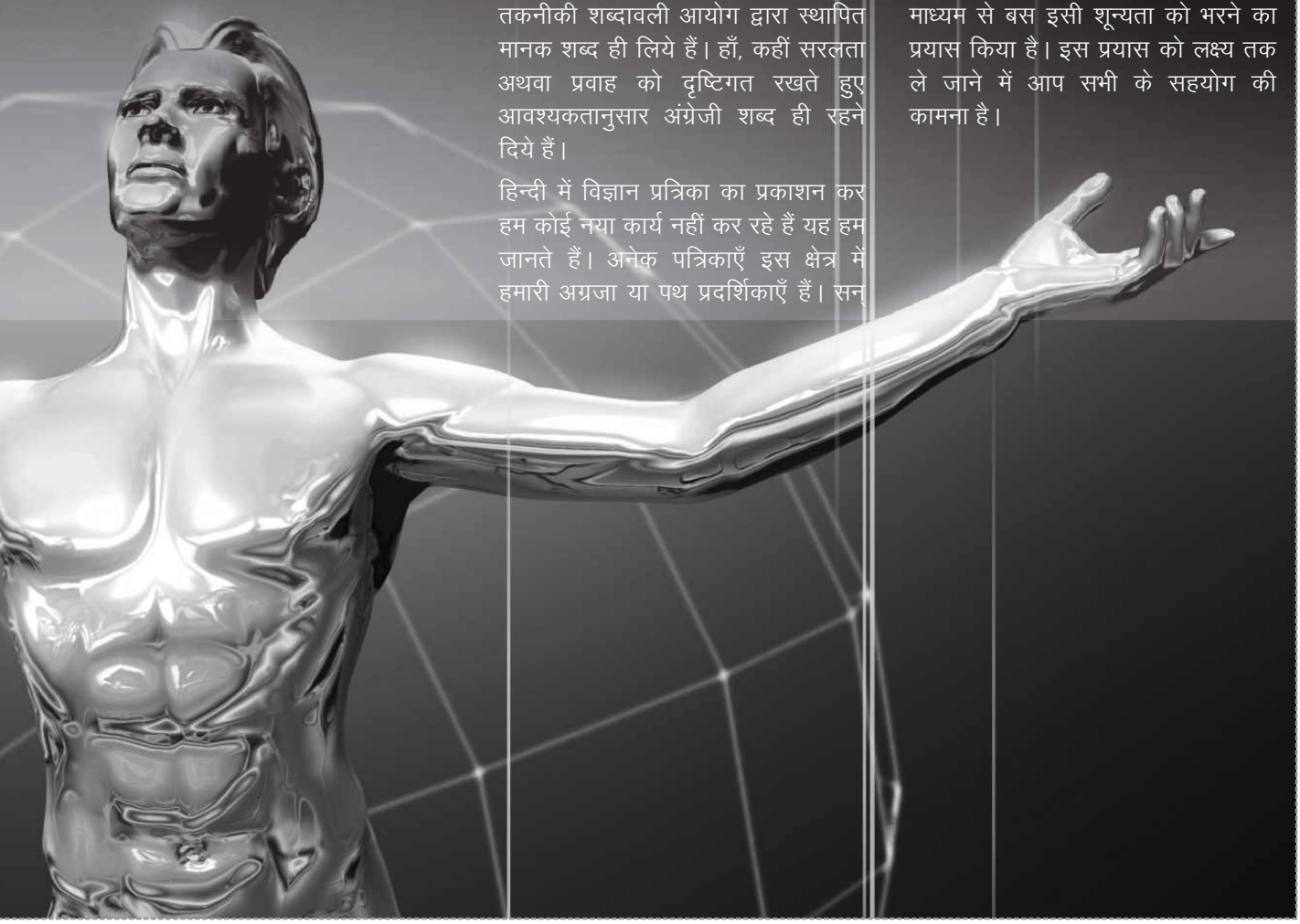

भारतीय विज्ञान लेखक संघ उत्तराखण्ड प्रभाग

एक परिचय

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी
पूर्व सचिव

भारतीय विज्ञान लेखक संघ वैज्ञानिकों, अध्यापकों, विज्ञान अधिकारियों, पत्रकारों तथा विज्ञान प्रेमियों की एक अशासकीय, सामाजिक, अखिल भारतीय संस्था है जो समाज में विज्ञान तथा वैज्ञानिक विचारधारा के प्रचार–प्रसार के लिये कार्यरत है। इसकी स्थापना 14 अप्रैल, 1985 को तत्कालीन विज्ञान राज्य मंत्री श्री शिवराज पाटिल द्वारा उद्घाटन के साथ हुई। इसके मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं।

1. **विज्ञान पत्रकारों को संगठित करना**
2. **जनसामान्य तक विज्ञान पहुंचाना**
3. **वैज्ञानिकों के साथ संवाद स्थापित करना**
4. **समान उद्देश्य वाली अन्य संस्थाओं के साथ सहयोग करना**
5. **युवा विज्ञान लेखकों तथा पत्रकारों के लिये संगोष्ठियाँ आयोजित करना**
6. **वैज्ञानिक समाचार उपलब्ध कराना**

देश के अनेक महान् वैज्ञानिक जैसे ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, प्रो. यशपाल, जयंत विष्णु नारलीकर, एम.जी.के. मेनन आदि संघ से जुड़े। धीरे–धीरे संघ का काम बढ़ा। अनेक राज्यों में इसके प्रभाग प्रारम्भ हुए। प्रो. धीरेन्द्र शर्मा विज्ञान लेखक संघ के संस्थापक सदस्य थे तथा दो बार इसके राष्ट्रीय अध्यक्ष थे। उत्तराखण्ड में आने पर सन् 2002 में उन्होंने इसका उत्तराखण्ड प्रभाग स्थापित किया। उन्हीं के प्रयासों के फलस्वरूप यहाँ भी यह संस्था काफी फली फूली और आज अत्यंत सक्रिय रूप से विज्ञान जागृति का कार्य कर रही है। इस उत्तराखण्ड प्रभाग के साथ अनेक उत्साही पत्रकार, विज्ञान लेखक, प्राध्यापक तथा वैज्ञानिक जुड़े। देहरादून के युवा पत्रकार विनोद मुसान इसके पहले सचिव बने तथा उन्होंने उत्साहपूर्वक इसके कार्य को गति दी। लेखक संघ के प्रयास से ही दैनिक जागरण ने साप्ताहिक रूप से एक विज्ञान पृष्ठ 'खोज' प्रकाशित करना प्रारम्भ किया। 30–31 अक्टूबर सन् 2004 को हमने साइंस लिटरेसी ऍण्ड रोल ऑफ मीडिया इन साइंस कम्यूनिकेशन ऍण्ड डेवलपमेंट विषय पर एक द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया। इस गोष्ठी को तत्कालीन राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने वीडियो कांफरेंसिंग द्वारा संबोधित किया। उत्तराखण्ड के राज्यपाल श्री सुदर्शन अग्रवाल ने गोष्ठी का शुभारम्भ किया। भारतीय विज्ञान लेखक संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. मनोज पटेरिया, राजस्थान से प्रकाशित विज्ञान समाचार पत्र वैज्ञानिक दृष्टिकोण के सम्पादक श्री तरुण जैन, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर के प्राध्यापक दुर्गापद कुइति, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल की भौतिक विज्ञान विभागाध्यक्ष प्रो. कविता पाण्डेय आदि अनेक गण्यमान्य विज्ञान लेखकों ने संगोष्ठी को संबोधित किया। इस अवसर पर 'स्वस्ति' नामक एक पत्रिका के प्रथम अंक का प्रकाशन भी किया गया।

20 मार्च 2005 को महान् वैज्ञानिक अल्बर्ट आइन्स्टाइन के सापेक्षता सिद्धान्त की शताब्दी के अवसर पर 'आइन्स्टाइन ऍण्ड पीस फॉर टुडे ऍण्ड टुमारो' विषय पर एक गोष्ठी का आयोजन किया गया। एसोसिएशन ऑफ ब्रिटिश स्कॉलर्स ने इस आयोजन में सहयोग प्रदान किया। राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्य डॉ.डी.पी. जुयाल, प्रो. कविता पाण्डेय, उत्तराखण्ड की प्रमुख सचिव विभा पुरी दास, डी.बी.एस. महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ.आर.के.पाण्डेय आदि वक्ताओ ने गोष्ठी को संबोधित किया। डील के वैज्ञानिक अभय मिश्रा ने आइंस्टाइन से संबंधित डाक टिकटों का प्रदर्शन किया। कार्यक्रम का संयोजन डी.बी.एस. महाविद्यालय के भूविज्ञान विभागाध्यक्ष डॉ. एम.एस. अनन्तरामन् ने किया। इस अवसर पर स्वस्ति के द्वितीय अंक का प्रकाशन किया गया।

प्रभाग का तीसरा प्रमुख कार्यक्रम था दिनांक 11 दिसंबर 2005 को साइंटिफिक संगोष्ठी जिसका विषय था 'चैलेंजेस फॉर डेवलपमेंट ऑफ साइंटिफिक कल्चर एण्ड रोल ऑफ साइंस कम्यूनिकेशन'। इसमें प्रो. धीरेन्द्र शर्मा, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के निदेशक सर्वेश कुमार, उत्तरांचल शासन के वैज्ञानिक सलाहकार डॉ. नेगी, भारत सरकार के मौसम विभाग के निदेशक आनन्द शर्मा, डी. ए.वी. कॉलेज में प्राध्यापक तथा पत्रकार डॉ. देवेन्द्र भसीन तथा आयुर्वेद चिकित्सक एवं विज्ञान लेखक डॉ. आदित्य कुमार ने चर्चा में भाग लिया। इस अवसर पर स्वस्ति का तृतीय अंक प्रकाशित किया गया।

विज्ञान लेखक संघ ने साइंटिफिक अमेरिकन नामक पत्रिका के अंक अधिक से अधिक प्रचारित प्रसारित हों इसके लिये पचास प्रतिशत मूल्य स्वयं वहन करते हुए पचास व्यक्तियों को इसका वार्षिक ग्राहक बना दिया। इसी प्रकार वैज्ञानिक दृष्टिकोण समाचार पत्र के एक सौ अंकों का वार्षिक मूल्य देकर यह पत्र विद्यार्थियों और जनता के बीच निःशुल्क वितरित किया। हिन्दी में एक विज्ञान कोष रचना की कल्पना की गई। अंग्रेजी विज्ञान कोषों में दी गई जानकारी विद्यार्थियों से हिन्दी में अनुवादित कराई गई तथा प्रत्येक विद्यार्थी को प्रति शब्द मानधन भी दिया गया। संगोष्ठियों के अतिरिक्त अनेक व्याख्यान भी समय समय पर आयोजित होते रहे जिनमें श्री आनन्द शर्मा, प्रो. धीरेन्द्र शर्मा, उत्तराखण्ड शासन में सचिव श्री संजीव चोपड़ा, डॉ एम.एन.जोशी के व्याख्यान प्रमुख रहे।

सूचना का अधिकार भारत के नागरिकों को शासन द्वारा दिया गया एक ऐसा अधिकार है जिसके कारण सभी सार्वजनिक क्षेत्रों में पारदर्शिता लाई जा सकती है। कुछ विशेष प्रकार की सूचनाओं को छोड़ कर अन्य सभी प्रकार के निर्णय, निर्णय होने के पूर्व की टिप्पणियाँ तथा अन्य सभी दस्तावेज जो मांगे उसे दिखाने के लिये प्रत्येक संस्थान बाध्य है। परन्तु इसी के साथ बौद्धिक संपदा के अधिकार का कानून भी है जिसके अनुसार यदि कोई नया आविष्कार होता है या नया शोध किया जाता है तो उसे अनुसन्धान कर्ता व्यक्ति या संस्थान अपनी सम्पदा कह कर सार्वजनिक करने से इंकार भी कर सकता है। विज्ञान के क्षेत्र में इन दो कानूनों का आपसी सहसम्बन्ध कैसा है इस विषय पर विचार करना हमने उचित समझा। इसलिये दिनांक 28 फरवरी 2007 को उत्तराखण्ड राज्य सूचना आयोग के सहयोग से एक एक दिवसीय गोष्ठी का आयोजन किया गया। चर्चा में उत्तराखण्ड के मुख्य सूचना आयुक्त डॉ. आर. एस. तोलिया, उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी परिषद के निदेशक डॉ राजेन्द्र डोभाल, डिपार्टमेंट ऑफ साइंस ऍण्ड टेक्नोलॉजी नई दिल्ली के सलाहकार डॉ. लक्ष्मण प्रसाद, बौद्धिक संपदा अधिकार की विशेषज्ञ विधि वेत्ता दिल्ली की मनीषा हांडा, गढ़वाल विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो ए.एन. पुरोहित, वैज्ञानिक डॉ. आर.एन.सिंह, काशी हिंदू विश्वविद्यालय के भूविज्ञान के पूर्व विभागाध्यक्ष प्रो. वी.के. गैरोला आदि अनेक विद्वानों ने भाग लिया। चर्चा का निष्कर्ष था कि ये दोनों नियम एक दूसरे के विरोधी नहीं हैं। यदि शासन से धन मिला है तो अनुसन्धान का निष्कर्ष सार्वजनिक करना ही होगा परन्तु यदि उस पर पेटेंट लिया गया है तो बौद्धिक संपदा अधिकार के नियम भी लागू होंगे।

सन् 2009 महान् वैज्ञानिक सर चार्ल्स डार्विन का दो सौवां जन्म वर्ष तथा उनके द्वारा प्रतिपादित जीव विकास के सिद्धान्त का 150 वां वर्ष था। इसलिये डार्विन की स्मृति में एक–एक दिवसीय गोष्ठी का आयोजन दिनांक 8 फरवरी, 2009 को किया गया। गोष्ठी की अध्यक्षता उत्तराखण्ड तकनीकी विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. दुर्ग सिंह चौहान ने की।

दिनांक 5 अप्रैल, 2009 को संघ ने एक अन्य गोष्ठी का आयोजन किया जिसका विषय था 'भारत में वैज्ञानिक शोध यात्राएँ'। गोष्ठी की अध्यक्षता दून विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. गिरिजेश पंत ने की। गोष्ठी में प्रसिद्ध विज्ञान पत्रकार दिनेश चन्द्र शर्मा ने 'उत्तरी ध्रुव क्षेत्र की यात्रा; डिफेन्स इलेक्ट्रोनिक्स ऍप्लिकेशन्स लेबोरेटरी, देहरादून के वैज्ञानिक अभय मिश्रा तथा सर्वे ऑफ इंडिया के सुभाष कुमार ने अंटार्कटिका की यात्रा; इंडियन पब्लिक स्कूल, सेलाकुई के प्राचार्य सुदेश बियाला ने हिमनद यात्रा; उत्तराखण्ड के मुख्य वन संरक्षक जयराज ने नन्दादेवी बायोस्फीयर; प्रसिद्ध वैज्ञानिक लेखक शेखर पाठक ने पंडित नैनसिंह रावत की शोध यात्राओं तथा वाडिया इंस्टीट्यूट के वैज्ञानिक डॉ. के.पी. जुयाल ने कराकोरम यात्रा के विवरण प्रस्तुत किये।

दिनांक 14 फरवरी 2010 को 'विज्ञान, प्रौद्योगिकी तथा शिक्षा विकास नीतिः उत्तराखण्ड 2020' विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन एसोसिएशन ऑफ ब्रिटिश स्कॉलर्स के सहयोग से किया गया। गोष्ठी में सेंटर फॉर ऍरोमैटिक प्लांट्स के वैज्ञानिक डॉ. नृपेन्द्र सिंह चौहान, मुख्य वन संरक्षक डां. राकेश शाह, मुख्य सूचना आयुक्त डॉ. आर.एस. तोलिया तथा संघ के संरक्षक प्रो. धीरेन्द्र शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किये।

दिनांक 23 मई, 2010 को 'वैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास में साहित्यकारों तथा पत्रकारों का योगदान' विषय पर एक संगोष्ठी सम्पन्न हुई। इसमें साहित्यकार श्री लीलाधर जगूड़ी, डॉ. राम विनय सिंह, श्री ओम प्रकाश खरबन्दा, श्रीमती वीणापाणी जोशी, वैज्ञानिक डॉ. आर.जे. आजमी, पत्रकार श्री अरविंद शेखर ने अपने विचार व्यक्त किये। चर्चा में प्रो. धीरेन्द्र शर्मा, प्रो. एन.एन. पण्डिता, डॉ. पुरूषोत्तम उपाध्याय, श्री वी.के.झा, डॉ. एस.के.गुप्ता, डॉ.एस.एफ. हसन, डॉ.एम.एन.जोशी आदि ने भाग लिया।

विज्ञान के विविध विषयों को जनसामान्य तक पहुंचाने के उद्देश्य से लेखक संघ ने उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् के सहयोग से लोकप्रिय विज्ञान व्याख्यान माला के रूप में एक और उपक्रम प्रारम्भ किया। इस के अतंर्गत अबतक निम्नलिखित व्याख्यान आयोजित किये गये है।

1. 7 मई 2009
   प्रो. आशा सकलानी
   बायोटेक्नोलोजी
2. 12 जून 2009
   डॉ. दुर्गापद कुइति
   माणिक का विश्व
3. 28 जुलाई 2009
   डॉ. पी.के. हाजरा
   भारत में वानस्पतिक विविधता परिरक्षण
4. 9 अगस्त 2009
   प्रो. गिरिजेश पंत
   मध्य पूर्व में नाभिकीय संघर्ष
5. 16 अगस्त 2009
   प्रो. एच.सी. नैनवाल
   हिमनद तथा वैश्विक तापमान वृद्धि
6. 3 दिसम्बर 2009
   डॉ. एम.एम. किमोठी
   सुदूर संवेदन तकनीक जनहित में
7. 12 दिसम्बर 2009
   डॉ. डी.पी. डोभाल
   हिमालयीय हिमनद एवं समाज
8. 17 अप्रैल 2010 –
   श्री एन.के. अग्रवाल
   नदी घाटी परियोजनाए

वैज्ञानिक दृष्टिकोण

विद्यार्थियों में विज्ञान विषयों में जागृति बढ़ाने तथा उन्हें लोकप्रिय विज्ञान लेखन के लिये प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से एक निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। प्रतियोगिता के लिये तीन विषय दिये गये थे। वे थे

1. क्लोनिंग–विज्ञान, नैतिकता एवं संभावित भय,

2. खगोल शास्त्र की मानव के लिये उपयोगिता

3. वैज्ञानिक पत्रकारिता की समस्याएँ। इन विषयों पर प्राप्त 19 निबंधों में रश्मि गैरोला, विद्याभूषण त्रिवेदी, प्रशान्त नैलवाल, स्वाती नागर तथा हेमलता नौटियाल के निबन्ध पुरस्कृत हुए। देहरादून के एक विद्यार्थी कपिल कालरा ने दस अरब वर्षों का एक कैलेण्डर डिजाइन किया इसलिये लेखक संघ द्वारा उसका अभिनन्दन किया गया। मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी के लोकप्रिय भूविज्ञान निबन्ध संग्रह 'समय की शिला पर' के लिये उन्हें रू. 5000 का पुरस्कार प्रदान किया गया। संघ अपने संगोष्ठियों में स्थापित विद्वानों के साथ विद्यार्थियों तथा नवोदित विज्ञान लेखकों को सहभागिता करने के लिये प्रोत्साहित करता रहता है। चार्ल्स डार्विन की स्मृति में सम्पन्न कार्यक्रम में बीएस सी तथा एमएस सी के छात्र अनुराग सिंह, रमन पठानिया, राहुल राणा तथा अंबिका रतूड़ी के व्याख्यान हुए। अन्य गोष्ठियों में भी विद्यार्थियों का चर्चाओं में सक्रिय सहभाग सुनिश्चित किया जाता है।

राज्य के दूर दराज के ग्रामीण तथा दुर्गम क्षेत्रों में भी विज्ञान तथा वैज्ञानिकता का सन्देश प्रसाहित हो इस उद्देश्य से कठपुतली जैसे लोकप्रिय कला माध्यम का प्रयोग करने में उन कलाकारों का भी हम सहयोग कर रहे हैं। हमने ऐसे कलाकारों को अनेक वैज्ञानिक आलेख दिये हैं जिनका वे उपयोग कर रहे है।

संघ के संरक्षक प्रो. धीरेन्द्र शर्मा अणु शक्ति के दुष्परिणामों के सम्बन्ध में जन जागृति करने तथा उसके विरोध में एक जन आन्दोलन खड़ा करने का प्रयास कर रहे हैं। इसके लिये लेखक संघ प्रेस वार्ताओं के जरिये सन्देश के प्रचार प्रसार का कार्य कर रहा है।

भारतीय विज्ञान लेखक संघ, मुख्य संस्था द्वारा आयोजित संगोष्ठियों में दिल्ली, वाराणसी, खजुराहो तथा देहरादून में उत्तराखण्ड प्रभाग के प्रतिनिधि सक्रिय रूप से सम्मिलित हुए। देहरादून की संगोष्ठी में तो हमारे विद्यार्थियों ने स्वयंसेवक के रूप में भी पूर्ण योगदान दिया।

इस प्रकार भारतीय विज्ञान लेखक संघ का उत्तराखण्ड प्रभाग विविध उपक्रमों के माध्यम से समाज में वैज्ञानिकता के उन्नयन के लिये प्रयत्नशील है। विज्ञान परिचर्चा के रूप में हमारा यह प्रयास इसी कार्यक्रम की एक कड़ी है। हम आशा करते हैं कि राज्य के प्रबुद्ध समाज के अधिक से अधिक सदस्य हमारे साथ जुड़ कर जनजागरण की इस छोटी सी लौ को एक तेजस्वी प्रकाश पुंज के रूप में विकसित करने में सहयोग करेंगे।

वर्तमान कार्यकारिणी समिति (2010–2012)

संरक्षक :	प्रो. धीरेन्द्र शर्मा
अध्यक्ष :	डॉ. देवेन्द्र भसीन
उपाध्यक्ष :	डॉ. आदित्य कुमार डॉ. मुकन्द्र नीलकण्ठ जोशी
सचिव :	डॉ. शशिकान्त गुप्त
सहसविच :	डॉ. सैयद फरीद उल हसन श्री विनोद मुसान
कोषाध्यक्ष :	डॉ. सन्तोष कुमार अग्रवाल
सदस्य :	डॉ. अजय कुमार बियानी श्री राजेन्द्र पाल श्री आनन्द शर्मा श्री कैलाश कोठारी डॉ शिवपाल सिंह श्री अभय मिश्रा श्री रिजवान अहमद

2002 में की गई थी उत्तराखंड संभाग (चैप्टर) की परिकल्पना

उत्तराखंड में भारतीय विज्ञान लेखक संघ उत्तरांचल चैप्टर का शुभारंभ प्रो. धीरेंद्र शर्मा जी के प्रयासों से ही संभव हो पाया। वर्ष 2002 में दैनिक हिंदी अखबार दैनिक जागरण और प्रो. शर्मा के प्रयासों से सप्ताह में एक दिन हिंदी विज्ञान पृष्ठ की परिकल्पना की गई जिस पर मैंने नियुक्ति के बाद होमवर्क शुरु कर दिया था। इसी दौरान मेरी मुलाकात प्रो. शर्मा से हुई थी। इसके बाद प्रो. शर्मा ने मुझे और वरिष्ठ पत्रकार श्री दिनेश चंद्र जी को दिल्ली स्थित रमन सभागार में आयोजित हुए भारतीय विज्ञान लेखक संघ के राष्ट्रीय सेमिनार में उत्तराखंड के प्रतिनिध के रुप में शमिल होने का अवसर प्रदान किया।

वहां से लौटने के बाद ही उत्तराखंड चैप्टर की परिकल्पना पर काम शुरू किया गया। इस मुहिम में सामाजिक कार्यकर्ता सुश्री अंजुला त्यागी भी जुड़ गई। कई महीनों तक बैठकों का दौर चला। यह बैठक उत्तरांचल प्रेस क्लब, प्रो. शर्मा के निवास स्थान या राजधानी के किसी होटल में होती। हम लोग घंटो बैठकर संगठन को आगे बढ़ाने की दिशा में विचार–विमर्श करते। इसके बाद तय हुआ कि संगठन में विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्र से जुड़े विभिन्न वैज्ञानिक संस्थानों से पत्राचार कर संपर्क साधा। प्रयास रंग लाया और विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े लोग हमारे साथ जुड़ते चले गए। इसके बाद 6 अक्टूबर, 2003 को उत्तराखंड चैप्टर की पहली कार्यकारिणी का गठन किया गया। इसमें प्रो. धीरेंद्र शर्मा को संरक्षक, डा. आरएके श्रीवास्तव अध्यक्ष, श्री दिनेश चंद्र उपाध्यक्ष, श्री विनोद मुसान सचिव, श्री कैलाश कोठारी, सहसचिव, सुश्री अंजुला त्यागी कोषाध्यक्ष मनोनीत किये गये। डा. आरके पांडे, डा. एसपी सिंह, डा. एके बियानी, डा. एसआर वर्मा, डा. आदित्य कुमार और सुश्री सीमा श्रीवास्तव को कार्यकारिणी सदस्य मनोनीत किया गया।

संगठन को मजबूत स्थित में लाने में शुरू से ही डीबीएस पीजी कालेज, देहरादून और भारतीय विज्ञान लेखक संघ के तत्कालीन राष्ट्रीय सचिव श्री मनोज पटेरिया जी का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ। इसके बाद संगठन ने समय–समय पर विज्ञान से जुड़े मुद्दों को कई मंचों के माध्यम से पटल पर रखा जिन्हें आम जनता तक पहुंचाने में मीडिया की महती भूमिका रही। आज संगठन एक मजबूत स्थिति में खड़ा है। यह संगठन से जुड़े सदस्यों की मेहनत का ही फल है। आगे भी हम इस दिशा में काम करते हुए समाज में जागरूकता लाने का काम करते रहेंगे, ऐसी मेरी आशा है।

विनोद के. मुसान, पूर्व सचिव

पहल
एक परिचय

पर्वतीय क्षेत्र की कल्पना से जो परिदृश्य उपस्थित होता है उसमें प्रतिबिम्बित होते हैं–हिमाच्छादित उत्तुंग शिखर, अविराम पिघलती हिमानियाँ, इठलाती–बल खाती नदियां और झर–झर बहते झरने, घने वन, हरी–भरी वादियां, सीढ़ीदार खेतों का सिलसिला और सर्पीली पगडंडियाँ, फूलों की महक, चिड़ियों की चहक और गीतों की खनक, सुनहली भोर और रुपहली सांझ, तारों भरा नीला आकाश और सतरंगी इन्द्रधनुष; कुल मिलाकर सब एक स्वप्न लोक की सी सृष्टि करते हैं और यह स्वप्नलोक सदा से ही आकर्षित करता रहा है – जिज्ञासुओं को, यायावरों को, पर्यटकों को, आस्थावानों को और वैज्ञानिकों को भी। इन सबने इस पर्वतीय क्षेत्र को क्या दिया और इससे क्या–क्या छीन लिया, इसी का लेखा–झोखा है पहल।

पहल एक दृष्टि है

उन लोगों की जो पर्वतीय क्षेत्र को खुली आंखों देख रहे हैं। जो देख रहे हैं इसका हलाक होता सीना और तार–तार होता दामन। जिन्हें दिखाई पड़ता है इसका प्राकृतिक परिवर्तन और पारिस्थितिकीय असंतुलन। जो देख पाते है पौलीथीन के प्रसार पाते कैंसर और पेट्रोलियम के हवा में घुलते हलाहल को। मानवीय मूल्यों की अवमानना और अपसंस्कृति का घुन जिनकी पैनी नजर की पकड़ में है। विकास के नाम पर विनाश और अन्त्योदय के छलावे में अन्त्येष्टि का उपक्रम जिनकी पारदर्शी निगाहों से छुपा नहीं है। पीने के पानी के लिए मीलों कवायद करती फटी एड़ियाँ, दूध की बूँद–बूँद को तरसता बचपन और नशे में आकण्ठ डूबी जवानी जिनकी आंखों को पीड़ा से भर देती है, अपनी धरती के नौनिहालों को दो जून की रोटी के लिये जननी और जन्मभूमि दोनों की ओर पीठ फेरते देखकर भी जो अपनी आंखें नहीं फेर पाते; पहल उन्हीं की सजल, सजग और संवेदनशील दृष्टि है और इस दृष्टि में है एक सलोना सपना, जीवन्त आशा, दृढ़ विश्वास और अजेय संकल्प।

PEOPLE'S ASSOCIATION OF HILL-AREA LAUNCHERS

पहल

Cultural | Environmental | Socio Economic | Educational | Scientific

हम लोगो में वैज्ञानिक अभिरुचि का विकास कर उनकी वैज्ञानिक सोच के माध्यम से पर्वतीय क्षेत्र का दीर्घजीवी विकास करने में विश्वास करते हैं।

पहल एक आवाज है

आवाज जो सन्नाटा तोड़ती है, संवाद जोड़ती है, कानों में रस घोलती है और गूंगे भावों को भाषा देती है। भूकम्प की दहला देने वाली गड़गड़ाहट और डायनामाइट के गगनभेदी धमाके भी जिनकी कुंभकर्णी निद्रा को नहीं तोड़ पा रहे, उन्हीं को जगाने के लिये पूरी शक्ति, आस्था और निष्ठा से लगाई गई आवाज है–पहल। पहल अनुगूंज है पर्वतीय जन–जीवन की, लोक संस्कृति और लोक–मंगल की।

पहल एक विचार है

विचार जो सबसे अधिक संक्रामक और सर्वाधिक शक्तिशाली होता है। पहल एक विचार है उनके लिये जो पर्वतीय क्षेत्र का हित–चिन्तन करते हैं, जिनके भीतर इस क्षेत्र के हालात बदलने का जज्बा और कुछ कर गुजरने का हौसला है। विचार–क्रान्ति का बहुत छोटा सा प्रयास है–पहल; जो करनी के बाद कथनी में विश्वास करता है।

पहल एक सन्देश है

उनके लिये जो पर्वतीय क्षेत्र का कुशल–क्षेम जानने को उत्सुक हैं। जिन्हें अपने भावों, विचारों, शोध–कार्यों, व अनुसंधानों की प्रस्तुति के लिए मंच की तलाश है। **पहल सहयोगी है** उन सबका जो पर्वतीय क्षेत्र के नवोन्मेष के लिये प्रतिबद्ध हैं। **पहल अनुगामी है** उन सबका जो नव–निर्माण के अग्रगामी हैं। **पहल एक सोपान है** –सृजन–श्रृंखला में अनन्त कड़ियाँ जोड़ने का; पुरातन और वैज्ञानिक उस सेतु के निर्माण का।

1994 में सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन एक्ट 21, 1860 के अधीन पंजीकृत संस्था पीपुल्स एसोसियेशन आफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) उन पर्वतीय लोगों का एक गैरसरकारी समाज वैज्ञानिक संगठन है जो नवाचारी प्रक्रिया, विशेष कर वैज्ञानिक अभिरुचि का विकास कर पर्वतीय क्षेत्र के दीर्धजीवी विकास की परिकल्पना करते हैं। यह संस्था विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और वैज्ञानिक

संवेदनशील मुद्दों पर लोगों की बेहतरी के लिए क्रियाशील कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के लिए स्थापित की गई है जो समाज का इस दिशा में सशक्त अभिमुखीकरण कर सकें। विभिन्न सरकारी और गैरसरकारी क्षेत्रो में कार्यरत बुद्धिजीवी, शिक्षक, वैज्ञानिक, सामाजिक कार्यकर्ता, चिंतक तथा विचारक इसके संस्थापक सदस्य और सलाहकार हैं। संस्था का विश्वास है कि विज्ञान केन्द्रित क्रियाकलाप इस राज्य तथा राष्ट्र के विकास में क्रांतिकारी परिवर्तन ला सकते हैं। 'आइये वैज्ञानिक सोच पैदा करें' यह संस्था का ध्येय वाक्य है।

उत्तराखण्ड की यह संस्था एन.सी.एस.टी.सी. नेटवर्क की स्थायी सदस्य तथा राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग भारत सरकार के स्कूली बच्चों पर आधारित सबसे बड़े राष्ट्रीय कार्यक्रम, राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस की राज्य समन्वयक और उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद की विज्ञान संचार तथा विज्ञान लोकप्रियकरण कार्यक्रमों की नोडल एजेन्सी भी है। संस्था उत्तराखण्ड में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित विभिन्न संस्थाओं के नेटवर्क अंडरस्टैंडिंग की संयोजक है।

संस्था के उद्देश्य हैं :-

1 समाज के सभी क्षेत्रो में छिपी प्रतिभाओं को एक मान्यता प्राप्त एवं स्वीकार्य मंच प्रदान करना।

2 बच्चों, शिक्षकों, गैर सरकारी संगठनों और ग्रामीणों में विज्ञान लोकप्रियकरण तथा जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से वैज्ञानिक अभिरुचि का विकास करना।

3 विभिन्न सरकारी और गैरसरकारी संस्थानों के साथ नियोजन सहयोग और समन्वय करना।

4 पर्वतीय क्षेत्र की ग्रामीण बस्तियों में पानी, स्वास्थ्य, स्वच्छता, पर्यावरण आदि के प्रति जागरूकता के लिए कार्य करना।

5 लोगो को सामाजिक स्वास्थ्य व स्वच्छता की शिक्षा प्रदान करना।

6 जनजागरूकता के लिए संगोष्ठियां एवं कार्यशालायें आयोजित करना तथा क्रियात्मक शोध व सर्वेक्षण करना।

7 पर्वतीय लोगो के लिए साक्षरता, शिक्षा तथा रोजगारपरक कार्यक्रमों का क्रियान्वयन।

8 पर्वतीय क्षेत्रों के लोगो में विवेकपूर्ण दृष्टिकोण के विकास के लिये वैज्ञानिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक कार्यक्रमों का आयोजन।

9 युवाओं के लिये आयपरक, कैरियर विकास तथा वैयक्तिक विकास के क्रियाकलापों का आयोजन।

10 उत्तराखण्ड की सांस्कृतिक विरासत को वैश्विक विस्तार देना।

11 प्रशिक्षण एवं भ्रमण कार्यक्रमों के माध्यम से महिलाओं के सशक्तिकरण के सघन प्रयास।

क्रियाकलाप

पहल पर्वतीय लोगों लक्ष्य समूहों के उत्थान और विकास के लिये कुछ विशेष कार्यक्रम करती है। इस श्रृंखला में कुछ क्रियाकलाप किये जा चुके हैं और कुछ गतिमान हैं। अब तक किये गये मुख्य कार्य निम्नवत हैं :–

1 'ईच वन प्लांट वन' ''हर एक पौधा रोपे एक''।

2 आयोडीन जागरूकता अभियान–एसआइएपी

3 पर्वतीय कृषि में तीन एफ (फूड फौडर फ्रुट) अभियान।

4 कैंसर संचेतना अभियान–(किंग जॉर्ज मेडिकल कालेज, लखनऊ)

5 1996 से राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस का संयोजन; सम्प्रति उत्तरांखण्ड राज्य बाल विज्ञान कांग्रेस की समन्वयक।

6 बाल अधिकार कांग्रेस की राज्य समन्वयक (यूनिसेफ, लखनऊ)।

7 ग्रामीण क्षेत्रों में विज्ञान लोकप्रियकरण एवं जागरूकता कार्यक्रम।

8 पर्वतीय क्षेत्रों में अनौपचारिक शिक्षा पर शोध कार्य ।

9 राष्ट्रीय विज्ञान दिवस का वृहत्तर आयोजन (प्रतिवर्ष)।

10 पर्वतीय क्षेत्र में गैरसरकारी संगठनो के लिये विज्ञान संवेदीकरण कार्यक्रम।

11 शुक्र परागमन कार्यक्रम।

12 पर्वतीय क्षेत्र में प्रतिभाशाली विद्यार्थियों के लिये सम्पर्क कार्यक्रम।

13 विधार्थियों में वैज्ञानिक जागरूकता के लिये व्याख्यान एवं प्रदर्शनी श्रृंखला का आयोजन।

14 राष्ट्रीय पर्यावरण जागरूकता कार्यक्रम।

15 मत्स्यपालन में प्रशिक्षण कार्यक्रम।

16 विज्ञान प्रदर्शनी व विज्ञान भ्रमण कार्यक्रम।

17 भौतिकी में शैक्षिक एवं अभिप्रेरणात्मक कार्यक्रम।

18 सुदूरवर्ती क्षेत्र के स्कूलों के विद्यार्थियों की विज्ञान शिक्षा के लिये सुगम साइंस किट का निर्माण ।

19 वैज्ञानिक जागरुकता वर्ष 2004 में उत्तराखण्ड राज्य में राज्य समन्वयक।

20 चमत्कारों के पीछे के वैज्ञानिक तथ्यों के प्रति जन जागरूकता व प्रशिक्षण कार्यक्रम।

21 राष्ट्रीय स्तर की शिक्षक विज्ञान कांग्रेस का आयोजन।

22 हिमालयी राज्यों मे विज्ञान, चेतना, जत्था की राज्य समन्वयक।

23 विज्ञान लेखन की राज्य स्तर कार्यशाला का आयोजन।

24 ग्रामीण क्षेत्रों में ईसीओ–वॉटर साइंटिफिक लिटरेसी कार्यक्रम।

25 पृथ्वी ग्रह कार्यक्रम की राज्य समन्वयक।

26 साइंटिफिक एक्सपोजर ऑफ स्टूडेंट्स आन ऐस्ट्रानॉमी (सेसा) की राज्य समन्वयक।

विज्ञान लोकप्रियकरण पर केन्द्रित उक्त सभी कार्यक्रमों का संचालन राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार तथा उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद के उत्प्रेरण एवं सहयोग से किया जाता है। वैज्ञानिक एवं शैक्षिक कार्यक्रमों के माध्यम से उत्तराखण्ड के सर्वागीण विकास के लिये संस्था अपनी स्वैच्छिक सेवाओं के साथ प्रतिबद्व है और संस्था द्वारा निम्नांकित कार्यक्रमों का संचालन गतिमान है :–

1 उत्तराखण्ड के ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के पानी के लिये रासायनिक व जैववैज्ञानिक जागरुकता कार्यशालाओं का आयोजन।

2 कृषि बागबानी को बढावा देने के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में मृदा परीक्षण।

3 पारम्परिक लोक माध्यमों से लोक गीतो में निहित वैज्ञानिक संदेशो का संकलन व प्रसारण।

4 स्कूली बच्चों के लिये प्रकृति अध्ययन शिविरों का आयोजन।

5 उत्तराखण्ड में जल कृषि तकनीकी को प्रोत्साहन।

6 उत्तराखण्ड के विज्ञान के शिक्षकों के लिये क्षमता संवर्द्धन कार्यशालाओं का आयोजन।

7 उत्तराखण्ड में ग्रामीण क्षेत्रो में विज्ञान लोकप्रियकरण एवं जागरूकता शिविरों का आयोजन।

8 घरेलू कूड़ा का वर्मी कम्पोस्टिंग के माध्यम से सुरक्षित निस्तारण पर कार्यशालाओं का आयोजन।

9 वैज्ञानिक चेतना विकास एवं जागरूकता के लिये कार्यरत संस्थाओं की नेटवर्किंग तथा अंडरस्टैंडिंग नेटवर्क की स्थापना।

10 यूकोस्ट के सहयोग से सुदूरवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों में विज्ञान प्रसार केन्द्रों की स्थापना।

11 चल तारामण्डल के माध्यम से बच्चों के लिये खगोलीय कार्यक्रम (एएसएमओपीएलएएम)

12 विज्ञान प्रदर्शनियों के माध्यम से जन सामान्य के लिये वैज्ञानिक विकास कार्यक्रम।

13 वैज्ञानिक प्रदर्शनियों के माध्यम से शिक्षकों व विद्यार्थियों का वैज्ञानिक प्रकटन (एसईटीएसई)

14 माउण्टेन बायो रिसोर्स काम्प्लैक्स के माध्यम से ग्रामीण प्रौधोगिकी का हस्तांतरण तथा प्रसार।

15 राज्य में विधार्थियों के लिये बायोरिसोर्स एजुकेशन।

16 बुनियादी साक्षरता एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिये जन–शिक्षण संस्थान की स्थापना भारत सरकार के विचाराधीन।

17 महिलाओं में वैज्ञानिक साक्षरता की प्रासंगिकता विषयक विचार गोष्ठियों की श्रंखला के साथ ग्रीन बैग की पहल।

प्रशिक्षण, शोध एवं विकास

पहल उस जन समुदाय की बेहतरी और विज्ञान लोकप्रियकरण तथा विकास के मुद्दों के लिये काम करती है जो आज भी उपेक्षित हैं। पहल जीवन की गुणवत्ता को बढाने तथा शिक्षा के लिये क्रियात्मक शोध के माध्यम से कार्य करती है। साक्षरता, शिक्षा, विज्ञान, व्यावसायिक शिक्षा तथा महिला सशक्तिकरण के लिये संस्था कई ख्याति प्राप्त पत्रिकाओं और शोध पत्रकों में लेखन माध्यम से सहयोग करती है।

पहल के प्रकाशन

'सृजन', 'जल ही जीवन है,' 'जैव विविधता संरक्षण', 'अन्तरिक्ष का रहस्य', 'बाल विज्ञान कांग्रेस मार्गदर्शिका', 'विज्ञान वार्ता', पहल उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद तथा भारतीय विज्ञान लेखक संघ उत्तराखण्ड प्रभाग के सहयोग से प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका 'विज्ञान परिचर्चा' आपके हाथ में है ही।

अग्रगामिता

संस्था ने घरेलू व बरसाती जल के पुनर्चक्रीकरण और उपयोग के क्षेत्र में एक अभिनव क्रिया विधि खोजने में अग्रगामिता की है। यह परियोजना रीवा (आर0ई0डब्लू0ए0) के नाम से रूप में डिजाइन की गई है।

विज्ञान संबंधित महत्त्वपूर्ण दिवस

2 फरवरी	–	विश्व नमभूमि (वेटलैंड) दिवस
28 फरवरी	–	राष्ट्रीय विज्ञान दिवस
21 मार्च	–	विश्व वानिकी दिवस
21 मार्च	–	वसंत संपात (वेर्नर इक्विनॉक्स)
22 मार्च	–	विश्व जल दिवस
23 मार्च	–	विश्व मौसम विज्ञान दिवस
24 मार्च	–	विश्व क्षय रोग दिवस
5 अप्रैल	–	राष्ट्रीय समुद्रवर्ती (मेरिटाइम) दिवस
7 अप्रैल	–	विश्व स्वास्थ्य दिवस
18 अप्रैल	–	विश्व विरासत दिवस
21 अप्रैल	–	खगोल विज्ञान दिवस
22 अप्रैल	–	पृथ्वी दिवस
23 अप्रैल	–	विश्व पुस्तक दिवस
3 मई	–	सूर्य दिवस
11 मई	–	राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी दिवस
17 मई	–	विश्व दूरसंचार दिवस
22 मई	–	अन्तर्राष्ट्रीय जैवविविधता दिवस
31 मई	–	विश्व तमाखू निषेध दिवस
5 जून	–	विश्व पर्यावरण दिवस
8 जून	–	विश्व महासागर दिवस
21 जून	–	ग्रीष्म अयनान्त (समर सॉल्स्टाइस) (वर्ष का सबसे बड़ा दिन)
11 जुलाई	–	विश्व जनसंख्या दिवस
28 जुलाई	–	विश्व प्रकृति परिरक्षण दिवस
6 अगस्त	–	हिरोशिमा दिवस
9 अगस्त	–	नागासाकी दिवस
16 सितम्बर	–	विश्व ओजोन दिवस
23 सितम्बर	–	शरद सम्पात (ऑटम इक्विनॉक्स)
26 सितम्बर	–	विश्व हृदय दिवस
1 अक्टूबर	–	राष्ट्रीय रक्त दान दिवस
3 अक्टूबर	–	विश्व प्राणी दिवस
6 अक्टूबर	–	विश्व पर्यावास (हैबिटैट) दिवस
16 अक्टूबर	–	विश्व भोजन दिवस
10 नवम्बर	–	विश्व विज्ञान दिवस
21 नवम्बर	–	विश्व टेलीविजन दिवस
1 दिसंबर	–	विश्व एड्स दिवस
2 दिसंबर	–	राष्ट्रीय प्रदूषण दिवस
11 दिसंबर	–	अन्तर्राष्ट्रीय पर्वत दिवस
14 दिसंबर	–	राष्ट्रीय ऊर्जा परिरक्षण दिवस
23 दिसंबर	–	शिशिर अयनान्त (वर्ष का सबसे छोटा दिन)

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस

हम सभी महसूस करते हैं कि आज शिक्षा व्यावहारिक और सामाजिक सन्दर्भों से दूर हटती जा रही है। आज उच्च शिक्षित व्यक्ति भी अपने आसपास घट रही घटनाओं एवं स्थिति को पूरी तरह नहीं समझा पाता। आये दिन हमारे समाज में ऐसी ढेर सारी समस्याऐं आती हैं जिनका समाधान समुचित सर्वेक्षण, अध्ययन एवं विश्लेषण के माध्यम से सही दिशा में उचित प्रयास करके सहज किया जा सकता है। हम यह भी देखते हैं कि हमारे चारों ओर कितने ही संसाधन विभिन्न रुपों से बिखरे पड़े हैं जिनकी व्यवस्थिति, पहचान तथा प्रबन्धन न होने के कारण उनका सन्तुलित और समुचित उपयोग समाज के लिए नहीं हो पाता। ऐसी ही अनेक बाते आये दिन समाज में देखने को मिलती हैं और शिक्षित वर्ग आज इन सारी बातों को किंकर्तव्यविमूढ़ होकर देख रहा है एवं इस मामले में अपने को कुछ करने में असमर्थ पा रहा है। इन सारी बातों पर विचार करके बच्चों को देश के आदर्श एवं सक्षम नागरिकों के रुप में विकसित करने के लिये एक पूरक शिक्षा पद्धति के रुप में स्कूल, ब्लॉक, जिला, राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर बाल विज्ञान कांग्रेस का आयोजन किया जाता है।

राष्ट्रीय स्तर पर 'बाल विज्ञान कांग्रेस' का आयोजन प्रतिवर्ष 27 से 31 दिसम्बर तक होता है, जिसमें जनपदीय एवं प्रान्तीय स्तर पर सूक्ष्म एवं सघन मूल्यांकन द्वारा चयनित लगभग 500 बच्चे सहभागिता करते हैं। यह वैज्ञानिक गतिविधियों पर गंभीर वैचारिक मन्थन का सक्रिय किन्तु आनंदप्रद पांच दिवसीय सत्र होता है जो बच्चों को उनकी वैज्ञानिकी अभिरूचि को उजागर करने का अद्वितीय अवसर प्रदान करता है। इस गतिविधि में देश के सभी राज्यों के बाल वैज्ञानिकों सहित नौ आसियान देशों के बाल वैज्ञानिक भी प्रतिभाग करते हैं।

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के उद्देश्य

- औपचारिक शिक्षा पद्धति और व्यवस्था में अनौपचारिक तथा सार्थक हस्तक्षेप।
- बच्चों की प्राकृतिक जिज्ञासा व सृजनात्मकता को विकसित करने का अवसर प्रदान करना।
- विज्ञान सीखने की क्रिया को आसपास के परिवेश, वातावरण एवं पर्यावरण से जोड़ना।
- बच्चों को अपने राष्ट्र के भविष्य के प्रति सार्थक तथा उपयोगी सपने संजोने एवं उन्हें साकार करने के लिए प्रोत्साहित करना।
- पर्यावरण, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों को समझाकर विज्ञान विधि (अवलोकन, सर्वेक्षण, प्रयोग एवं विश्लेषण के पश्चात निष्कर्ष पर पहुँचने की प्रवृत्ति) के माध्यम से क्षेत्रीय/राष्ट्रीय समस्याओं का आकलन कर समाधान हेतु प्राथमिकताएं सुनिश्चित करके समाधान के प्रयास करना।
- विज्ञान विधि, परिवेश से जुड़ाव तथा व्यावहारिकता को वर्तमान शिक्षण व्यवस्था का अंग बनाना।
- बच्चों को संवेदशील और जिम्मेदार नागरिक बनाना।
- जन–जन में वैज्ञानिक प्रवृत्ति विकसित करना।

राष्ट्रीय समन्वयक संस्था (एन.सी.एस.टी.सी.नेटवर्क)

एन.सी.एस.टी.सी.–नेट्रवर्क, देश में फैले हुए लगभग 76 स्वयं सेवी एवं सरकारी संस्थाओं का एक समूह है जो विज्ञान लोकप्रियकरण एवं लोगों में वैज्ञानिक चेतना को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से कार्यरत हैं। संस्था का पंजीकरण संस्थाओं के पंजीकरण अधिनियम–1860 के तहत दिल्ली में एक स्वायत्तशासी संस्था के रुप में है।

नेटवर्क एक अकेला विज्ञान

लोकप्रियकरण प्रयोग है, जिसमें सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थायें राष्ट्रीय विकास कार्यक्रमों में एक साथ जुड़ी हैं। यह पुस्तकें प्रकाशित करती है राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस (एन.सी.एस.सी.) का समन्वयन करती है, विज्ञान कार्यक्रमों का आयोजन करती है, प्रशिक्षण कार्यशालायें आयोजित करती है, वैज्ञानिक चेतना का प्रसार करती है और साधारण जन एवं विज्ञान के बीच पुल बनाने का काम करती है।

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस, नेटवर्क का सबसे प्रत्यक्ष कार्यक्रम है जिसे राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद का सहयोग एंव उत्प्रेरण प्राप्त है। यह कार्यक्रम देश एवं विदेश के 10 से 17 साल की आयु के बच्चों को एक सृजनात्मक धारा में जोड़ता है। देश के लगभग पांच लाख बच्चे, शिक्षक, वैज्ञानिक एवं अन्य जन हर वर्ष इसमें विभिन्न स्तरीय गतिविधियों में भाग लेते हैं।

सदस्यता

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार से जुड़ी संस्थायें (सरकारी एवं गैर सरकारी) सदस्य हो सकती हैं। इसके साथ अनेकों स्वयं सेवी संगठन हैं जिनमें कुछ राष्ट्रीय विज्ञान लोकप्रियकरण पुरस्कार से सम्मानित भी हैं। विज्ञान लोकप्रियकरण क्षेत्र के प्रसिद्ध व्यक्ति–संस्था के फैलो या ऐसोसिएट नामित किये जाते हैं। सदस्यता के लिए कुछ शर्ते हैं यथा–संस्थाओं के लक्ष्य/उद्देश्य में विज्ञान लोकप्रियकरण गतिविधि मुख्य रुप से निहित रहना चाहिए। इस क्षेत्र में विगत 2 वर्षो से कार्यरत हो, राज्य के कम से कम आधे से अधिक भाग में उनकी गतिविधि फैली हो एवं एफसीआरए पंजीकृत नहीं हो। सदस्यता हेतु फार्म नेटवर्क के दिल्ली स्थित कार्यालय से प्राप्त कर सकते हैं।

उत्तराखण्ड राज्य की पीपुल्स एसोसियेशन आफ हिल एरिया लांचर्स (पहल) पंजीकृत कार्यालय मानस मन्दिर कैण्ट रोड पिथौरागढ़ एन.सी.एस.टी.सी. नैटवर्क की स्थाई सदस्य और राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस की उत्तराखण्ड की राज्य समन्वयक है।

कार्यालय का पताः

एन.सी.एस.टी.सी.–नेटवर्क
E-56, प्रथम तल, समसपुर रोड, पांडव नगर, नई दिल्ली–110091,
फोनः 011–22799236

e-mail:info@nc.orgstc.network
बेबसाइट : www.ncstc-network.org

डॉ. अग्रवाल राज़ी पदक से सम्मानित

उत्तराखण्ड के वरिष्ठ वनस्पति विज्ञानी, डी.बी.एस.महाविद्यालय, देहरादून के भूतपूर्व वनस्पति विज्ञान विभागाध्यक्ष डॉ. सन्तोष कुमार अग्रवाल को सावंतवाड़ी, जिला सिंधुदुर्ग, महाराष्ट्र में मैग्डेलिन अल्मिडा पर्यावरण केन्द्र, सावंतवाड़ी तथा पादप वार्गिकी संघ (एसोसिएशन फॉर प्लांट टैक्सोनोमी) द्वारा संयुक्त रुप से आयोजित 'समुद्रतटीय भारत की पादप विविधता की सांस्कृतिक व पारिस्थितिक छवि तथा संरक्षक प्रणोद (थ्रस्ट) विषय पर दिनाक २१ से २४ सितम्बर, २०१० को आयोजित एक राष्ट्रीय संगोष्ठी के अवसर पर विख्यात भारतीय पादपवर्गिकीविज्ञ प्रो. बशीर अहमद राज़ी के नाम पर दिये जाने वाले राजी पदक से सत्कृत किया गया। डॉ. अग्रवाल के द्वारा पादप वर्गीकरण विज्ञान के क्षेत्र में की गई उत्कृष्ट सेवाओं तथा प्रसार में योगदान हेतु उन्हें यह सम्मान प्रदान किया गया। इस अवसर पर डॉ. अग्रवाल ने अपने विषय के कार्यक्षेत्र जौनसार बावर के वनस्पति विश्व तथा पादप भौगोलिकी पर एक निबन्ध भी प्रस्तुत किया। उन्होंने इस संगोष्ठी के उद्घाटन कार्यक्रम की अध्यक्षता भी की। संगोष्ठी में भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण (बोटेनिकल सर्वे ऑफ इंडिया) के पूर्व निदेशक डॉ. पी.के. हाजरा, महाराष्ट्र के प्रसिद्ध पादप वार्गिकी विज्ञ तथा ब्लैटर पादप संग्रहालय, सेंट जेवियर कॉलेज, मुंबई के पूर्व संग्रहालयाध्यक्ष प्रो. मार्सेलिन रोसेरियो अल्मिडा के अतिरिक्त देश के विविध क्षेत्रों के लगभग तीस वर्गिकीविज्ञों व पारिस्थितिकी विज्ञों ने अपने शोध प्रस्तुत किये।

उत्तराखण्ड के विज्ञान ऋषि–। आदित्यनारायण पुरोहित

वनस्पति विज्ञान विशेषकर पादप किया विज्ञान (प्लांट फीजियोलॉजी) के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक आचार्य आदित्य नारायण पुरोहित गढ़वाल के एक अत्यन्त दुर्गम तथा सभी प्रकार की आधुनिक सुविधाओं से रहित स्थान से निकलकर अपने अध्यवसाय तथा प्रतिभा के बल पर विज्ञान तथा शिक्षा के क्षेत्र में उच्चतम शिखर पर आरोहण कर 'क्रियासिद्धि : सत्वे भवति महतां नोपकरणे' (कार्य सफल होता निश्चय से, साधन हैं अनिवार्य नहीं) के मूर्तिमन्त प्रतीक हैं।

श्री पुरोहित जी का जन्म चमोली जिले के किमनी गांव में 30 जुलाई 1940 को हुआ। उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा थराली, रुद्रप्रयाग तथा लैंसडाउन में प्राप्त की तथा स्नातक तथा वनस्पति विज्ञान में स्नातकोत्तर उपाधि आगरा विश्वविद्यालय से सम्बद्ध डी.एस.बी महाविद्यालय, नैनीताल से प्राप्त की।

अध्ययन का एक चरण पूरा कर वे वन अनुसंधान संस्थान मे पहले शोध सहायक तथा बाद में शोध अधिकारी के रूप मे कुछ वर्ष कार्यरत रहे। फिर पंजाब विश्वविद्यालय में शोध कार्य के लिये गये जहाँ उन्होंने महान् वनस्पति विज्ञानी प्रो. के.के.नंदा के निर्देशन में पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की तथा वहीं पर अध्यापन करने लगे। कुछ ही समय बाद उन्हें शिमला स्थित केन्द्रीय आलू अनुसन्धान संस्थान में वैज्ञानिक के रूप में नियुक्ति मिली। सन् 1971 में पुरोहित ब्रिटिश कोलंबिया विश्वविद्यालय, बैंकोवर, कनाडा में संकाय फेलो के पद पर नियुक्त हुए परन्तु पाँच वर्ष में ही भारत प्रेम उन्हें वापस खींच लाया। यहाँ वे शिलौंग, मेघालय स्थित नॉर्थ ईस्टर्न हिल युनिवर्सिटी (नेहू) में रीडर के पद पर नियुक्त हुए। दो वर्ष बाद ही सन् 1977 में गढ़वाल विश्वविद्यालय के कुलपति श्री बी.

डी. भट ने उनसे गढ़वाल आने का आग्रह किया तो उस आमन्त्रण तथा जन्मभूमि के आकर्षण से वे यहाँ वनस्पति विज्ञान विभाग में आ गये। यहाँ उन्होंने उच्च तुंगता पादप क्रिया विज्ञान अनुसंधान संस्थान (हाइ आल्टीट्यूड प्लांट फीजियोलोजी रिसर्च सेंटर) की स्थापना की। इस संस्थान द्वारा अति उंचाई पर स्थित वनस्पतियों की कार्यिकी अध्ययन के लिये 13,000' की उंचाई पर तुंगनाथ में एक फील्ड स्टेशन का निर्माण कर पेड़ पौधों का विशेष अध्ययन प्रारम्भ किया गया। 1989 में भारत सरकार ने प्रो. पुरोहित को कोसी कटार, अल्मोड़ा में गोविन्द वल्लभ पंत इंस्टीट्यूट ऑफ हिमालयन एन्वार्नमेंट ऍण्ड डेवलपमेंट की स्थापना की जिम्मेदारी सौंपी। वहाँ उक्त संस्थान के निदेशक तथा प्रोफेसर के रूप में उन्होंने सम्पूर्ण हिमालय क्षेत्र में अनेक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किये। उनके द्वारा प्रवर्तित बदरीवन पुनर्स्थापन कार्यक्रम (बदरीवन रीस्टोरेशन प्रोग्राम) तो सारे विश्व में धार्मिक स्थलों के पुनरुज्जीवन के लिये एक आदर्श कार्यक्रम के रूप में समादृत हुआ।

सन् 1995 में वे पुनः गढ़वाल विश्वविद्यालय में वापस आये।

सन् 1999 में प्रो. पुरोहित ने हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय के कुलपति का कार्यभार संभाला। एक वैज्ञानिक के रूप में उच्च अनुसंधान के मानक तो वे स्थापित कर ही चुके थे पर अब एक प्रशासक तथा शिक्षा व्यवस्थापक के रूप में आने वाली चुनौतियों का भी उन्होंने पूर्ण योग्यता एवं कुशलता से सामना किया। उनके कार्यकाल में विश्वविद्यालय ने उन्नति के पथ पर अत्युत्तम प्रदर्शन किया।

विश्वविद्यालय सेवा से निवृत्त होने के बाद उत्तराखण्ड शासन द्वारा प्रो. पुरोहित को औषधि तथा सगन्ध पौधों के संरक्षण, विकास तथा प्रोन्नति हेतु श्री एम.एल. भारतीय पीठ प्रदान किया गया तथा वर्तमान में वे राज्य में संगंध पौधों के अनुसंधान केन्द्र की स्थापना कर इस क्षेत्र में कार्यरत हैं।

प्रो. पुरोहित भारत की अनेक गण्यमान्य वैज्ञानिक संस्थाओं जैसे इंडियन एकेडेमी ऑफ साइंसेज, नई दिल्ली, नेशनल एकेडेमी ऑफ साइंसेज, इलाहाबाद तथा नेशनल एकेडेमी ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज, नई दिल्ली के फेलो हैं। 175 मौलिक शोध पत्रों के साथ ही साथ प्रो. पुरोहित ने एक पुस्तक लिखी तथा तीन ग्रंथों का सम्पादन किया है। उनकी योग्यता, प्रतिभा तथा गुणों का अनेकानेक संस्थाओं द्वारा सत्कार भी किया गया है। सन् 1992 में नेशनल एकेडेमी ऑफ साइंसेज ने उन्हें सिस्को द्वारा प्रायोजित पर्यावरण विज्ञान का पुरस्कार प्रदान किया। इंडियन सोसाइटी ऑफ ट्री साइंटिस्ट्स ने उनके वृक्ष पर्यावरण कार्यिकी (ट्री इको फीजियोलॉजी) से संबंधित कार्य का गौरव करने हेतु सेठ स्मारक पुरस्कार दिया। 1996 में वीर केसरी पर्यावरण संरक्षण पुरस्कार, देहरादून नागरिक समिति द्वारा प्रदत्त दून रत्न सम्मान, ओम प्रकाश भसीन फाउण्डेशन द्वारा विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी उन्नति के लिये दिया गया पुरस्कार, भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् द्वारा प्रदत्त आर.डी. असाना लेक्चररशिप अवार्ड तथा इंडियन साइंस कांग्रेस एसोसिएशन द्वारा सन् 2002–2003 में दिया गया बीरबल साहनी शताब्दी पुरस्कार उन्हें प्राप्त हुए। भारत सरकार ने उनकी विशिष्ट उपलब्धियों का सम्मान सन् 1997 में उन्हें पद्मश्री से अलंकृत कर किया।

देश, प्रदेश तथा हिमालय क्षेत्र के विकास के भांति भांति के कार्यक्रमों से प्रो. पुरोहित सक्रिय रूप से जुड़े हैं। वे समेकित पर्वत विकास के अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र, नेपाल के संरक्षक मण्डल के सदस्य (1991–1997) अन्तर्राष्ट्रीय पर्वत फोरम की प्रारम्भिक कार्यकारिणी समिति के सदस्य (1995–1997), वाशिंगटन डी.सी. स्थित माउण्टेन इंस्टीटयूट की अन्तर्राष्ट्रीय परामर्शदात्री समिति के सदस्य (2009 से) रहे हैं। भारत के योजना आयोग की विशेषज्ञ समिति के भी वे सदस्य हैं। सन् 1992 में भारतीय संसद द्वारा स्वीकृत हिमालय क्षेत्र के विकास के लिये बनी कार्य योजना तैयार करने में आपका प्रमुख योगदान रहा है।

प्रो. पुरोहित दुर्गम पर्वतीय क्षेत्र में उत्तम शोध सुविधाएँ उपलब्ध कराने तथा वहाँ के विद्यार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के लिये सदैव प्रयत्नशील रहे। उनके प्रयासों का ही परिणाम है कि पहाड़ का युवा आज पहाड़ में ही रहने तथा वहीं के विकास के लिये कार्य करने के लिये उत्सुक तथा सन्नद्ध है।

विज्ञान परिचर्चा की ओर से मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी तथा संतोष कुमार अग्रवाल ने देश तथा प्रदेश की विज्ञान तथा शिक्षा की समस्याओं पर प्रो. पुरोहित के विचार जानने के लिये उनसे भेंट की। उस वार्तालाप के कुछ अंश प्रस्तुत हैं।

वि.प. – प्रो. पुरोहित! आप उत्तराखण्ड, भारत तथा विदेशों में भी वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में गत चालीस वर्षो से अधिक समय से कार्यरत हैं। विश्व के मानचित्र पर वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में भारत का स्थान आप कहाँ पाते हैं ?

पुरोहित – बहुत महत्त्वपूर्ण तथा सम्मान जनक । हमें गर्व होना चाहिये कि भारत ने विश्व को अनेक महान् वनस्पति शास्त्रज्ञ दिये हैं। जगदीश चन्द्र बोस, पंचानन माहेश्वरी, बीरबल साहनी, शिवराम कश्यप, विश्वंभर पुरी, टी.एस.सदाशिवन आदि कुछ ऐसे नाम हैं जिन्हें विश्व का वनस्पति विज्ञान जगत् अत्यन्त आदर के साथ याद करता है। आज भी हमारे यहाँ के वैज्ञानिक देश में और संसार के अनेक भागों अत्युत्तम कार्य कर रहे हैं।

वि.प. – और भारत के मानचित्र में उत्तराखण्ड का स्थान जानना चाहें तो?

पुरोहित – वह भी उत्तम है। वैसे एक अलग राज्य के रूप में तो उत्तराखण्ड बने अभी बहुत समय नहीं हुआ है पर इस क्षेत्र से निकले अनेक युवा वैज्ञानिक देश तथा विदेश में बहुत अच्छा कार्य कर रहे हैं। अनेक विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों तथा विभिन्न उद्योगों मे महत्वपूर्ण योगदान दे रहे है। केवल वनस्पति विज्ञान ही नहीं अन्य अनेक विषयों में भी उत्तराखण्ड का नाम रोशन हो रहा है। यहाँ प्रतिभा की कोई कमी नहीं है। यहाँ का विद्यार्थी परिश्रमी भी बहुत है। पहाड़ की विषम भौगोलिक स्थिति के कारण यहाँ के निवासियों में परिश्रम करने की प्रवृत्ति तो स्वाभाविक ही होती है। यही प्रवृत्ति मैदानी भाग या बड़े बड़े महानगरों के युवाओं की तुलना में पहाड़ के युवा को श्रेष्ठ बना देती है। अब जिम्मेदारी केवल अध्यापकों तथा प्रशासन की है कि वह इन युवाओं को उचित मार्गदर्शन तथा सुविधाएँ प्रदान करे। यदि ऐसा होगा तो उत्तराखण्ड से निश्चित रूप से एक से एक उत्तम वैज्ञानिक निकलेंगे।

वि.प. – इसका अर्थ यह हुआ कि उत्तराखण्ड की प्रतिभा को अच्छे अध्यापक तथा अच्छा शिक्षा व्यवस्थापन चाहिये। इन दो क्षेत्रों में आज उत्तराखण्ड की जो स्थिति है क्या आप उससे संतुष्ट हैं?

पुरोहित – बिल्कुल नहीं वहाँ तो अंधकार ही अंधकार है। जगह जगह दूर दराज महाविद्यालय खोल दिये गये हैं। उनमें प्रयोगशाला उपकरण जैसी बातें तो छोड़िये अध्यापक तक नहीं हैं। उच्च शिक्षा के लिये क्या होना चाहिये यह बिना जाने काम हो रहा है। हर विषय के विशेषज्ञ अध्यापक होने चाहिये। एक ही अध्यापक एमएस सी स्तर पर अपने विषय की सभी शाखाओं का

अध्यापन विशेषज्ञता के साथ कर सकता हो यह एकदम असम्भव है।

वि.प. – क्या इसके लिये कुछ उपाय सुझा सकते हैं?

पुरोहित – अनेक बातें की जा सकती हैं। अलग–अलग विषयों के विशेषज्ञ अध्यापक अलग–अलग स्थानों पर कुछ थोड़े समय के लिये भेजे जा सकते हैं। जैसे दिल्ली का कोई प्राध्यापक अपनी गर्मी की छुट्टी में कुछ समय जोशीमठ के महाविद्यालय में जा कर पढ़ाये तो वहाँ के विद्यार्थियों का कितना भला होगा? ऐसी योजनाएँ बनें, उनके लिये धन की व्यवस्था होः सुविधाएँ दी जाएँ यह देखना शिक्षा व्यवस्थापकों का काम है।

वि.प. – शिक्षा में आये दिन प्रयोग होते रहते है। उदाहरणार्थ 35–40 साल पहले यहाँ महाविद्यालयों में सेमिस्टर पद्धति थी। वह पूर्ण रूप से असफल हो गई तो वार्षिक परीक्षा पद्धति चलाई गई। अब फिर से सेमिस्टर पद्धति प्रारम्भ हो रही है। उसी प्रकार विश्वविद्यालय ने अभी पीएच.डी. करने के लिये प्रवेश परीक्षा आरम्भ कर दी है। क्या यह अपनी ही एमएस.सी. डिग्री को नकारना नहीं है?

पुरोहित – नहीं, ऐसी बात नहीं है। प्रवेश परीक्षा की आवश्यकता इसलिये है कि इससे विद्यार्थी की शोध के प्रति गम्भीरता जानी जा सकती है। आज स्थिति यह है कि विद्यार्थी सोचता है कि जब तक नौकरी नहीं मिली तब तक पीएच.डी. में प्रवेश ले लो। कहीं कुछ स्कॉलरशिप या फेलोशिप का जुगाड़ हो जाय तो और अच्छा। वह एक तरफ फेलोशिप के रूप में पैसा कमाता रहता है, दूसरी ओर नौकरी के लिये हाथ पैर मारता है। नौकरी मिली कि गया। शोध कार्य के प्रति कोई गम्भीरता या लगन उसमें नहीं होती। प्रवेश परीक्षा से यह प्रवृत्ति समाप्त हो जायेगी ऐसा नहीं है परन्तु कुछ अंकुश अवश्य लगेगा।

वि.प. – परन्तु पीएच.डी तो अनेक बार बहुत वरिष्ठ लोग भी करते हैं। बोटेनिकल सर्वे ऑफ इण्डिया या फॉरेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट जैसे स्थान पर एक व्यक्ति वर्षों से एक विशिष्ट विषय का अध्ययन कर रहा है। उसमें उसे दक्षता प्राप्त है। उसके सामने अनेक शोध विषय हैं। उसकी कुछ परिकल्पनाएँ है। वह उन पर प्रयोग कर रहा हैं। अपने निष्कर्षो को थीसिस के रूप में विद्वानों के सामने रख कर वह पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त करना चाहता हैं लेकिन उससे यह आशा करना कि प्रवेश परीक्षा में बैठे कहाँ तक उचित है?

पुरोहित – स्पष्ट है कि इस सम्बन्ध में हमें दो वर्ग करने पड़ेंगे। अभी नये नये एमएस. सी, उत्तीर्ण विद्यार्थी और पहले से वैज्ञानिक क्षेत्र में कार्यरत व्यक्ति या अध्यापक। पुराने अनुभवी शोधार्थी को प्रवेश परीक्षा से छूट मिलनी चाहिये।

वि.प. – इस समय सारे देश में विश्वविद्यालय स्तर पर एक समान पाठयक्रम लागू करने का प्रयास हो रहा है। इस सम्बन्ध में आपका क्या मत है?

पुरोहित – यह एकदम अव्यावहारिक है। कागज पर समान पाठ्यक्रम लिख देने से क्या होने वाला है? यह तब तक निरर्थक है जब तक हम सारे देश में समान स्तर वाले अध्यापक नहीं नियुक्त करते। समान स्तरीय प्रयोगशालाएँ नहीं उपलब्ध कराते।

वि.प. – अच्छे अध्यापक से आपका क्या तात्पर्य है? आज अध्यापक की नियुक्ति में उसकी डिग्री देखी जाती है। शोध पत्र देखे जाते हैं। उसने कितने पीएच.डी करवाये यह देखा जाता है। पर वह पढ़ाने में कैसा है इसे तो बिल्कुल नहीं देखा जाता। इस विषय पर आपका क्या मत है?

पुरोहित – एकदम सही बात है। पढ़ाने की योग्यता कोई नहीं देखता। हम हर बात में विदेशों की नकल करना चाहते है। परन्तु अक्सर गलत बातों की ही नकल होती है। सही बातों की करने से रह जाती है। आज हमारे यहाँ नियुक्तियों में सिफारिश, आरक्षण, राजनीतिक दखलन्दाजी, जाति आदि ही प्रमुख होती हैं। साक्षात्कार के समय ही चुने जाने वाले व्यक्तियों की सूची पकड़ा दी जाती है। संक्षेप में विषय का ज्ञान छोड़ कर अन्य हर चीज महत्वपूर्ण होती है। ऐसे में स्तर या योग्यता का महत्व ही क्या है? विदेशों में अनके स्थानों पर साक्षात्कार के लिये आये उम्मीदवारों को कक्षा में पढ़ाना पड़ता है। दो या तीन कक्षाएँ जब वे पढ़ाते हैं तो विद्यार्थियों और अन्य अध्यापकों से राय ली जाती है। उसमें सफल व्यक्ति ही नियुक्ति पाता है। हम ऐसी बातें विदेश से नहीं सीखते। ऊपरी नकल ही करते हैं।

वि.प. – आपने शिक्षा से सम्बन्धित अपने विचार अत्यन्त स्पष्ट ढंग से रखे हैं। हम आशा कर सकते हैं कि हमारे नीति निर्धारक इन बातों पर ध्यान देंगे। अब विज्ञान परिचर्चा के माध्यम से हम एक अन्य विषय पर आपके विचार पाठकों के सम्मुख रखना चाहते हैं। आज वैश्विक तापमान वृद्धि (ग्लोबल वार्मिंग) की बहुत चर्चा है। इसके लिये मुख्य रूप से हवा में बढ़ती हुई कार्बन डाइ ऑक्साइड की मात्रा को दोषी ठहराया जा रहा है। हमने आपका एक व्याख्यान सुना था जहाँ आपने कहा था कि कार्बन डाइ ऑक्साइड के बढ़ने से कोई हानि नहीं होती। जितना कार्बन डाइ ऑक्साइड बढ़ता है पेड़ उतना उसका इस्तेमाल कर लेते हैं। इस विषय पर आप अपने विचार हमारे पाठकों के लिये बताइये।

पुरोहित – पहली बात तो यह जान लीजिये कि कार्बन डाइ ऑक्साइड कोई प्रदूषण उत्पन्न करने वाली गैस नहीं हैं। कार्बन डाइ ऑक्साइड से हवा प्रदूषित नहीं होती। दूसरे हवा में इसकी मात्रा केवल 0.3ः ही है। ग्रीन हाउस प्रभाव कार्बन डाइ ऑक्साइड से भी बहुत बड़ी मात्रा में हवा में स्थित जलवाष्प के

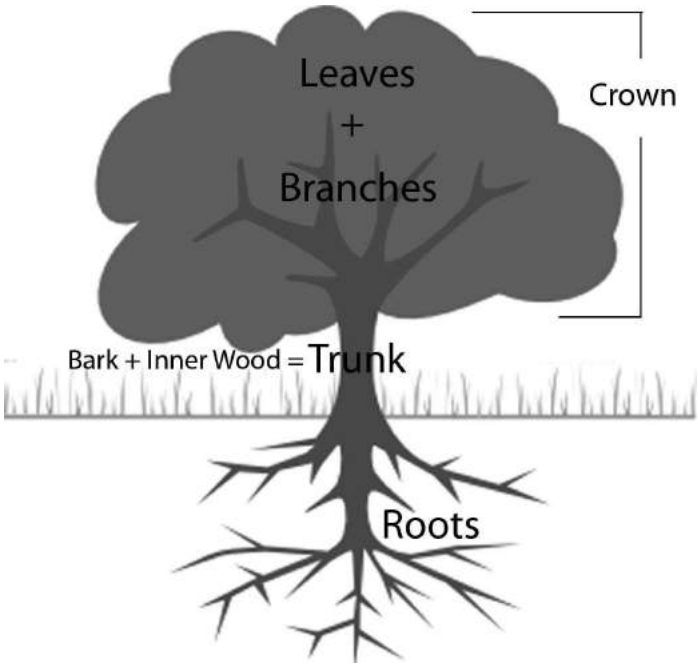

कारण होता है। उसकी कोई बात नहीं करता। 1500 पीपीएम तक कार्बन डाइ ऑक्साइड को पृथ्वी पर स्थित पेड़ उपयोग में ला सकते हैं। अभी तो 360 पीपीएम भी नहीं है। इसलिये कार्बन डाइ ऑक्साइड का वैश्विक तापमान वृद्धि से कोई भी सम्बन्ध नहीं हैं। यह शोर अधिकतर अवैज्ञानिकों या राजनीतिज्ञों द्वारा किया जाता है।

मैं यह नहीं कहता कि वैश्विक तापमान वृद्धि नहीं हो रही है। पर उसका कारण सूर्य है। सूर्य में जो गतिविधियाँ होती हैं वे यहाँ के तापमान को प्रभावित करती हैं। यह एक पूर्ण रूपेण प्राकृतिक स्थिति है। पिछला पूरा दस लाख वर्ष का प्लास्टोसीन काल पृथ्वी पर पुनः पुनः होने वाले गर्म युग और हिम युग का काल रहा है। अभी गर्मी बढ़ रही हैं भविष्य में ठंढ बढ़ेगी। हाँ, एक बात अवश्य हुई है कि बदलते मौसम के अनुसार स्वयं को ढाल लेने की हमारी क्षमता में कमी आई है। और केवल मनुष्य की ही नहीं वरन् प्राणियों तथा वनस्पतियों में भी यह कमी देखी जा सकती है।

वि.प. – पुरोहित जी! हमने अनेक विषयों पर अब तक चर्चा की। देश की वर्तमान परिस्थिति पर आप कुछ टिप्पणी करना चाहेंगे। विशेषकर आज हमारे यहाँ जाति, प्रांत, भाषा आदि के नाम पर जो अलगाववाद पनप रहा है उसे दूर करने के लिये क्या किया जा सकता है?

पुरोहित – इसके लिये हमें एक दूसरे को समझना तथा सबका सम्मान करना सीखना होगा और यह हर स्तर पर होना चाहिये। इस संबंध में मैं एक बहुत पुराना संस्मरण सुनाना चाहता हूँ। सन् 1975 की बात है। तब मैं नेहू में था। आपातकाल लगा हुआ था। वहाँ दीक्षात समारोह के लिये प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी आने वाली थी। उनके आने से पहले उनके दाहिने हाथ माने जाने वाले श्री यशपाल कपूर वहाँ तैयारियों का जायजा लेने के लिये आये थे। कुलपति के यहाँ उनके साथ हम सबकी एक बैठक आयोजित हुई। बैठक में नागालैंड के कृषि महाविद्यालय का एक नागा अध्यापक भी था। बैठक चल ही रही थी कि वह नागा अध्यापक बोल उठा कि हम इंदिरा जी को मंच से तब तक भाषण नहीं करने देंगे जबतक वे यह घोषणा न करें कि हमारा कृषि महाविद्यालय नेहू का एक दूसरा कैम्पस माना जायेगा। बैठक में सन्नाटा छा गया। खैर, बैठक समाप्त हुई तो भोजन के समय अनौपचारिक बातचीत प्रारम्भ हुई। यशपाल कपूर जी से मेरा परिचय कराया गया। कुछ ही दिनों पहले श्री हेमवतीनन्दन बहुगुणा जी के प्रयत्नों से गढ़वाल विश्वविद्यालय की स्थापना हुई थी। परन्तु उन दिनों बहुगुणा जी के इन्दिरा जी से अच्छे संबंध नहीं थे। यशपाल कपूर जी को जब पता चला कि मैं गढ़वाली हूँ तो वे व्यंग से बोले कि आपकी घरवाल युनिवर्सिटी कैसी है। मैने कहा घरवाल नहीं गढ़वाल नाम है। वे बोले नही, नहीं, वह तो बहुगुणा जी की 'घरवाल' ही है। मैं तरुण वय का था। उनका व्यंग मुझे सहन नहीं हुआ। मैने उनसे कहा कि किसी भी समाज के प्रति ऐसी बात कहना आपको शोभा नहीं देता। आपसे पहले किन्हीं और लोगों ने इन नागाओं के साथ भी ऐसा ही व्यवहार किया होगा। इसका परिणाम आप देख रहे हैं। ऐसी बातें देश के अन्य भागों में भी हो सकती हैं। फिर वे कुछ नहीं बोले। दीक्षान्त समारोह हुआ। इन्दिराजी आईं। मंच से भाषण प्रारम्भ करते ही उन्होंने पहला वाक्य बोला कि नागालैण्ड का कृषि महाविद्यालय नेहू का दूसरा कैम्पस होगा। संयोग से वह नागा अध्यापक मेरे पास ही बैठा था। इन्दिरा जी की घोषणा सुनते ही वह मुझसे बोला कि ये लोग ऐसी ही भाषा समझते हैं। तो मुझे लगता हैं कि सत्ता में बैठे लोग ऐसी ही भाषा समझते हैं यह भावना जबतक रहेगी तबतक यह अलगाववाद या भेदभाव समाप्त नहीं होगा।

वि.प. – पुरोहित जी। आपने अपना इतना अमूल्य समय हमें दिया तथा विविध विषयों पर अपने उद्‌बोधक विचार हमारे पाठकों के सामने रखे इसके लिये विज्ञान परिचर्चा की ओर से हम आपके आभारी हैं। नमस्कार।

प्रो० पुरोहित ने मुख्यतः वृक्षों की पारिस्थितिक कार्यिकी व उच्च-तुंगी औषधी पौधों का अध्ययन किया। आपने सर्वप्रथम दर्शाया कि अनिर्धारी वृद्धि वाले पौधों को निर्धारी अर्थात सीमित वृद्धि वाले पौधों में परिवर्तित किया जा सकता है। अपने प्रेक्षण के आधार पर आपने बताया कि भोज्य कारकों व जनन हार्मोनों के प्रणालन द्वारा ही पौधे निर्धारी अथवा अनिर्धारी होते हैं। प्रो० पुरोहित ने पौधों में प्रकाश-संश्लेषण की प्रथम-प्रकाश क्रिया व जनन अवस्था में निकट संबन्ध दर्शाया, जो जनन अवस्था को ऊर्जा प्रदान करती है। आपने यह भी प्रतिपादित किया कि पुष्प-प्रेरण के लिये पत्तियों में प्रारम्भिक गतिविधि, अणुओं की प्रकाश-उत्तेजन सरीखी जैव-भौतिकी क्रिया तथा अभिक्रिया -केन्द्र के रंजकों (पर्णहरिम इत्यादि) की आक्सीकरण-अवकरण अवस्था से आरम्भ होती है।

प्रो० पुरोहित ने प्ररोह (तना) की लम्बाई-वृद्धि व पुनरावर्ती वृद्धि प्रतिमान (पैटर्न) दर्शाने वाले प्रसार का कारण ढूंढा तथा सबसे लंबे प्रसुप्ति काल (डार्मैन्सी पीरियड) तथा जनन-अवस्था के आगमन पर पौधों के तने की अग्रस्थ कलिका में होने वाले अनेक ऊतकीय परिवर्तन बताए। वृक्षों मे ऐसी वृद्धि का पहला प्रतिवेदन है। एक साधारण प्रयोग द्वारा इसे पुनः सिद्ध किया। उन्होंने डगलस-फर की पौध को कार्बन-डाई आक्साइड की उच्च सांद्रता में उगाया, जिससे कलिका-प्रसुप्ति प्रेरित हुई तथा मात्र एक वर्ष के आयु के पौधों में ही शंकु (कोन) जैसी रचना विभेदित हो गई।

आपने कार्बनडाई आक्साइड समृद्धीकरण के प्रभाव का अध्ययन कर यह पाया कि कार्बनडाईआक्साइड की उच्च सांद्रता, सामान्य-अल्प प्रदीप्तकाली (छोटे दिनों में पुष्पन करने वाले) पौधों में पुष्पन-निरोध करती है तथा दीर्घ प्रदीप्त काली (लंबे दिनों में पुष्पन करने वाले) पौधों में पुष्पन-प्रेरण का कार्य करती है। पुष्पन संबन्धी, फाइटोक्रोम मध्यस्थता वाली अनुक्रियाओं का भी 'लाल-प्रकाश विघ्न' काल में कार्बनडाईआक्साइड की उपस्थिति से सीधा संबन्ध है। आपने ही पहली बार कार्बनडाईआक्साइड समृद्धीकरण तथा विषाणु (वायरस) गुणन में संबन्ध बताया।

प्रो० पुरोहित व उनके सहयोगियों द्वारा किये गये अध्ययन का पत्तियों में तापक्रम-विविधता की अनुप्रयुक्त उपयोगिता में बहुमूल्य योदान है। उन्होंने 'निम्न तापी' व 'उच्च तापी' नाम से वृक्षों की दो प्रकार की प्रजातियाँ चिन्हित की। उनके अनुसार 'निम्नतापी' प्रजातियाँ, खुले हुए उपोष्ण पर्वतीय ढलानो, जहाँ उच्च तापमान व प्रकाश उपलब्धता है, पर अधिक उत्तरजीविता क्षमता रखती हैं (कामयाब हैं।) कार्मिकी - मानकों के आधार पर आपने वृक्ष प्रजातियों का 'श्रेष्ठता सूचक' ज्ञात किया जिसे आधार पर उन्हें पहाड़ों मे उगाया जा सके तथा उनका 'ईंधन-काष्ठ उपयोगिता सूचक' भी अधिक हो।

प्रो० पुरोहित द्वारा सिक्किम में बड़ी इलायची व माल्टा (मैन्डेरिन) पर आधारित कृषि-वानिकी पद्धति के अध्ययन से तीन बातें ज्ञात हुईः

१. नाइट्रोजन स्थिरीकरण वाले वृक्षों में पोषक चक्र की तीव्रता।

२. नाइट्रोजन स्थिरीकरण न करने वाले लिट्टर से पोषकों की अधिक निर्मुक्ति।

३. एल्नस (एल्डर, उतीस) तथा एल्बीज़िया (सिरिस) वृक्षों में द्वितीयक-स्थिरित फ़ासफ़ोरस का विलेयीकरण। इन खोजों का कृषि-वानिकी मॉडल विकास में विशेष महत्त्व है।

आपने 'आभासी एक बीजपत्र' (स्यूडोमोना कॉटाइल) तथा कुछ उच्च पर्वतीय द्विबीजपत्रीय (दो दाल वाली) प्रजातियों में बीज पत्रोपरिक (एपीकॉटाइल) की वृद्धि में बीज पत्रों की नियन्त्रण-भूमिका रिपोर्ट की। आप और सहयोगियों द्वारा उच्च पर्वतीय पौधों में किये गए अंकुरण अध्ययन से अनेकों संकटापन्न प्रजातियों को एल्पाइन फील्ड स्टेशन, तुंगनाथ में प्रकृति में स्थापित करने में सहायता मिली। उन्होंने एकोनाइट (अतीस) तथा उच्चपर्वतीय व उपउच्चपर्वतीय औषधी महत्व के पौधों के लिये कृषि तकनीक विकसित की, जिनमें १० से २० गुणा अधिक उत्पादन हुआ।

रेडियो संचार प्रणाली
संक्षिप्त परिचय

राजेन्द्र पाल

मनुष्य दुनिया का अनोखा प्राणी है जिसे ईश्वर ने सोचने-समझने की शक्ति दी है। आदि मानव से आधुनिक मानव तक की दुर्गम यात्रा, विषम परिस्थितियों से जूझते हुए हजारों वर्षों के निरन्तर प्रयासों की साहसिक कहानी -प्राणी जगत में मनुष्य की श्रेष्ठता का बोध कराती है। इशारों व संकेतों की शैली से अभिव्यक्ति ने जन्म लिया। वाणी अभिव्यक्ति का माध्यम बनी और प्राकृतिक व भौगोलिक वातावरण से विभिन्न भाषाओं का प्रादुर्भाव हुआ। भाषा मानव संचार की कड़ी बनी और सूचना के युग का प्रारम्भ हुआ।

पुराने समय में सन्देश भेजने के कुछ साधन जुटाए गये। आदिवासी लोग जानवरों की खाल से बने बड़े–बड़े ढ़ोल पीट–पीट कर अपने मुखिया /राजा के आगमन की सूचना देते थे। अधिक दूरी तक सन्देश पहुँचाने के लिये पुनः ढ़ोल पर वही ताल पीट कर सूचना का प्रसारण किया जाता था। पत्राचार भी सन्देश भेजने का माध्यम बना और अनेक साधन प्रयोग किये गये। राजा–महाराजा समय बचाने के लिये घोड़ों का उपयोग कर सूचना का आदान–प्रदान करते थे। दूरस्थ स्थान के लिये प्रशिक्षित कबूतर प्रयोग में लाये जाते थे। इस तकनीकी लेख के माध्यम से रेडियो संचार के क्षेत्र में प्रयोग की जाने वाली प्रमुख और प्रचलित संचार प्रणालियों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है। तकनीकी गूढ़ विषय की गहराई में उतरे बिना वर्तमान संचार व्यवस्था की उपयोगिता व महत्व को समझाने का प्रयास किया गया है।

सेमोफोर प्रणाली

सीमित दूरी तक सन्देश भेजने के लिये सेमोफोर नाम की सांकेतिक विधि आज भी प्रचलित है। खुले समुद्र के बीच दो जलपोत हों अथवा आस–पास की दो पहाड़ियां – झण्डियों के संकेतों द्वारा सूचना का आदान–प्रदान किया जाता है। इस तकनीक में आवश्यक है कि सन्देश भेजने वाला व्यक्ति व सन्देश प्राप्त करने वाला व्यक्ति एक दूसरे को देख सकते हों ('लाइन आफ साइट' मे हों।) वही संचार की अधिकतम दूरी होती है। आपात काल अथवा युद्ध के समय यह विधि अत्यन्त उपयोगी है।

वायर टेलीग्राफी

समय के साथ बुद्धि का विकास हुआ और आवश्यकता ने आविष्कार को जन्म दिया। सन् 1834 में प्रोफेसर सेमुएल मोर्स ने तार के माध्यम से विद्युत करेंट की कुछ तंरगों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने में सफलता प्राप्त की। एक अन्य प्रसिद्ध वैज्ञानिक एलेक्जेंडर ग्राम बेल ने भी ऐसे ही प्रयोग किये। सन् 1844 में सरकार के सहयोग से अमेरिका में वाशिगंटन से 40 कि० मी० दूर बाल्टीमोर तक तार बिछाये गये और बाईबिल के एक संक्षिप्त सूत्र/श्लोक 'व्हाट हैथ गौड़ रोट' को सूक्ष्म 'डॉट व डॅश' में विभाजित कर प्रथम बार तार के माध्यम से भेजा गया। सेमुएल मोर्स के नाम से मोर्स–कोड़ की उत्पत्ति हुई और टेलीग्राफिक सन्देशों का आवागमन प्रारम्भ हो गया।

वायरलेस टेलीग्राफी

पिछली शताब्दी के प्रारम्भ में वैज्ञानिकों ने कई क्रान्तिकारी प्रयोग किये जिन्होंने संचार की सीमाएँ मिटा दी और दूरियाँ सिमट गयीं। भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर जगदीश चन्द्र बोस ने सन् 1895 में रायल सोसायटी, लन्दन में रेडियो तरंगों को भेजने व ग्रहण करने के प्रयोग प्रदर्शित किये। 12 दिसम्बर 1901 को इटली के वैज्ञानिक गुजली लियो मारकोनी ने पतंग के सहारे लटके 120 मीटर लम्बे तार से अंग्रेजी के अक्षर 'एस' को इंग्लैंड से 3000 कि0मी0 दूर एटलान्टिक महासागर पार कैनेडा तक प्रसारित करने (भेजने) में सफलता प्राप्त की। बेतार–के–तार द्वारा हवा में प्रेषित यह प्रयोग वर्तमान सूचना क्रान्ति का ठोस आधार बन गया। वायरलेस टेलीग्राफी द्वारा विश्व में सूचनाएँ तीव्र गति से फैलने लगीं।

रेडियो संचार प्रणाली

रेडियो संचार का शुभारम्भ वैसे तो मारकोनी के बेतार–के–तार से हो गया लेकिन मानव आवाज (वायस) को एक स्थान से दूरस्थ स्थान तक रेडियो तंरगों पर भेजना सरल कार्य नहीं था। मानव शारीरिक संरचना ऐसी है कि हमारी बोलने व सुनने की क्षमताएं सीमित हैं। ध्वनि की सभी आवृतियों को हम सुन नहीं सकते। मनुष्य केवल 20 हर्ज़ से 20 कि0 हर्ज के बीच की ध्वनि आवृतियों को सुन सकता है। आवाज की तरंगे जब वायु में संचरण करती हैं तो उनकी शक्ति का तीव्रता से ह्रास होता है। कुछ दूरी के बाद उन्हे सुनना असम्भव है। इलैक्ट्रानिक उपकरण (लाऊड स्पीकर) के द्वारा इस दूरी को थोड़ा बढ़ाया जा सकता है लेकिन सैंकड़ो कि0मी0 दूर बैठे अपनों तक इस प्रकार आवाज नहीं पहुँचाई जा सकती। यही कारण था कि आदि मानव की गतिविधियाँ छोटे–छोटे समुदायों के दायरे तक ही सिमट कर रह गयीं। फलस्वरूप प्रारम्भिक विकास दर की गति धीमी रही और सदियों तक ऐसे ही चलती रही।

माडुलेशन

टेलीफोनिक वार्तालाप की आवृति अगर 3 किलो हर्ज मान लें तो भौतिकी के मूल सिद्धान्त के अनुसार इस आवृति को वायु में प्रसारित करने के लिये एन्टेना की उँचाई (वेवलेन्थ का एक चौथाई भाग) 25 किलो मीटर होनी चाहिये जो बनाना असम्भव है अतः कुछ नयी तकनीक प्रयोग में लायी गयी जिसे माडुलेशन कहते है। माडुलेशन की प्रक्रिया में उच्च आवृति की रेडियो तरंग ध्वनि वाहक का कार्य करती हैं और इन तरंगों के किसी एक अवयव/गुण (आयाम, आवृत्ति व फ़ेस) में ध्वनि तरंग के अनुरूप बदलाव आ जाता है। ये परिवर्तन अगर आयाम में होता है तो इसे आयाम–माडुलेशन कहते हैं। आवृति व फेस में आये परिवर्तन को क्रमशः आवृति–माडुलेशन व फेस–माडुलेशन कहते है।

3 कि0 हर्ज के वार्तालाप को अगर 3 मेगा हर्ज की उच्च आवृति के सहारे वायु में प्रेषित करें तो ऐन्टेना का आकार बहुत सीमित हो जाता है जो गणना के अनुसार केवल 25 मीटर होता है। इतना लम्बा तार सुगमता से प्राप्त किया जा सकता है। इस विधि से मनुष्य की आवाज सैकड़ों कि0मी0 दूर तक भेजी जा सकती है। इसी तकनीक पर आधारित हैं रेडियो संचार की प्रमुख प्रणालियां जिनका संक्षिप्त विवरण इस पत्र में प्रस्तुत किया गया है।

1. वी.एल.एफ. (अति निम्न आवृत्ति) संचार प्रणाली–पनडुब्बी संचार

2. एच.एफ. (उच्च आवृत्ति/संचार प्राणाली–हैम रेडियो संचार)

3. वी.एच.एफ./यू.एच.एफ. (अतिउच्च आवृत्ति) संचार प्रणाली–मोबाइल/सेलुलर रेडियो संचार

4. उपग्रह संचार प्रणाली

पनडुब्बी संचार प्रणाली

पनडुब्बी भारतीय नौसेना का एक शक्तिशाली युद्धपोत है जो समुद्र के अन्दर छुपकर दुश्मन पर अत्यन्त घातक प्रहार करता है। समुद्र के अन्दर अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये पनडुब्बी को आवश्यक दिशा निर्देश देना बहुत कठित कार्य है क्योंकि समुद्र में रडियो तरंग की शक्ति अति तीव्रता से घटती है। इस चुनौती पूर्ण कार्य को भारतीय वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया और इस में दक्षता प्राप्त की। आज भारत विश्व के गिने चुने 6–7 राष्ट्रों की श्रेणी में आ गया है जहाँ अति निम्न आवृत्ति (3 कि0 हर्ज से 30 कि0 हर्ज) का प्रयोग कर स्वयं विकसित उच्च तकनीकी के सहारे पनडुब्बी को महत्वपूर्ण व आपातकालीन सन्देश भेजे जाते हैं। इस राष्ट्रीय परियोजना में देहरादून स्थित रक्षा अनुसन्धान प्रयोगशाला का महत्वपूर्ण योगदान है।

UNDERWATER COMMUNICATION

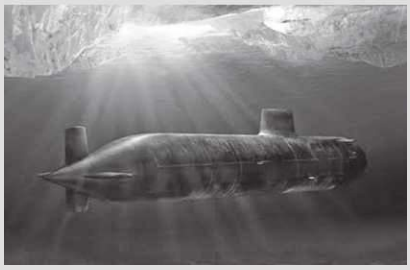

हैम रेडियो संचार प्रणाली

पृथ्वी की सतह पर लम्बी दूरी तक सन्देश भेजने के लिये उच्च आवृत्ति (1.6 मेगा हर्ज से 30 मेगा हर्ज) का प्रयोग किया जाता है। पृथ्वी के चारों ओर 80 कि.मी. से 400 कि.मी. की ऊँचाई पर सूर्य की तीव्र किरणों से कुछ आयनीकृत सतह (आइनोस्फेयरिक लेयर्स) बनी हुई है जो उच्च आवृत्ति की तंरगों को पृथ्वी की ओर परावर्तित कर देती हैं और संचार की दूरी बढ़ जाती है। देहरादून से लगभग 12000 कि.मी. दूर स्थित अन्टार्कटिका में कार्यरत भारतीय वैज्ञानिकों से वार्तालाप अधिकतर उच्च आवृति पर ही होता है। हैम रेडियो भी उच्च आवृत्ति पर कार्य करता है। विश्व में लगभग 20 लाख हैम आपरेटर हैं जो अपने तकनीकी ज्ञान व कुशल रेडियो संचालन के द्वारा आपसी सन्देशों का आदान–प्रदान करते हैं। प्राकृतिक आपदा व आपातकालीन अवस्था में हैम रेडियो संचालक अधिक सक्रिय हो जाते हैं। कोई आर्थिक लाभ प्राप्त किये बिना ये लोग दूरस्थ व दुर्गम स्थानों पर संचार व्यवस्था स्थापित कर पीड़ित लोगों की सहायता करते हैं। स्वइच्छा प्रेरित यह संचार प्रणाली विश्व में सहयोग व सौहार्द्र पूर्ण वातावरण पैदा करती है। कोई भी व्यक्ति (कोई आयु सीमा निर्धारित नहीं है) थोड़ा प्रशिक्षण लेने के बाद हैम आपरेटर बन सकता है।

मोबाइल रेडियो संचार प्रणालीः

टॉकिंग व्हाइल वॉकिंग' अर्थात चलते फिरते फोन पर बातें करना एक अत्यन्त प्रचलित व लोकप्रिय संचार प्रणाली बन गयी। सेलुलर फोन भी मोबाइल संचार का एक अंग है और टेलीफोन नेटवर्क से जुड़ा होता है। संचार क्षेत्र को षट्कोणीय कोष्ठ में विभाजित करते हैं। प्रत्येक कोष्ठ के लिये अपने टावर व संयन्त्र होते हैं जो अन्य कोष्ठ के टावर से जुड़े होते हैं। अधिकतर आवृत्ति–मोडुलेशन प्रयोग में लाते हैं। टावर की प्रेषण शाक्ति 5 वाट से 50 वाट तक होती है। प्रारम्भिक दूरी टावर की उँचाई पर भी निर्भर करती है। अधिक दूरी के लिये रिपीटर्स लगाये जाते हैं। पूरी संचार व्यवस्था स्वचालित केन्द्रीय कम्प्यूटर से संचालित होती है। प्रयोग कर्ता को नेटवर्क की जटिलता व सम्पर्क के समय का पता ही नहीं चलता क्योंकि इलैक्ट्रोमेगनेटिक तरंगें प्रकाश की गति से चलती हैं और सम्पर्क की क्रिया सेकेण्ड के सौंवे भाग में ही पूरी हो जाती है। इस प्रणाली में अधिकतर 100 मेगा हर्ज से 1000 मेगा हर्ज की आवृत्ति काम में लायी जाती है।

उपग्रह भी रिपीटर का कार्य करते हैं। भूकक्षीय इन उपग्रहों के प्रयोग से अधिक दूरी की सेवाएँ तीव्रता से फैल रही हैं। वार्तालाप के अतिरिक्त छोटे–छोटे लिखित सन्देश (एस.एम.एस./एम.एम.एस) व फोटो भी इस प्रणाली से भेजे/प्राप्त किये जा सकते हैं। देश की विकास दर में वृद्धि का एक कारण मोबाइल सेवा का विस्तार भी है।

उपग्रह संचार प्रणाली

वैज्ञानिक मनगढ़ंत कहानी के प्रसिद्ध लेखक आर्थर सी क्लार्क ने 1945 में एक कल्पना की जो आज पूर्णरुप से कार्यान्वित हो खूब फल फूल रही है। क्लार्क की परिकल्पना थी कि भूमध्य रेखा के ऊपर पृथ्वी के कक्ष में अगर एक रिपीटर स्थापित कर दिया जाय जिसकी पृथ्वी के चारों ओर घूमने की गति, पृथ्वी के अपने अक्ष पर घूमने की गति के बराबर हो तो पृथ्वी के एक क्षेत्र से रिपीटर हमेशा स्थिर दिखाई देगा। इस विधि से संचार सेवा विश्व के किसी भाग में भी उपलब्ध कराई जा सकती है। इस कल्पना को वास्तविक रूप मिला सन् 1963 में जब पहला 'जीयो स्थैतिक' उपग्रह 'सिन्क्रोम' लगभग 36000 कि0मी0. की ऊँचाई पर भू–कक्षा में स्थापित किया गया। इस प्रकार के तीन उपग्रहों से पृथ्वी का लगभग पूरा क्षेत्र आच्छादित हो जाता है।

उपग्रह में 'ट्रान्सपोन्डर' रिपीटर का कार्य करता है। पृथ्वी के एक छोर से मिले सिगनल को अन्य आवृत्ति पर पुनः पृथ्वी के दूसरे छोर पर प्रेषित कर देता है। उपग्रह संचार के द्वारा विश्व के विभिन्न द्वीप–महाद्वीप आपस में जुड़ गये। इस प्रणाली मे 3 गीगा हर्ज से 30 गीगा हर्ज तक की आवृत्ति प्रयोग की जाती है।

उपसहांर

संचार के क्षेत्र में विशेषकर विगत दो दशकों में जो अनुसन्धान व विकास कार्य हुए उससे विश्व में एक तकनीकी क्रान्ति आ गयी। भारत में 'टेलीडेन्सटी' जो सन् 1990 मे लगभग 12: थी वो मार्च 2010 में 48: हो गयी अर्थात् आज भारत में रहने वाले लगभग 55 करोड़ टेलीफोन/मोबाईल संचार सेवाओं का प्रयोग कर रहे हैं। सूचना–क्रान्ति के इस फैलाव से भारत की विकास दर बढ़ गयी। नव युवकों में आधुनिक तकनीक व संचार उपकरणों के प्रति जो आकर्षण हुआ उससे कम्प्यूटर साफ्टवेयर/हार्ड वेयर के क्षेत्र में भारतीय युवा इन्जीनियर व वैज्ञानिकों की मांग व सम्मान पूरे विश्व में बढ़ गया। यह कहना सर्वथा उचित होगा कि आज संचार–सेवाएं देश की उन्नति व निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

वैज्ञानिक (सेवानिवृत्त)
डिफेंस इलेक्ट्रॉनिक्स ऍप्लिकेशन्स
लेबोरेटरी, देहरादून

हमारी संस्कृति की दशा
तकनीक स्वीकार विज्ञान अस्वीकार

मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

जीवन जीने की पद्धति संस्कृति है। संस्कृति शब्द संस्कार से निकला है। आहार, निद्रा, भय, मैथुनादिक प्रकृति प्रदत्त गुण सभी प्राणियों में समान होते हैं पर मनुष्य अपनी बुद्धि से अपने जीवन व्यवहार को संस्कारित करता है और इस प्रकार अन्य प्राणियों से भिन्न 'संस्कृत' हो जाता हैं। फलस्वरूप क्षमा, दया, करुणा, परोपकार, स्नेह, सहयोग जैसे सद्गुण और क्रोध, घृणा, द्वेष, उद्वेग, असहिष्णुता, हिंसा जैसे दुर्गुण मानव की संस्कृति को भला या बुरा स्वरूप प्रदान करते हैं।

धार्मिक संस्कृति

मानव बुद्धि के प्रयोग से प्रकृति से प्राप्त उपादानों का न केवल उपयोग करता है वरन वह उन्हें अपने ढंग से परिवर्तित करने में भी सक्षम है। कृषि, कुएँ, नहरें, बांध, भवन, वस्त्र, शिकार, भोजन पकाना, धातुओं का प्रयोग, शस्त्रास्त्र निर्माण आदि द्वारा वह विकास होता है जिसे हम

सभ्यता का नाम देते हैं। इस प्रकार सभ्यता और संस्कृति मनुष्य जीवन के दो भिन्न आयाम हैं। सभ्यता की उन्नति का सीधा सम्बन्ध विज्ञान से है क्योंकि वह सीधे सीधे बुद्धि के उपयोग का परिणाम है। यह तकनीकी विकास है जो वैज्ञानिक विकास का फल है। परन्तु संस्कृति का क्षेत्र मानसिक या भावनिक उन्नति का है। बुद्धि का उपयोग तो वहाँ पर भी है पर वह चिंतन या विचार का क्षेत्र अधिक है कर्म का कम। जिसके पास न खाने को खप्पर हो न रहने को छप्पर वह भी सुसंस्कृत हो सकता है।

संस्कृति का संबंध धर्म से भी जोड़ा जाता है। धर्म शब्द का प्रयोग अनेक रूपों में किया जाता है। उपासना पद्धति उसका एक अंग है। यह करना चाहिये, वह नहीं करना चाहिये इस प्रकार का विधि–निषेधात्मक स्वरूप उसका दूसरा अंग है। तत्व चिंतन या दर्शन उसका तीसरा अंग है। इन तीनों से परे कुछ सामान्य मानवीय प्रवृत्तियों को जिन्हें हम कर्तव्य कहते हैं वे भी धर्म में अन्तर्भूत होती हैं। इन्ही के आधार पर हिंदू, मुसलमान, बौद्ध, इसाई, सिख, पारसी, जैन, यहूदी जैसे भिन्न भिन्न धर्मों का विकास हुआ, धर्मग्रंथ बने, धर्म पुरुष बने, धर्मपीठों का निर्माण हुआ और सम्पूर्ण मानव समाज इन आधारों पर अनेक खण्डों में विभाजित हो गया। इन सभी धर्मों में कर्तव्य के अर्थ में सामान्य मानव प्रवृत्तियों के निरूपण में तो समानता है पर दर्शन, विधि–निषेध तथा कर्मकाण्ड की पद्धतियों में पर्याप्त भिन्नता है और यह भिन्नता उन उन धर्माचार्यों ने जानबूझकर अपने धर्म का स्वरूप स्पष्ट करने के लिए उत्पन्न की हैं। अधिकांश ने इनको अधिकृत स्तर प्रदान करने के लिए इन्हें ईश्वर द्वारा निर्देशित बताया। इसलिये धर्म आधारित संस्कृति के इन सभी रूपों का मूल तर्क, बुद्धि, विचार, चर्चा आदि में न होकर श्रद्धा या आस्था में है। वहाँ संदेह या शंका का कोई स्थान नहीं। दर्शन या चिंतन में चर्चा या प्रश्न संभव है पर विधि–निषेध और कर्मकाण्ड में नहीं। हाँ, यदि कोई ऐसा प्रबल मानसिक शक्तियुक्त व्यक्ति उत्पन्न हो गया तो उसने प्रचलित धार्मिक पद्धतियों को परिवर्तित कर नया धर्म चलाया और यदि उसे अनुयायी भी मिलते गये तो वह नया धर्म चल निकला। इसी प्रकार यज्ञ प्रधान सनातन धर्म से बौद्ध एवं जैन, यहूदी धर्म से इसाई, मूर्तिपूजक अनेक देवोपासक अरबों के बीच इस्लाम, हिंदुओं में से सिख, मुसलमानों में अहमदिया या आधुनिक काल में आनन्द मार्ग, सहज मार्ग, प्रजापिता ब्रह्मकुमारी सम्प्रदाय, ओशो का मार्ग, गायत्री सम्प्रदाय, आर्य समाज, ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, निरंकारी पंथ, बहाई सम्प्रदाय इत्यादि अनेक पंथ, सम्प्रदाय, मार्ग आदि प्रचलित हैं।

वैज्ञानिक संस्कृति

पर जब हम वैज्ञानिक संस्कृति की बात करते हैं तो विचार के एकदम दूसरे धरातल पर पहुँच जाते हैं। यहाँ भी आस्था या श्रद्धा तो है पर वह किसी अज्ञात ईश्वर या उसके बेटे, पैगम्बर या दिव्य शक्ति प्राप्त व्यक्ति के द्वारा प्रवर्तित बातों पर नहीं वरन् निरीक्षण और परीक्षण आधारित तर्कशुद्ध निष्कर्षो पर होता है। इसीलिये वैज्ञानिक संस्कृति बुद्धिप्रधान है। इसमें संशय और प्रश्न का स्थान सर्वोपरि है। प्रत्येक वैज्ञानिक सिद्धान्त को हर नया अनुयायी सन्देह की दृष्टि से देखता है और उसे नित नूतन परीक्षणों द्वारा परखता है और उनमें संशोधन एवं सुधार की गुंजाइश सदैव मानता है। यदि ईश्वर जैसी कोई परम शाक्ति हो भी तो भी उस पर विचार करना विज्ञान को व्यर्थ लगता है। इसलिए वैज्ञानिक संस्कृति में

उपासना पद्धति या कर्मकाण्ड की आवश्यकता ही नहीं बचती।

पंद्रहवीं सोलहवीं शताब्दी से यूरोप में वैचारिक नव जागरण प्रारम्भ हुआ और उसी समय प्रकृति के रहस्यों को समझने के लिए प्राकृतिक नियमों को ही एकमेव आधार मानने की प्रवृत्ति पनपने लगी। इटली के वैज्ञानिक, चित्रकार, इंजीनियर एवं विचारक लियोनार्दो द विंशी (1452–1519) ने पत्थरों में मिलने वाले जीवाश्मों के सम्बन्ध में यह मत व्यक्त करके कि ये पहले किसी प्राचीन काल में जीवित प्राणियों के अवशेष हैं ईश्वर द्वारा केवल सात दिनों में सारी सृष्टि की रचना की धार्मिक मान्यता को झकझोर दिया। उसी के समकालीन एक दूसरे वैज्ञानिक जॉर्जियस एग्रीकोला (1494–1555) ने क्षेत्र के प्रत्यक्ष अध्ययनों द्वारा यह सिद्ध किया कि एक शैल के अन्दर बहुत समय बाद दूसरा शैल एक शिरा के रूप में निर्मित हो सकता है। 1 गैलीलियो ने (1564–1642) दूरबीन की खोज कर ग्रह नक्षत्रों की विद्या में ऐसी क्रांति ला दी कि इसाई धर्मगुरू आत्मनियन्त्रण खो बैठे। जेम्स हटन (1726–1797) ने पृथ्वी के शैलों की उत्पत्ति के सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर धर्मग्रंथों की स्थापनाओं को नकार दिया।[2] इस प्रकार एक के बाद एक वैज्ञानिक विचारधाराओं के विकास के साथ साथ कम से कम यूरोप में धार्मिक संस्कृति को कुछ पिछड़ना पड़ा और वैज्ञानिक संस्कृति और धार्मिक संस्कृति एक दूसरे के प्रतिद्वंद्वी के रूप में खड़े हो गये।

भारतीय समन्वय

तकनीकी विकास के कारण यूरोप का विश्व में वर्चस्व बढ़ा। तकनीकों का विकास तो भारत, चीन, अरब आदि देशों में भी हुआ पर वहाँ हम धर्म और विज्ञान के बीच वह संघर्ष नहीं पाते जो यूरोप में दिखाई पड़ता है। यदि भारत का ही उदाहरण लिया जाये तो यूरोपीय प्रभाव बढ़ने के साथ साथ यहाँ उनकी तकनीकें भी आई। पर हमारे यहाँ एक सर्व समावेशक दर्शन उपस्थित था जिसमें न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदांत, सांख्य और योग जैसे आस्तिक तथा बौद्ध, जैन एवं चार्वाक जैसे नास्तिक मत सम्मिलित थे। यूरोपीय तकनीक के साथ साथ जब उसके पीछे की वैज्ञानिक विचारधरा भी आई तो हमारे इस दर्शन में समा गई। इसीलिये छत्रपति शिवाजी अंग्रेजों से तोपें भी खरीदते थे तो विजय के लिये तुलजापुर की भवानी देवी का आशीर्वाद भी लेते थे। यही सर्व समावेशक भाव हमें दिखलाई पड़ता है रेलगाड़ी की या हवाई जहाज की यात्रा करते समय ईश्वर से मंगलमय यात्रा की प्रार्थना करने में या बांध का निर्माण प्रारम्भ करने के पहले नारियल फोड़ कर पूजा करने में। क्या हमें इन बातों में कोई विरोधाभास दिखाई पड़ता है?

तकनीक का विकास किसी धर्मग्रंथ के उपदेश से नहीं होता। यदि ईश्वर की इच्छा से ही सारी सृष्टि बन गई तो फिर नये से नये आविष्कार पहले से ही क्यों नहीं थे? पर ऐसे प्रश्न न तो जन सामान्य के सम्मुख और न ही वैज्ञानिक चिंतकों के मनों में आये। हमारे सर्वसमावेशक दर्शन ने वैज्ञानिक आविष्कारों को भी ईश्वर की कृपा का परिणाम मान कर विरोध को समाप्त कर दिया।

विडम्बना

पर समाज–मन का एक और आयाम है और वह है अवैज्ञानिक, अतार्किक, अधंविश्वासों का। अंध विश्वासों का न कोई दार्शनिक आधार होता है न वैज्ञानिक। फलित ज्योतिष, तथाकथित वास्तु शास्त्र, दिशा शूल, मनोकामना पूर्ति हेतु किये जाने वाले यज्ञ, गंडे, ताबीज, जारण–मारणादिक वाम तंत्र, भांति भांति के चमत्कारों पर विश्वास आदि ऐसे क्षेत्र हैं जो सभी समाजों में प्राचीन काल से फैले हुए हैं और आज जब हम ऐसा समझते हैं कि हम वैज्ञानिक दृष्टिकोण से बहुत प्रगत काल में है तब भी इस प्रकार की अंधविश्वासी मान्यताओं में कोई कमी आई हो ऐसा नहीं दिखाई पड़ता। यह स्वाभाविक भी है। जब किसी व्यक्ति पर कोई मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ता है तो वह येन केन प्रकारेण उससे छुटकारा चाहता है। यदि किसी को असाध्य रोग हो जाये तो वह डाक्टर से चिकित्सा तो करायेगा पर साथ ही ज्योतिषी, तांत्रिक, मांत्रिक, फकीर, साधु के भी उपाय करायेगा। उसे तो रोगमुक्त होना है, चाहे जैसे हो। यह सामान्य स्वाभाविक प्रवृत्ति तो है पर सबसे मनोरंजक तथ्य यह है कि इस प्रकार के अंध विश्वासों का व्यापार करने वाले तथा भोली भाली जनता को शिकार बनाने वाले लोग वैज्ञानिक शोध से निर्मित तकनीकों का प्रयोग भी जम कर करते हैं। ईश्वर की भक्ति का व्यवसाय करने वाले प्रवचनकारों को वातानुकूलित रहने तथा यात्रा की सुविधाएँ चाहिए। कुंडली द्वारा भविष्य बताने वाले ज्योतिषी कम्प्यूटर का प्रयोग बड़ी शान से करते हैं। ऑपरेशन द्वारा अपने इच्छित समय पर बच्चे का जन्म कराने की तकनीक है तो वह जन्म का समय ज्योतिषी से पूछ कर निर्धारित किया जाता है। कुछ मामूली से हाथ की सफाई के जादूगरी या कुछ साधारण से वैज्ञानिक प्रयोगों को अपनी सिद्धि के चमत्कार बता कर जनता को ठगने वाले महात्माओं, तथाकथित सन्तों या बाबाओं का धन्धा भी जनसामान्य की इसी अवैज्ञानिक, अनाध्यात्मिक और इसीलिये वास्तविक अर्थों में अधार्मिक अंध श्रद्धा के कारण खूब फलता फलता रहता है। सामान्य जन इस बात को समझ ही नहीं पाते कि वैज्ञानिक सिद्धान्तों के द्वारा जो नई तकनीकें आई हैं उन्हीं का दुरुपयोग अवैज्ञानिक बातों के लिये हो रहा है।

इस प्रकार एक दो नहीं जीवन के सभी क्षेत्रों में हम यह देख रहे हैं कि हम वैज्ञानिक शोध से प्राप्त तकनीकें तो स्वीकार कर लेते हैं पर उनके पीछे के वैज्ञानिक चिंतन को अस्वीकार कर देते हैं। यदि ऐसा न होता तो ये अंधविश्वास हमारी संस्कृति का अंग न बनते। आज आवश्यकता है वैज्ञानिक संस्कृति के प्रचार–प्रसार की। जिस प्रकार तथाकथित धार्मिक संस्कृति के प्रचार के लिये प्रवचनकारों के कार्यक्रम होते हैं, सप्ताह होते हैं वैसे ही वैज्ञानिक संस्कृति के प्रचारकों का समाज के हर स्तर पर चिंतन तथा वैचारिक विनियम करना आवश्यक है। विज्ञान का अर्थ केवल तकनीकों का विकास ही नहीं है वैज्ञानिक चिंतन भी हैं, यह समाज–मन को समझाना हम सभी का दायित्व है।

संदर्भ

1 ऐडम, एफ डी, 1938 द बर्थ ऍण्ड डेवलपमेंट ऑफ जियॉलॉजिकल साइंजेस, डोबर पब्लिकेशन्स, न्यू यॉर्क, 506 पृ. (1954 में पुनः प्रकाशित)

2 होम्स, ए, 1965, प्रिंसिपल्स ऑफ फीजिकल जियॉलॉजी, ई एल बी एस, लंडन, 1280 पृ.

भू–विज्ञान विभाग,
डी.बी.एस. महाविद्यालय, देहरादून

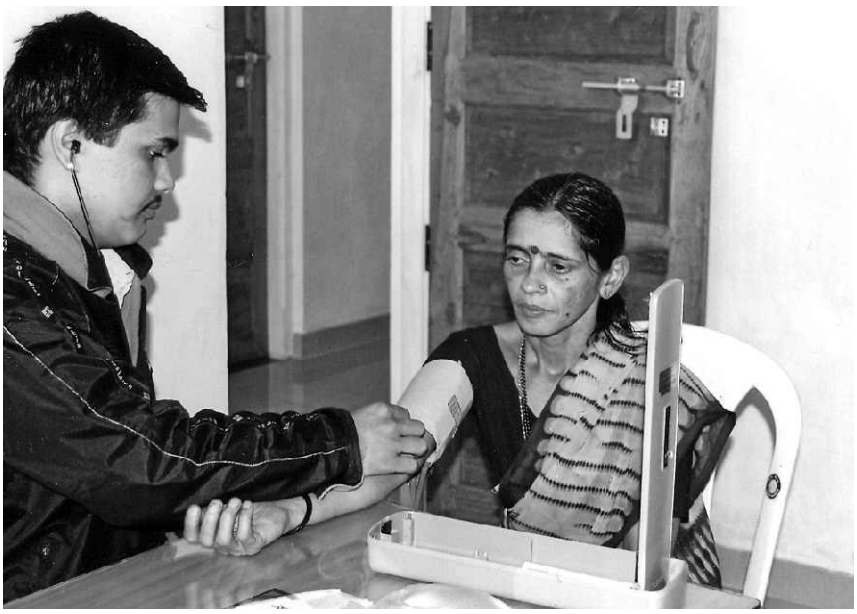

चिकित्सा प्रौद्योगिकी का कृष्ण पक्ष

पुरूषोत्तम उपाध्याय

चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में होने वाली नई नई खोजों, तकनीकों तथा उपकरणों का महत्व भला कौन नकार सकता है? अल्ट्रासोनोग्राफी, सी.टी., एम.आर.आई. या रेडियो आइसोटोप स्कैनिंग जैसी विधियों का अलग से उल्लेख करने की कोई आवश्यकता नहीं है। शरीर को कम से कम हानि पहुँचाने वाली शल्य क्रिया (ऑपरेशन) की नई नई तकनीकों जैसी एण्डोस्कोपी, लेसर किरणों या गामा चाकू की भी मैं बात नहीं कर रहा हूँ। जैसे कोई धार्मिक उपदेशक शराब की बुराईयों का वर्णन करने से पूर्व पीने के सुख का वर्णन नहीं करता वैसे ही मुझे इन तकनीकों का गुण वर्णन करने की यहाँ कोई जरूरत नहीं है। मैं तो सीधे अपने मुद्दे पर आता हूँ कि चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र की इस प्रौद्योगिक उन्नति का हानिकारक या ऋणात्मक स्वरूप कैसा है जिसकी तरफ अब तक समाज का विशेष ध्यान नहीं गया है। मेरा पक्का मानना है कि इन नवीनतम प्रौद्योगिक उपलब्धियों की चकाचौंध में हम इनका उपयोग करने वाले चिकित्सकों के व्यवहार पर पड़ने वाले इनके दुष्प्रभावों को नही देख पा रहे हैं।

यह कोई बहुत पुरानी बात नहीं है जब चिकित्सक रोगी से उसका हालचाल जानने के लिये उससे प्रेम से चर्चा करता था या सिर से पांव तक उसकी जांच करता था। अब वह जमाना गया। अब तो डॉक्टर केवल जांच रिपोर्टों पर ही निर्भर रहते हैं इसलिए मरीज के साथ समय बिताने की कोई जरूरत नहीं समझते। अलग अलग प्रकार की मशीनों द्वारा की जाने वाली जांच का महत्व इतना बढ़ गया है कि चिकित्सक बस इन रिपोर्टों को देख लेते हैं और उपचार लिख देते हैं। इस प्रकार डॉक्टर और रोगी के बीच परस्पर विश्वास का कोई सम्बन्ध बन ही नहीं पाता; वह तो जाँच रिपोर्टों के कागजों में ही दफन हो जाता है। इन मामलों में गंडा–ताबीज बांटने वाले, मंत्र–तंत्र या जादू–टोना करने वाले या उल्टी सीधी दवाएँ देने वाले झोला छाप डॉक्टर हमसे बाजी मार ले जाते है। वे रोगियों से बाते करते हैं, उनसे प्रेम और विश्वास का सम्बन्ध बढ़ाते हैं तथा इस प्रकार रोगी का वह भरोसा प्राप्त कर लेते हैं जो मानसिक रूप से जल्दी ठीक होने में उनकी मदद करता है। इसलिये इस बात में कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिये कि आज केवल भारत में ही नहीं बल्कि सारे संसार के तमाम देशों में, जिनमें आर्थिक दृष्टि से विकसित देश भी शामिल हैं, अधिक से अधिक लोग इन तांत्रिकों–मांत्रिकों के पास जाने लगे हैं क्योंकि वे रोगी को वह चीज देते हैं जो हम डॉक्टरों ने भुला दी है अर्थात, समय और रोगी की बातें सुनने की आवश्यकता।

मैं उन लोगों में से एक नहीं हूँ जिन्हे लगता है कि रोग निदान की इन आधुनिकतम मशीनों के कारण डॉक्टरों की अपनी व्यक्तिगत चिकित्सकीय बुद्धिमत्ता में कमी आ गई है। लेकिन मैं यह जरूर मानता हूँ कि अब आज के चिकित्सकों ने अपनी व्यक्तिगत क्षमता तथा सूझ–बूझ के स्थान पर इन उपकरणों से प्राप्त जाँच के निष्कर्षों पर पूर्ण रूप से निर्भर रहना अवश्य प्रारम्भ कर दिया है। आज के रोगी भी डॉक्टर की बुद्धि के स्थान पर भाँति भाँति की जांच रिपोर्टों को ही अधिक महत्वपूर्ण और विश्वसनीय मानने लगे हैं। यह प्रवृत्ति यहाँ तक बढ़ गई है कि कई लोग डॉक्टर के बिना परामर्श के ही स्वयं अपने से ही अल्ट्रासाउण्ड या सीटी करा लेते हैं, भले ही इन जाँचों की जरूरत हो या न हो। फलस्वरूप अपने लिये अनावश्यक रूप से चिन्ताएँ मोल ले लेते हैं, फालतू खर्च होता है वह अलग। दुर्भाग्य से हम डॉक्टर भी इस प्रवृत्ति को रोकने या हतोत्साहित करने का कोई प्रयास नहीं करते। इस प्रकार की अनेक मशीनी जाँचों के कई बार दुष्प्रभाव भी होते हैं पर हम उन्हें लोगों को कभी नहीं बताते।

वास्तव में ये मशीनी जांचें रोग निदान की पूरी प्रक्रिया का एक हिस्सा हैं। वे अपने में पूरा रोग निदान नहीं हैं। कितना भी आधुनिकतम जाँच उपकरण क्यों न हो वह चिकित्सक की अपनी बुद्धिमत्ता, योग्यता और अनुभव का स्थान नहीं ले सकता।

इस पूरी चिकित्सा प्रौद्योगिकी का सबसे घिनौना रूप है पूरे चिकित्सा क्षेत्र का व्यापारीकरण। इसका एक ज्वलन्त उदाहरण है डाउ कॉर्निंग नामक कम्पनी द्वारा निर्मित सिलिकॉन जेल से बने कृत्रिम स्तन लगाने की तकनीक। नई तकनीक तो विकसित हो गई पर इसका उपयोग कहाँ हो। अर्थात 'उपचार' तो खोज लिया, अब उसके लिय 'रोग' खोजना जरूरी था। तो अमेरिका के शल्य चिकित्सकों ने रोग भी खोजा जिसका नाम रखा 'माइक्रोमैस्टिआ'। इस वैज्ञानिक से लगने वाले शब्द का अर्थ है छोटे स्तन। स्तनों के छोटे होने से शारीरिक या कार्य की दृष्टि से कोई फर्क नहीं पड़ता पर सागर के तट पर किसी सुन्दर बीच पर खुले बदन बैठने पर देह प्रदर्शन के लिये ऐसे स्तन किस काम के? इसी कारण से अमेरिका के प्लास्टिक सर्जनों तथा नूतन अंग निर्माण का व्यवसाय करने वाले चिकित्सकों ने एक जबर्दस्त प्रचार अभियान

चलाया जिससे महिलाएँ अपने स्तनों का आकार बड़ा बनाने के लिये खिंची चली आयें। केवल दस वर्ष की अवधि में बीस लाख से अधिक महिलाओं ने ये कृत्रिम स्तन लगाने के ऑपरेशन करवा लिये, किसी बीमारी के कारण नहीं बल्कि महज इसलिये कि अमेरिकी पुरूषों को बड़े स्तन अधिक आकर्षित करते हैं। लेकिन कुछ समय बाद पता चला कि ये कृत्रिम स्तन स्वास्थ्य के लिये खतरनाक हैं क्योंकि बच्चे के लिए दूध पाने में और यदि कैंसर हो जाय तो उसे पता लगाने में अड़चनें आने लगीं। कुछ महिलाओं में तो ल्यूपस और स्क्लेरोडर्मा जैसी जटिलताएँ भी मिलीं। जिसे एक मामूली, हानिरहित विधि माना जाता था वह एक गम्भीर स्वास्थ्य समस्या बन गई। अंत में कानून हरकत में आया। इस निरर्थक दुस्साहस के शिकार लोगों को लाखों डालर भरपाई के रूप में देने पड़े और डाउ कॉर्निंग कम्पनी दिवालिया हो गई।

बहुत बड़े और जटिल तकनीकों से बने यन्त्र महंगे भी खूब होते हैं। स्वाभाविक रूप से इन्हें बनाने के लिये जो भी पैसा लगायेगा वह उनके उपयोग द्वारा तुरन्त पैसा कमाना भी चाहेगा। न केवल अपना लगाया हुआ पैसा लाभ सहित वापस पाने के लिये बल्कि और महंगे और जटिल नूतनतम उपकरण बनवाने के लिये भी उसे पैसा प्राप्त करना ही पड़ेगा। इस प्रकार रोग निदान के ये उपकरण रोग निदान के कम धन अर्जन के अधिक काम आते हैं। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि छोटे छोटे कस्बों में भी अल्ट्रासाउण्ड मशीनें लगी हुई हैं। गर्भ लिंग परीक्षण कानूनन मना होते हुए भी धड़ल्ले से हो रहा है और कन्या गर्भ समापन चल रहा है। अनावश्यक जाँचों को करवाने तथा फालतू ऑपरेशन करने का अनैतिक व्यवसाय खूब फल फूल रहा है। ऊपर से कमीशन के धंधे ने चिकित्सा व्यवसाय का गन्दा बाजारीकरण कर दिया है। मनुष्य की बीमारी और कष्ट चिकित्सकों के लिए कारूं का खजाना बन गये हैं। धन और यन्त्रों ने चिकित्सा क्षेत्र को रोगों और दुःखों से मुक्त कराने के उदात्त आसन से भौतिक सुख सुविधाएँ येन केन प्रकारेण अर्जित करने के रसातल में गिरा दिया है। एक सात्विक पेशा तामसिक धंधा बन गयाहै। चरक ने 2500 वर्ष पूर्व चिकित्सकों के लिए एक आचार संहिता बताई थी। उन्हें अपना व्यवसाय प्रारम्भ करने से पूर्व निम्न शपथ लेनी पड़ती थी।

'मैं अपने स्वार्थ के लिये नहीं, किसी सांसारिक इच्छा की पूर्ति के लिये नहीं, केवल दुःखी मानवता की सेवा के लिये अपने ज्ञान का उपयोग अपनी पूर्ण योग्यता और कुशलता के साथ करूंगा। जो रोगों के उपचार को व्यापारी की तरह बेचते हैं वे सोने को त्याग कर मिट्टी ही उठाते है।'

उच्च प्रौद्योगिकी के विकास के साथ साथ चिकित्सा का क्षेत्र अमानवीय तो नहीं पर अव्यक्तिगत जरूर होता जा रहा है। अनेक तकनीकी विधियाँ जैसे लेप्रोस्कोपी द्वारा पित्ताशय की पथरी निकालने, लिथोट्रिप्सी द्वारा गुर्दे की पथरी का चूरा कर देने या एंजियोप्लास्टी द्वारा हृदय से सम्बन्धित रक्त नलिकाओं को खोलने के ऑपरेशन चिकित्सा की जरूरतों की दृष्टि से कम और ऑपरेशन की अपनी बहादुरी और एक महान शल्य चिकित्सक होने की चमक दिखाने के लिये अधिक किये जा रहे हैं। फल यह हो रहा है कि ऑपरेशन के पारंपरिक तरीके, जो कम खर्चीले थे और गरीबों के लिये अधिक सुविधाजनक थे, अब भुला दिये जा रहे हैं। तकनीकों की इस शानदार चमक से चौंधियाये हुए हम इस बात का अधिक विचार ही नहीं करते कि पथरी बने ही नहीं या खून की नलियाँ जाम हों ही नहीं इसके उपाय क्या होने चाहिए? हम सोचते ही नहीं कि मानसिक चिन्ता, तनाव या आर्थिक समस्याएँ किसी शारीरिक रोग को बढ़ाने के लिए कितने जिम्मेदार होते हैं। सी.टी. द्वारा हड्डी की टी.बी. का पता आसानी से लगाया जा सकता है। इस बात पर हम अपने को खूब शाबाशी तो दे लेते हैं लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि मूलतः यह रोग हुआ ही क्यों। इसको जानना ओर परिवार के अन्य लोगों की जांच कर लेना भी हमारी ही जिम्मेदारी है। बड़े दुःख की बात है कि प्रौद्योगिकी ने मानव के कष्ट को केवल किसी अंग के रोग में बदल कर रख दिया है। हम यह भूल गये हैं कि बीमारी मनुष्य को समग्र रूप से प्रभावित करती है। हम स्वास्थ्य के उन्नायक न हो कर रोग के व्यापारी बन गये हैं। स्वास्थ्य के प्रति समग्रतापूर्ण विचार करना समय भी लेता है और धन के रूप में लाभदायक भी नहीं है। फलस्वरूप यह काम योग सिखाने वालों, जप–तप करवाने वालों या पारंपरिक औषधि प्रणाली वालों के लिये छोड़ दिया गया है।

चिकित्सा प्रौद्योगिकी का एक और कृष्ण पक्ष है गरीब जनता की अनदेखी। अत्यन्त महंगी मशीनी जांच विधियाँ केवल उनके काम आती हैं जिनके पास खर्च करने के लिये बहुत पैसा होता है। उन गरीबों का क्या जो भारत की जनसंख्या का एक बहुत विशाल भाग हैं? वे इस महान वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रौद्यागिक चिकित्सा सेवा से पूरी तरह वंचित ही रहते हैं। क्या यह समाज की और चिकित्सकों की जिम्मेदारी नहीं है कि वे ऐसे जनसामान्य को पुरानी और समय की कसौटी पर कसी हुई जांच और उपचार पद्धति का लाभ प्राप्त कराते रहें जिससे गरीब भी लाभान्वित हो सकें।

आधुनिक चिकित्सा प्रौद्योगिकी ने हमें उपचार करने और हानि पहुँचाने दोनों की अदभुत शक्ति प्रदान की है। हमें सावधान रहना है कि इस शक्ति का दुरुपयोग न हो। हमें इस शक्ति की महान् क्षमताओं से लाभान्वित तो होना है परन्तु सतर्क रहना है कि यह हमें बिगाड़ न दे। शक्ति हमारी सेवा में रहनी चाहिये, हमें उसका गुलाम नहीं बनना है। हमारी दैनंदिन उपचार सेवा में प्रौद्योगिकी के कृष्ण पक्ष को सतत ध्यान में रखना होगा। इसके अंधकार से अपने को बाहर रखने के लिये निरंतर प्रयत्नशील बने रहना होगा, नहीं तो यह हमें ही लील जायेगा।

सेवानिवृत्त प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, बाल शल्य क्रिया विभाग, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली, सम्मान्य प्राध्यापक, हिमालय इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल सांइसेज, देहरादून

मूल अंग्रेजी आलेख का हिंदी रूपान्तरण : मुकुन्द नीलकण्ठ जोशी

'आज संसार की महान् समस्या यह है कि राजनीतिज्ञ और सैनिक अधिकारी विज्ञान पर हावी हैं और विज्ञानवेत्ता सरकार की पूंछ पकड़ कर चलने पर विवश हैं। परन्तु इस अणु युग में हमें मनुष्य की आध्यात्मिकता से नई शक्ति और सुरक्षा प्राप्त करनी होगी। विज्ञान और आध्यात्मिकता के सामंजस्य द्वारा ही हम दुनिया को उस मुसीबत से उबार सकते हैं जिसमें उसे राजनीतिज्ञों और सेनाओं ने - सत्य की खोज में निरत वैज्ञानिकों ने नहीं - डाल रखा है।'

जवाहरलाल नेहरु
भारती (भारतीय विद्या भवन पत्रिका, दिसम्बर, 1958 से)

विद्युत चुम्बकीय तंरगों के जैविक प्रभाव

श्रीराम वर्मा

आदिकाल से मानव पृथ्वी पर प्राकृतिक विकिरण जैसे कोस्मिक किरणें, ब्रह्माण्ड, गैलेक्सी एवं सूर्य से आने वाले विकिरण, जिनमे पराबैंगनी (अल्ट्रावाइलेट) किरणें भी शामिल हैं, से प्रभावित रहा है। विज्ञान के विभिन्न आयाम तथा तकनीकी के विभिन्न रूप, आज की जीवन शैली के आवश्यक अंग बन गये हैं। आधुनिक जीवन शैली, जो मानव कृत उपकरणों की सुविधा भोगी हो गई है, नये नये जोखिम की सम्भावनाओं को आमंत्रण भी देती है। बहुत सारे जीवनोपयोगी उपकरण जैसे सेल फोन, माइक्रोवेव टावर, उपग्रहीत लिंक, टी.वी. आदि विद्युत चुम्बकीय तंरगों का उत्सर्जन करते हैं। विद्युत चुम्बकीय तरंगें जहाँ एक ओर वरदान सिद्ध हुईं वहीं इनके

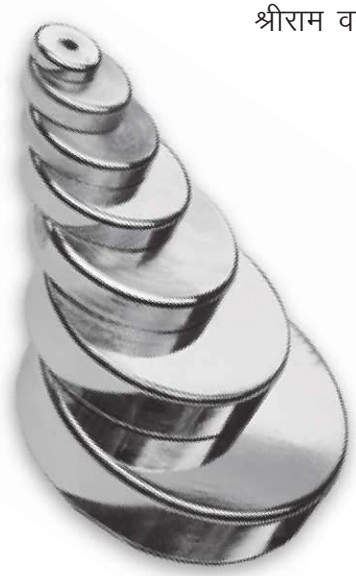

विनाशकारी प्रभाव भी देखने में आये हैं। इस क्षेत्र में शोध के अनुसार ज्यादा समय तथा अनुज्ञेय सीमा से ज्यादा मात्रा ग्रहण करने पर अनचाहे विद्युत चुम्बकीय विकिरण से मस्तिष्क का विकास बाधित होता है जिसका असर हर उम्र के व्यक्ति पर पड़ता है किन्तु बच्चों पर इनका ज्यादा प्रभाव देखा गया है। बच्चों पर इन विकिरणों का प्रभाव कई तरह से नजर आता है जैसे बड़े होने पर गुस्सैल होना, आत्मविश्वास की कमी या फिर हाथ–पैर में कम्पन। इन विकिरणों के आनुवांशिक प्रभाव भी देखे गये हैं। जैसे–जैसे विकिरण संसूचकों का विकास हुआ वैसे वैसे विद्युत चुम्बकीय विकिरणों के विनाशकारी प्रभाव की ज्यादा जानकारी प्राप्त हुई। इन विकिरणों के विनाशकारी प्रभाव को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। एक प्रकार के विकिरण प्रभाव अप्रत्यक्ष (स्टॉकेस्टिक) प्रभाव कहलाते हैं तथा दूसरे प्रकार के प्रत्यक्ष (नॉन–स्टॉकेस्टिक)। विकिरण के हानिकारी प्रभावों से बचने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक संस्थाओं द्वारा विकिरण प्राप्त करने की अधिकतम अनुज्ञेय सीमा (पर्मिसिबल लिमिट) निर्धारित कर दी गई।

बदलती अनुज्ञेय सीमाएँ

तालिका–1

वर्ष		सीमा एवं घटना
1896	–	वैज्ञानिक रौन्जन ने क्ष–किरण का आविष्कार किया।
1896–1901	–	क्ष–किरण से हुई दुर्घटनाओं की जानकारी हुई।
1925	–	उद्भासन (एक्स्पोजर) को सीमित रखने की आवश्यकता महसूस हुई। अतः सहने योग्य मात्रा की विचार धारा अपनाई गई। संसूचक उपलब्ध न होने के कारण यह मात्रा वह थी जिसके प्राप्त होने पर बिना शारीरिक कष्ट के उसे सहा जा सके।
1928	–	संसूचकों की उपलब्धि के बाद इसका मान 100 आर (रैम) या 1 सीवर्ट निश्चित किया गया ।
1934	–	और घटनाओं की जानकारी पर इसे घटाकर 60 आर (रैम) या 1 सीवर्ट कर दिया गया।
1950	–	घटाकर 0.3 आर (रैम) या 0.003 सीवर्ट प्रति सप्ताह या 15 आर (रैम) या 1.5 सीवर्ट प्रति वर्ष किया गया।
1956	–	सहने योग्य की विचारधारा अधिकतम अनुज्ञेय सीमा में बदली क्योंकि सहने योग्य मात्रा से भी क्षति हो सकती थी।
1958	–	अधिकतम अनुज्ञेय सीमा 0.5 आर (रैम) या 0.005 सीवर्ट निश्चित की गई। इसके साथ यह विचारधारा थी कि यदि प्रत्येक वर्ष 5 रैम से कम विकिरण मिलता है तो बाकी का विकिरण अगले वर्षों में निम्न सूत्र के अनुसार प्राप्त कर सकते हैं। 'क' उम्र तक प्राप्त की जानेवाली कुल मात्रा = 5 (क–18) रैम, उदाहरण के लिये यदि किसी ने 18 वर्ष की आयु से 24 वर्ष की आयु तक केवल 28 रैम की मात्रा प्राप्त की है, तो वह 25 वें वर्ष में इस सूत्र के हिसाब से 5(25–18) = 35 रैम तक की मात्रा प्राप्त कर सकता था।
1966	–	सूत्र 5 (क–18) हटा दिया गया। इस कारण अब किसी वर्ष बची मात्रा अगले वर्षों में ली जा सकती थी।
1973	–	प्रयास ऐसे होने चाहिये कि प्रत्येक 5 रैम से कम–से–कम जितना सम्भव हो, विकिरण कार्मिक को विकिरण प्राप्त करना चाहिये और जन साधारण के लिये सीमा 0.5 रैम या 0.005 सीवर्ट प्रति वर्ष रखी गई।
1991 से अब तक	–	अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सी द्वारा निर्धारित : 50 मिली सीवर्ट प्रति वर्ष तथा 5 वर्ष में 100 मिली सीवर्ट। भारत में 5 वर्ष ब्लॉक के किसी एक केलेण्डर वर्ष में 30 मिली सीवर्ट (जन साधारण के लिये 0.1 मिली सीवर्ट प्रति वर्ष)

रसायनों एवं विकिरण के प्रभाव की पारस्परिक तुलना

तालिका–2

यौगिक	तुल्य विकिरण मात्रा
ईथाइलीन आक्साइड–50 पीपीएम / 40घंटे (अधिकतम सीमा कार्य क्षेत्र में)	0.4 सीवर्ट प्रति वर्ष
सोडियम नाइट्राइट (वर्तमान खपत दर)	0.08 सीवर्ट प्रति पीढ़ी
सभी रासायनिक प्रदूषक (कैंसर पैदा करने हेतु)	0.04–0.18 सीवर्ट प्रति वर्ष
विद्युत चुम्बकीय तंरगों का जैविक प्रभाव विकिरण की आवृत्ति तथा एक्सपोजर लेवल पर निर्भर करता है।	

विद्युत चुम्बकीय तरंग तथा जैविक अणु

अब तक जो शोध आँकड़े उपलब्ध हैं वे विद्युत चुम्बकीय तंरग तथा जैविक अणुओं की पारस्परिक अंतः क्रिया में सम्बन्ध स्पष्ट करते हैं किन्तु उनकी मेकेनिज्म पूर्णतया ज्ञात नहीं है। मानवीय जैविक व्यवस्था भी अपने आप में इलैक्ट्रोकेमिकल बायो मशीन की तरह है। हमारा पर्यावरण भी विद्युत चुम्बकीय व्यवस्था के विभिन्न आयामों का समूह मात्र है। अतः इन दोनों का पारस्परिक क्रिया प्रतिक्रिया करना स्वाभाविक है। विद्युत चुम्बकीय तंरगों के जैविक प्रभाव सही प्रकार से तथा पूर्णतया समझने में एक कठिनाई यह है कि सामान्यतया आणविक जैविक विशेषज्ञ विद्युत चुम्बकीय तरंगों के विशेषज्ञ नहीं होते। यही बात भौतिक विद् के साथ भी सत्य है किन्तु विद्युत चुम्बकीय प्रभाव का जैविक प्रभाव के सभी आयामों को पूर्णरूपेण समझने के लिये ये संगम जरूरी है।

विद्युत चुम्बकीय विकिरण, जैविक अणु जैसे डी.एन.ए. तथा प्रोटीन से सीधे अंतः क्रिया करते हैं। यह विकिरण अप्रत्यक्ष रूप से भी जैविक और रासायनिक अणु को प्रभावित करता है तथा डी.एन.ए. को विकृत कर सकता है और कैंसर का कारण बन सकता है। जैविक अणु और जैविक सेल अपनी मरम्मत खुद करते हैं फिर भी अगर नुकसान मरम्मत की क्षमता से ज्यादा हो तो ट्यूमर या कैंसर हो सकता है। बीस अरब डॉलर की संचार प्रौद्योगिकी ने कितने कैंसर के मरीजों को चिन्हित किया है ये शोध का विषय हो सकता है किन्तु अत्यधिक प्रयोग और बदलती जीवन शैली के कारण मानव सभ्यता पर विभिन्न अनचाही बीमारियाँ जैसे आँख मे मोतियाबिन्दु होना, अवसाद के लक्षण, कैंसर होना तथा आनुवांशिक विकृति, नीद न आना जैसे खतरे मंडराने लगे हैं।

मोबाइल बेस स्टेशन से जुड़े स्वास्थ्य की चर्चा करना उपयुक्त होगा। आधुनिक शोध बताते हैं कि सेल टावर विकिरण स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। दो तरह के सैलटावर प्रयोग किये जाते हैं। 1. एनालॉग सैल टावर जो एफ.एम.आर.एफ. / एम.डब्लू सिग्नल प्रयोग करते हैं तथा 2. डिजिटल टावर जो माइक्रो वेव प्रयोग करते हैं। एफ.एम. सिग्नल और माइक्रोवेव सिग्नल के सम्पर्क में लगातार रहने से ब्रेन कैंसर, हृदय रोग, मानसिक तनाव आदि जैसे खतरे पैदा हो जाते हैं।

वर्षों से सेल कम्पनियाँ और सरकारी प्रशासन हमें आश्वस्त करते रहे हैं कि सेल टावर्स पूर्णतया सुरक्षित हैं किन्तु वैज्ञानिक शोध इन आश्वासनों के विपरीत निष्कर्ष देते हैं। यहाँ कुछ वैज्ञानिक शोध उल्लिखित हैं–

1. मस्तिष्क क्रिया कलापों में परिवर्तन – बोनक्लिजिग (1996), क्रूस तथा अन्य (2000)
2. निद्रा में व्यवधान – बोडले व अन्य (1996)
3. कमजोरी तथा रक्तचाप में बदलाव (1997)
4. याददाश्त तथा एकाग्रता में कमी, सरदर्द – होकिंग (1998)
5. शुक्राणुओं की संख्या में कमी – डासडेस तथा अन्य (1999)
6. डी.एन.ए. में विकृति – फिलिप्स तथा अन्य (1998)
7. कैंसर की सम्भावनायें – बुच तथा अन्य (1998)
8. ब्रेन ट्यूमर – हरडैल (1999)

सेलटावर का हानिकारक प्रभाव 250 मीटर से लेकर 300 मीटर तक प्रभावी होता है। मोबाइल फोन 800–900 मेगाहर्ज की आवृत्ति की विद्युत चुम्बकीय तंरगों का उत्सर्जन करता है। इसका ज्यादा प्रयोग स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

विकिरण संरक्षण के सामान्य सिद्धान्त के अन्तर्गत मूलतः तीन प्रकार से विकिरण संरक्षण किया जा सकता है।

1 स्रोत से जितनी दूरी सम्भव हो उतनी दूर रहकर।

2 स्रोत के पास कम–से–कम समय व्यतीत करके।

3 अवरोधक (बैरियर) का प्रयोग करके।

आटोमोबाइल तथा अन्य उद्योग धन्धों से होने वाले प्रदूषण से बचने के सरकार ने नियम और अधिनियम बनाये हैं, वैसे ही विद्युत चुम्बकीय तंरगों द्वारा होने वाले प्रदूषण रोकने के लिये भी नियम तथा अधिनियम बनाने चाहिये।

कुछ परिभाषाएँ

ऊर्जा की इकाई – जूल और अर्ग..... 10000000 अर्ग = 1.0 जूल

100 अर्ग प्रति ग्राम अवशोषित ऊर्जा = 1.0 रैम

100 रैम = 1.0 सीवर्ट

1000 मिली सीवर्ट = 1.0 सीवर्ट

विघटन

किसी स्थिर परमाणु के नाभिक में न्यूट्रॉन व प्रोटॉन का एक खास अनुपात जब अलग होता है, तो परमाणु अस्थिर हो जाता है, फिर स्थिर अवस्था में आने के लिये या तो न्यूट्रोन टूटता है जिससे प्रोटॉन की संख्या बढ़ती है और इलैक्ट्रोन (इसे बीटा किरण कहते हैं) नाभिक से बाहर निकलता है या फिर नाभिक से दो प्रोटोन व दो न्यूट्रॉन साथ–साथ (इसे अल्फा किरण कहते हैं) बाहर निकलते हैं। इन किरणों के निर्गत होने पर परमाणु उत्तेजित अवस्था (एक्साइटेड स्टेट) में होता है। उत्तेजित अवस्था से शान्त या मूल अवस्था (ग्राउण्ड स्टेट) में आने पर गामा किरणें निर्गत होती हैं। इस प्रक्रिया को विघटन कहते हैं।

1.0 विघटन प्रति सैकण्ड = 1.0 बैकेरल

37000000000 विघटन प्रति सैकण्ड = 1.0 क्यूरी = 1000 मिली क्यूरी

विखण्डन

जब अस्थिर परमाणु का नाभिक दो नाभिकों में टूटता है तो उस प्रक्रिया को विखण्डन कहते हैं।

भौतिक विज्ञान विभाग, डी.बी.एस. महाविद्यालय, देहरादून

अब जंगली खरपतवार से प्राप्त सुगंधित तेल भी बनेंगे आर्थिकी के साधन

आदित्य कुमार

महर्षि चरक ने कहा है–

''नानौषधिभूतम् जगत् किंचिद् द्रव्यमुपलभ्यते'' (चरक सूत्र संहिता 26/12)

अर्थात इस संसार में कोई भी वस्तु बिना औषधीय गुणों के नहीं है। महर्षि चरक का यह कथन देव भूमि उत्तराखंड के लिए पूर्णतः सत्य है क्योंकि राज्य में पायी जाने वाली अधिकांश वनस्पतियां अपने भीतर चमत्कारिक रूप से रोग नाशक गुणों को धारण किये हुए हैं। उत्तराखण्ड में मूल्यवान जंगली सगंध खरपतवारों की प्रचुर मात्रा प्राकृतिक रूप से उपलब्ध है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए राज्य सरकार के संस्थान सगंध पौधा केन्द्र सेलाकुई में वनों तथा अप्रयोज्य भूमि में उगने वाली बेकार पड़ी सुगंधित खरपतवारों के आसवन के लिए अनुसंधान एवं विकास कार्यों की शुरूआत की गई।

राज्य के अलग–अलग क्षेत्रों से खरपतवारों का एकत्रीकरण किया गया और विभिन्न क्लस्टरों में स्थापित व्यावसायिक आसवन संयंत्रों में जलवाष्प आसवन तकनीक द्वारा इन प्रजातियों का आसवन किया गया। इन सगंध वन्य पादपों के व्यावसायिक महत्व को जानने के लिए उनका वैज्ञानिक विश्लेषण किया गया जिसके परिणाम अत्यधिक उत्साह वर्धक आये। इन प्रयोगों के आधार पर विभिन्न उद्योगों में उपरोक्त तेलों की मांग के अनुरूप आपूर्ति की जा सकती है तथा इस प्रकार जंगली खरपतवार भी राज्य के कृषकों के लिए अतिरिक्त आय का जरिया बन सकती है।

यह अभियान उत्तराखण्ड़ में फैले आसवन संयंत्रों के प्रसार कर्मचारियों और सगंध पादप केन्द्र से जुड़े हुए किसानों के अथक प्रयासों एवं अनुसंधान एवं विकास टीम के मार्गदर्शन द्वारा सम्भव हुआ। जिन प्रमुख खरपतवारों का विश्लेषण किया गया वे निम्नवत् हैं–

आर्टिमिसिया मैरिटिमाः–आर्टिमिसिया मैरिटिमा का, जो कि सेजब्रश या वार्मवुड के नाम से प्रचलित है, एकत्रीकरण चमोली जिले के 2600 मी. ऊचाई पर स्थित झेलम क्षेत्र से किया गया। इन पादपों के सुखाए गये वायवीय भागों से प्राप्त पीले रंग के तेल का जी.सी (गैस क्रोमेटोग्राफी) एवं जी.सी.एम.एस. (गैस क्रोमेटोग्राफी मास स्पेक्ट्रोमीटर) विधि द्वारा विश्लेषण किया गया। प्राप्त तेल का प्रतिशत सूखे उत्पाद के भार का 0.5% पाया गया। कुल 46 यौगिकों की पहचान की गई जो कि 93.5% तेल का प्रतिनिधित्व करते है। इस सुगंधित तेल में प्रमुख यौगिक क्रिसेनथेनॉन (25.7%), 1–8 सिनेओल (36.6%), जर्माक्रीन–डी (6.1%), आइसोबोर्निओल (4.3%), सेबिनीन (2.1%), –यूजोन (1.9%), ठ–यूजोन (0.5%), ट्रान्स सेबिनीन हाइड्रेट (0.5%) भी पाए गए।

आर्टिमिसिया वलगेरिसः–आर्टिमिसिया वल्गेरिस का एकत्रीकरण उत्तरणखण्ड के श्रीनगर से किया गया। इसके पीले रंग के तेल को जल–आसवन प्रक्रिया द्वारा क्लीवेंजर उपकरण के प्रयोग से प्राप्त करने के उपरान्त जी.सी. विधि विश्लेषण किया गया। इस तेल के मुख्य घटक एल्फा–थूजोन (34.4%), बीटा–थूजोन (5.4%), जर्माक्रीन–डी (4.9%), कैर्योफिलीन 83.5%), 1,8–सिनेओल (3.5%) एवं गौण घटक बीटा–यूडेसमोल (2.7%), बीटा–माइरसीन (2.5%) सेबिनीन (2.4%), कैम्फर (2.3%) एवं टार्पिनीन –4–ऑल (2.3%) पाये गये।

क्यूप्रेसस टोरूलोसाः–सामान्यतया सुरई नाम से प्रचलित क्यूप्रेसस टोरूलोसा की पत्तियों का एकत्रीकरण देहरादून से किया गया। इस सुगंधित तेल को प्रक्षेत्र आसवन संयंत्र से जलवाष्प आसवन प्रक्रिया द्वारा प्राप्त किया गया। इस तेल का रंग भूरा तथा दिखने में तरल होता है। इसमें मुख्य घटक सेबिनीन (24.5%), एल्फा–पाईनीन (16.6%), एल–लिमोनि (12.9%), बीटा–माइरसीन (5.1%) तथा एल्फा–क्यूबेबिन (1.7%) और साइमिन (0.5%) गौण घटक के रूप में पाये गये।

यूपेटोरियम ऐडेनोफोरमः–यूपेटोरियम ऐडेनोफोरम एसटिरेसी परिवार का एक बहुवर्षीय शाकीय पौधा है जो कि हिमालय के शीतोष्ण क्षेत्रों में प्राकृतिक रूप से पाया जाता है। इस पौधे के नमूने ऋषिकेश से लिए गये। यूपेटोरियम ऐडेनोफोरम के सुखाए गए वायवीय भागों का जल–आसवन करने के पश्चात् सुगंधित तेल प्राप्त किया गया जिसमें तेल का प्रतिशत 0.3 पाया गया तथा

नमूने का जी.सी. एवं जी.सी. – एम.एस. विधि द्वारा विश्लेषण किया गया। इस तेल के 92.8% भाग में कुल 67 घटकों की पहचान की गई। तेल में च–साइमीन (22.8%), एसिटिक ऐसिड 1,7,7 ट्राइमेथिल बाईसाईक्लो {2.2.1} हेप्ट–2–आईल स्टर (10.9%) कैम्फीन (9.3%), फिलेनड्रीन (7.1%) एवं एल्फा–टर्पिनोलीन (4.9%) की पहचान मुख्य घटकों के रूप में की गई।

सिम्बोपोगोन डिस्टॉन्सः–सिम्बोपोगोन डिस्टॉन्स का जो कि गनिया घास के नाम से प्रचलित है, एकत्रीकरण पिथौरागढ़ जिले से किया गया। सीम्बोपोगोन डिस्टॉन्स का तेल तरल व भूरे रंग का होता है। इस तेल में पिपरीटोन (29.3%), एल्फा टर्पिनोलीन (22.9%), एल–लिमोनीन (4.0%), यूडेसमेनिडियोल (3.3%) मुख्य घटक के रूप में तथा च–साइमीन (2.7%), ट्रांस कैर्योफिलीन (2.4%), जिरेनिओल (2.4%), जेड–सिट्रल (1.6%) एवं आइसोलेडीन (1.5%) गौण घटकों के रूप में पाये गए।

पेरिल्ला फ्रूटसेन्सः–जंगली भंगीरा (पेरिल्ला फ्रूटसेन्स) के नमूने देहरादून से एकत्र किये गए। इसके हल्के पीले रंग के सुगंधित तेल में 2–एलिल–4–मेथिल फेनॉल (11.3%) क्युमिनिक एल्डिहाइड (9.5%), ट्रांस –सिस –7,10,13 – हेक्साडेक्साट्रिनल (6.6%), रोजफ्युरान (6.3%), जर्माक्रीन–बी (3.7%) मुख्य घटकों तथा जर्माक्रीन–डी (2.3%) एवं एरोमाडेनड्रीन (1.1%) गौण घटकों के रूप में पाये गऐ।

लैंटाना कैमाराः–लैंटाना कैमारा का देहरादून से एकत्रीकरण करने के पश्चात् इसके तेल का जी.सी. एवं जी.सी.–एम. एस. विधि द्वारा विश्लेषण किया गया। इसमें जर्माक्रीन–डी (13.5%), ट्रांस–कैर्योफिलीन (12.1%), एल्फा–पाईनिन (4.9%), बीटा–पाईनिन (3.7%), गामा–टर्पिनीन (3.7%) मुख्य घटकों तथा सेबिनीन (2.1%), 1,8–सिनेओल (1.8%) एवं –टर्पिनीन (1.8%) गौण घटकों के रूप में पाये गए।

चिनोपोडियम एम्ब्रोसियोइड्स – चिनोपोडियम एम्ब्रोसियोइड्स, चिनोपोडिएसी परिवार का एक बहुवर्षीय शाकीय पौधा है। इस पौधे के नमूने का एकत्रीकरण उत्तराखण्ड के श्रीनगर से करके जल–आसवन विधि द्वारा आसवन कर पौधे के सुखाए गए भागों से सुगंधित तेल प्राप्त किया गया। प्राप्त किये गए तेल का प्रतिशत 0.3% रहा तथा इसके नमूने का जी.सी. एवं जी.सी.–एम.एस. विधि द्वारा विश्लेषण किया गया। इस तेल के 94.0 भाग में 27 घटकों की पहचान की गई जिनमें अ–टर्पिनीन (44.7%), साइमिन (21.3%), एस्केरिडोल (17.9%) मुख्य घटकों के रूप में जबकि एथेनॉन (1.5%) पिपरीटोन आक्साइड (1.3%), आइसोस्केरिडोल (1.2%) गौण घटकों के रूप में पाये गए।

पोगोस्टेमोन बेन्घालेनसिस–उत्तराखण्ड के देहरादून जिले से एकत्र की गई जंगली पचौली (पोगोस्टेमोन बेन्घालेनसिस) के जल–आसवन द्वारा निकाले गए तेल का जी.सी. एवं जी.सी. –एम.एस. विधि द्वारा विश्लेषण किया गया। इस तेल के 82.5% भाग में उपस्थित 40 घटकों की पहचान की गई जिनमें एजुलिन–2 ऑल (32.0%), ऑक्ट्राईन (6.5%), पचौलिन (6.4%), जर्माक्रीन–बी (5.1%), बी–कैर्योफिलीन (3.9%), मुख्य घटकों तथा ()– बी–गुआइन (2.6%), टोर्रियोल (1.6%), शायोबुनोन (1.6%), बी पाईनिन (1.4%) गौण घटकों के रूप में पाये गए।

अभी हाल ही में इसेन्शियल ऑयल एसोसियशन ऑफ इण्डिया (ई0ओ0ए0आई), नई दिल्ली द्वारा **एशियन एरोमा इनग्रिडेन्ट कांग्रेस एण्ड एक्सपो–2010** का आयोजन गुडगांव में किया गया, जिसमें 500 से भी अधिक उद्योगों के उद्योगपतियों ने प्रतिभाग किया। इसमें श्री नृपेन्द्र चौहान, वैज्ञानिक–प्रभारी, सगन्ध पौधा केन्द्र, सेलाकुई (कैंप), देहरादून के नेतृत्व में उत्तराखण्ड राज्य की उपरोक्त खरपतवारों से प्राप्त तेलों को उद्योगों के व्यावसायिक उपयोग हेतु प्रदर्शित किया गया जिसकी उद्योगपतियों द्वारा सराहना की गई तथा उनके द्वारा भविष्य में इन तेलों को खरीदने की प्रबल इच्छा जाहिर की गई। इस कांग्रेस में केन्द्र द्वारा प्रदर्शित स्टॉल में उद्योगपतियों द्वारा विभिन्न तेलों की लगभग 1 कुन्तल मात्रा के साथ–साथ तेलों के नमूनों की आपूर्ति की मांग की गई।

इस अवसर पर केन्द्र द्वारा सगन्ध पौधों कृषिकरण तथा उनके उत्पादों के व्यावसायीकरण क्षेत्र में किये गये उत्कृष्ट कार्यों को देखते हुए केन्द्र के वैज्ञानिक–प्रभारी श्री नृपेन्द्र चौहान का इसेन्शियल ऑयल एसोसियशन ऑफ इण्डिया (ई0ओ0ए0आई), नई दिल्ली द्वारा **''साइंटिस्ट ऑफ द ईयर अवार्ड''** से अलंकृत किया गया।

आर्टिमिसिया मैरिटिमा

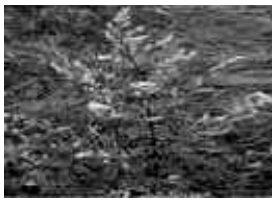
आर्टिमिसिया वल्गेरिस

क्यूप्रेसस टोरूलोसा

यूपेटोरियम ऐडेनोफोरम

सिम्बोपोगोन डिस्टॉन्स

पेरिल्ला फ्रूटसेन्स

लैंटाना कैमारा

चिनोपोडियम एम्ब्रोसियोइड्स

पोगोस्टेमोन बेन्घालेनसिस

उपाध्यक्ष
राज्य औषधीय पादप बोर्ड, उत्तराखण्ड सरकार

अंतर्राष्ट्रीय जैवविविधता वर्ष के अवसर पर

जैवविविधता मूल्यांकन– एक परिदृष्टि

एस. के. गुप्ता

जैवविविधता विचारधारा उन पहलुओं का वर्णन है जिनके अंतर्गत एक पारिस्थितिक तंत्र के विभिन्न घटक तथा कार्य संगठित होते हैं। इसके तीन अंग होते हैं :

अनुवांशिक विविधता, जाति विविधता तथा परितंत्र विविधता

वास्तव में इन सभी तीनों अंगों के लिए, प्राकृतिक संसाधनों की विविधता की सीमा तथा उस तंत्र के अंतर्गत प्रचुरता तथा वितरण महत्वपूर्ण आवश्यकताएँ हैं। इन्हें जैविक संसाधन नहीं समझना चाहिए। उदाहरण के लिए अनुवांशिक विविधता का अर्थ है, **'एक विशिष्ट जीन संग्रह (जीनपूल) में विभिन्नता, जीनों की संख्या तथा उनका वितरण'।** जाति विशिष्टता जातियों के वितरण तथा उनकी प्रचुरता का मापदंड है। अर्थात्, यह किसी व्यक्तिगत जीव का वर्णन नहीं है। परितंत्र की विविधता से तात्पर्य है कि एक निश्चित क्षेत्र में कितने प्रकार के परितंत्र होते हैं तथा उनकी संख्या क्या है, अर्थात् यहाँ भी परितंत्रों का वर्णन नहीं किया जाता। सरकार एवं नीति–निर्माताओं का ध्यान आकर्षित करने के लिए जैव विविधता संरक्षण की नीति में उन आर्थिक पहलुओं को प्रदर्शित किया जाना चाहिए जिनका जैव संसाधनों द्वारा राष्ट्र के सामाजिक–आर्थिक विकास में योगदान मिलता है।

प्रत्यक्ष एवं परोक्ष उपभोग मूल्य (डाइरेक्ट तथा इंडाइरेक्ट यूज वैल्यू)

जिस प्रकार जैविक संसाधनों के प्रत्यक्ष एवं परोक्ष उपभोग मूल्य होते है, उसी प्रकार जैव विविधता का भी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष मूल्य होता है, परन्तु दोनों की मूल्यांकन पद्धति में स्पष्ट अंतर है। जैविक संसाधनों के संदर्भ में एक विश्लेषक की दृष्टि केवल उनके कुल उपभोग मूल्य (ग्रॉस यूज वैल्यू) की पहचान करने की ओर केन्द्रित होती है, जबकि जैवविविधता के मापन का मुख्य उद्देश्य परितंत्र के बहिर्प्रवाह अथवा उत्पादन में होने वाले सीमांत परिवर्तनों का अध्ययन करना होता है। ये सीमांत परिवर्तन अंतः प्रवाहित (इनपुट) कारकों (ऊर्जा अथवा अन्य पदार्थों की आपूर्ति) में होने वाले सीमांत परिवर्तनों के परिणाम स्वरुप होते हैं। एक परितंत्र के अंतर्गत आर्थिक क्रियाकलापों में होने वाले परिवर्तनों का मापन भी जैवविविधता के प्रत्यक्ष तथा परोक्ष मूल्यों का आकलन करने का मापदंड है। उदाहरण के लिए प्रवाल चट्टानों (कोरल रीफ) में जाति विविधता के प्रत्यक्ष उपभोग मूल्य के मूल्यांकन में, प्रवाल जातियों की विविधता तथा प्रवाल–प्रसार क्षेत्र की कुल मात्रा में होने वाले परिवर्तन; दोनों ही मत्स्य जैवभार को प्रभावित करते हैं।

प्रत्यक्ष उपभोग मूल्य

प्रत्यक्ष उपभोग मूल्यों के संदर्भ में, आर्थिक स्थानापन्नों की तुलना में पारिस्थितिक स्थानपन्नों को परिभाषित करना कहीं अधिक कठिन होता है। उदाहरण के लिए फर्नीचर बनाने में प्रयुक्त की जाने वाली एक उच्च कोटि की लकड़ी (जैसे टीक, शीशम आदि) अतिदोहन के कारण अनुपलब्ध हो गई है तो उसके स्थान पर ऐसी लकड़ी का प्रयोग किया जाने लगता है जो सुलभ है, टिकाऊ है, परन्तु टीक अथवा शीशम की तुलना में उसका आर्थिक मूल्य तुलनात्मक रूप से निश्चित ही कम है। इसके विपरीत यदि पंसदीदा लकड़ी का विस्थापक उन व्यक्तियों द्वारा किया जाता है जो लम्बी दूरी तक यात्रा कर उसे एकत्र करते हैं, तो उसका आर्थिक मूल्य भी अधिक होगा तथा जाति विविधता का प्रत्यक्ष मूल्य भी अधिक हो जाएगा।

परोक्ष उपभोग मूल्य

जैवविविधता के परोक्ष उपभोग मूल्यों में भी आर्थिक अथवा पारिस्थितिक स्थानापन्न सम्मिलित हो सकते हैं, अर्थात् विविध एवम् मूल्यांकित पर्यावरणीय संसाधनों में होने वाली गिरावट के कारण उपलब्ध लाभों को उसके स्थानापन्न की उपयोगिता एवम् उपलब्धता के समकक्ष रख कर तुलना करनी चाहिए। उदाहरण के लिए जल आच्छादित दलदली भूमि का मूल्य अधिक हो सकता है क्योंकि उसके पारिस्थितिक स्थानापन्न की उपलब्धता तुलनात्मक दृष्टि से अत्यधिक कम होती है एवम् उसके आर्थिक स्थानापन्नों (उदाहरणतः जल निर्मलीकरण संयंत्र, जल परिवहन, जल आच्छादित दलदली भूमि पर निर्भर मछुआरों का पुनर्स्थापन आदि) का मूल्य अधिक होता है।

पारिस्थितिकी एवम् आर्थिकी

यद्यपि जैवविविधता संरक्षण एक वैश्विक चर्चा है, इसका आकलन अकसर मुद्रा के संदर्भ में भी किया जाता है। इसका मूल्य कितना होगा तथा इसकी कितनी उपयोगिता है ऐसे प्रश्न सहज की उठने लगे हैं। मानक आर्थिकी द्वारा किसी वस्तु का मूल्य निर्धारित होता है और ऐसा जैवविविधता के लिए भी होता है।

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र अथवा पारिस्थितिक अर्थशास्त्र, ऐसी नई विधा है जिसने न केवल अर्थशास्त्र, पर्यावरण विज्ञान तथा सार्वजनिक नीतियों जैसे विषयों का एकीकरण कर दिया है बल्कि आर्थिक विश्लेषणों द्वारा जैवविविधता के मूल्यांकन को भी सम्मिलित कर लिया है।

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र का प्रमुख केंद्र–बिन्दु उन सभी विधियों को खोजना होता है जिनके द्वारा जैवविविधता के घटकों का मूल्यांकन हो सके। सीधे तौर पर, जैवविविधता के मूल्यों के अंतर्गत किसी भी संसाधन की उपज का बाजार मूल्य, प्राकृतिक रूप में पाए जाने वाले ऐसे संसाधन का मूल्य जिससे उपज न ली गई हो तथा किसी संसाधन का भविष्यत् मूल्य, सभी सम्मिलित होते हैं।

भारतीय जैवविविधता का मूल्यांकन

पुरातन काल से भारतीय सभ्यता ने जैवविविधता के मूल्य को भली भांति समझा है। भारतीय संस्कृति की यही सदाशयता उसे संसार में सबसे अलग व सबसे विशिष्ट बनाती है। इसीलिए इस संस्कृति को महान् कहा जाता है। यहाँ सजीव के साथ–साथ निर्जीव वस्तुओं को भी श्रद्धा सुमन अर्पित करने की परम्परा

है। पर्वत, नदियाँ, पत्थर, चट्टान आदि अनेक रूपों को हम नमन करते हुए उन्हें संरक्षित रखने का प्रयास करते चले आये हैं। यहाँ की भौगोलिक एवं पर्यावरणिक विभिन्नता के कारण जैवविविधता भी प्रचुरता के साथ पायी जाती है। अतः भारत देश को जैव विविधता का देश कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। जैवविविधता से भरपूर सभी परितंत्र कृषि, मवेशियों, वानिकी तथा मात्स्यिकी के लिए प्राकृतिक संसाधन है। भारतीय जैवविविधता जीवन–रक्षक औषधियों की स्रोत हैं। भारतीय औषधियों का लगभग 90 प्रतिशत पौधों से प्राप्त होता है। इसी कारण फार्मेसी उद्योग का एक बड़ा हिस्सा औषधि गुण वाले पौधों पर निर्भर है। एक अनुमान के अनुसार लगभग 4 हजार जातियाँ औषधि के रूप में, 3000 भोजन के रूप में, लगभग 700 परम्परागत धार्मिक अनुष्ठानों में, 500 रेशे के रूप में, 400 चारे के रूप में, 300 गोंद के स्रोत के रूप में तथा लगभग 100 तिलहन तथा सुगन्धित तेलों के रूप में प्रयोग किए जाते हैं।

जन्तुओं में कुल मिलाकर 77452 प्रजातियाँ हैं जो विश्व के जन्तु जगत का 6.5ः हैं। इनमें से लगभग 135 वंश (जीनस) स्थानिक/भारतीय मूल (एण्डेमिक) के हैं जिनमें से लगभग 85 (63ः) उत्तर–पूर्व में पाए जाते हैं। पक्षी वर्ग, जो विश्व पक्षी समूह का 14ः है, अत्यधिक भारतीय मूलकता प्रदर्शित करता है। इसके अतिरिक्त सरीसृपों में 50ः छिपकलियाँ, जबकि 62ः जल स्थलचर भारतीय मूल के हैं और अधिकांशतः पश्चिमी घाटों के वासी हैं। विश्व में पाए जाने वाली रंगबिरंगी, छोटी बड़ी मछलियों का लगभग 11.5ः भारत के जल स्रोतों में पाया जाता है।

संकटग्रस्त जैवविविधता

भारतीय जैवविविधता का महत्वपूर्ण अंश संकटग्रस्त है। उदाहरण के लिए हमारे देश के ऊष्ण–कटिबन्ध वन लगभग 0.6ः प्रतिवर्ष (लगभग सात करोड़ तीस लाख हेक्टेयर) की तीव्र गति से नष्ट होते जा रहे हैं। यदि इस घटनाक्रम पर अंकुश न लगा तो आने वाले 175 वर्षों में ऊष्ण–कटिबन्ध वन पूर्णतः लुप्त हो जाएंगे। एक अन्य अनुमान के अनुसार ऊष्ण–कटिबन्ध वनों का लगभग 90ः (विश्व की लगभग 500 पादप जातियाँ) 2020 तक नष्ट हो जाएगा।

कृषि परितंत्रों में तो जैवविविधता का विनाश अधिक चिंता का विषय है। 'हरित–क्रांति' के परिणामस्वरूप प्राकृतिक रूप में पाए जाने वाली हज़ारों फसल योग्य प्रजातियों का विस्थापन संकर–जातियों द्वारा हो चुका है। अनियंत्रित रूप से कीटनाशकों एवम् रासायनिक उर्वरकों के व्यापक उपयोग से सूक्ष्म जीवियों, अन्य पौधों एवम् जन्तु–जैवविविधता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। बहुत सी समुद्री प्रजातियाँ भी संकटग्रस्त सूची में हैं। रेड डेटा बुक ऑफ इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर ऍण्ड नेच्युरल रिसोर्सेज के आंकड़ों के अनुसार बहुत सी प्रजातियाँ विलुप्तीकरण की कगार पर हैं। संक्षेप में लगभग 450 भारतीय पादप प्रजातियाँ संकटग्रस्त अथवा विलुप्तप्राय हैं। जंतुओं में लगभग 447 सरीसृप, 372 स्तनधारी, 1228 पक्षी संकटग्रस्त प्रजातियों की श्रेणी में रखे गए हैं। मछलियों तथा उभयचरों में भी बहुत सी संकटग्रस्त प्रजातियाँ हैं। भारतीय मूल की प्रसिद्ध 'महासीर', मेजर कार्प (रोहू, कतला, म्रिगल) आदि पर विदेशी मछलियों के संवर्धन से संकट उत्पन्न हो गया हैं। पहाड़ी क्षेत्रों की महासीर तो वहाँ की नदियों में आए पारिस्थितिक बदलाव के कारण संकटग्रस्त हो चुकी है।

जैवविविधता के संदर्भ में उपर्युक्त तथ्यों का वर्णन पर्यावरण संरक्षण एवम् तदनुसार जाति–संरक्षण/परिरक्षण की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

जैवविविधता संरक्षण

जैव विविधता के अनुरक्षण से प्राकृतिक संपदा का भली–भांति संरचण होता है जिससे वे सभी मनुष्य को प्राप्त होते हैं, जो प्रकृति हमें देना चाहती है। परन्तु उसका विनाश करके हम कोई विकास नहीं कर सकते हैं। अतः सोचना होगा कि हमारे प्राकृतिक संसाधन–वन, वनस्पतियाँ, जीव–जन्तु, जलाशय, खेत–खलिहान, पशु–संपदा तथा वन्य–अधिवास कैसे बचें? कैसे उनका उपयोग सामाजिक आर्थिक हित में हो?

जैव विविधता संरक्षण के उद्देश्य

जैव विविधता संरक्षण के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

- प्रकृति सभी प्रजातियों को जीने का अवसर प्रदान करती है।
- पर्यावरण संतुलन बनाए रखने में प्रत्येक प्रजाति की एक विशिष्ट भूमिका होती है।
- जैव विविधता द्वारा वैज्ञानिक समुदाय समाज को संभावित उपयोग की विस्तृत जानकारी प्रदान करता है।
- जीवनधारियों की प्रत्येक प्रजाति विशिष्ट उत्पाद देती है जो कि अन्य प्रजातियाँ नहीं देती हैं।
- यह संरक्षित वन्य प्राणियों एवं पादपों का खजाना है जो भविष्य में आवश्यकता होने पर मानव जाति के भले के लिए प्रयोग किए जा सकते हैं।
- मानव अस्तित्व को बनाए रखने हेतु जैव विविधता संरक्षण आवश्यक है।

जैव विविधता संरक्षण विधियाँ

पादपों एवं जन्तुओं का संरक्षण उनके प्राकृतिक अधिवास तथा बाहरी निवास क्षेत्रों में ही किया जा सकता है, जिसे हम स्थलीय संरक्षण एवं बाह्य संरक्षण कहते हैं।

- स्थलीय संरक्षण (इन सीटू कजर्वेशन) का कार्य राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभयारण्यों, संरक्षित एवं सामुदायिक रिजर्व, आरक्षित एवं सुरक्षित वन क्षेत्रों, अनुसंधान हेतु चयनित वृक्ष कुंजों तथा संरक्षित वृक्षों में किया जा सकता है।
- बाह्य स्थलीय संरक्षण (एक्स–सीटू कंजर्वेशन) का कार्य जन्तुआलयों, एक्वोरियम, जैविक–उद्यानों, सफारी पार्क, वानस्पतिक एवं बागवानी एवं सार्वजनिक–उद्यानों, वृक्ष–उद्यानों तथा जीवों एवं पादपों का पुनर्वास करके किया जा सकता है। जैव विविधता के विनाश, विवेकहीन शोषण तथा कुप्रबंधन से हम वर्तमान समय में संकट तो झेल ही रहे हैं, भावी पीढ़ी के लिए भी समस्याओं का अंबार लगा रहे हैं। विज्ञान एवं तकनीक के सहारे हम भले ही उन्नति कर लें, अपने आप पर गर्व करें, लेकिन प्रकृति के प्रतिशोध से बच नहीं सकते हैं प्रकृति का विनाश मानव के अपने भविष्य का विनाश है।

एसोशिएट प्रोफेसर (अवकाश प्राप्त)
प्राणी विज्ञान विभाग, डी.वी.एस. (पी.जी.) कालेज, देहरादून

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग,

समाचार-पत्रक
मई से अगस्त, 2010

2010 International Year of Biodiversity

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद

निदेशक की कलम से

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकास्ट) एवं उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यूसर्क) राज्य में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के शोध एवं विकास संवर्धन, संरक्षण एवं विज्ञान लोकव्यापीकरण, वैज्ञानिक वातावरण के सृजन, विज्ञान शिक्षा को सरल, सुरूचिपूर्ण व उपयोगी बनाने के अपने उद्देश्यों के अनुरूप विगत मई से अगस्त २०१० की अवधि में परिषद एवं केन्द्र के नैत्यिक क्रिया कलापों के अतिरिक्त विविध समसामयिक व विशिष्ट कार्यक्रमों का आयोजन किया है।

विज्ञान विषय को रुचिकर बनाने के उद्देश्य से स्वयं सेवी संस्था 'पहल' के साथ राजीवगांधी नवोदय विद्यालय में राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस का सफल आयोजन किया गया है।

नैनोटैक्नोलाजी की विशेषतः उत्तराखण्ड राज्य के संदर्भ में भावी उपयोगिता व विषय के अध्ययन शोध व विकास के संबंध में कुमांयू इंजीनियरिंग कालेज द्वाराहाट, अल्मोड़ा में एक कार्यशाला आयोजित की गयी। आमंत्रित विशेषज्ञों द्वारा अपने उद्बोधन से प्रतिभागियों का मार्गदर्शन व ज्ञानवर्धन किया गया।

बौद्धिक सम्पदा अधिकार कानून की बारीकियों से शोधार्थी वैज्ञानिक समुदाय को अवगत कराने व पेटेन्ट की प्रक्रिया की जानकारी उपलब्ध कराने हेतु एन०आर०डी०सी० व यूकास्ट द्वारा आयोजित कार्यशाला में राज्य के १५० से अधिक प्रतिभागियों को लाभ प्राप्त करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है।

ग्राम झाझरा तहसील विकासनगर स्थित विज्ञानधाम की भूमि पर स्वतंत्रता दिवस १५ अगस्त २०१० के सुअवसर पर वृक्षारोपण कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम में परिषद के समस्त अधिकारी/कर्मचारियों के अतिरिक्त शिक्षण संस्थाओं ने भी उत्साहपूर्वक भाग लेकर इस राष्ट्रीय पर्व को यादगार बनाने में योगदान किया।

यूसर्क वह सीमैप लखनऊ के संयुक्त तत्वाधान में सीमैप अनुसंधान केन्द्र पंतनगर में औषधीय एवं सगंध पौधों के कृषिकरण पर आयोजित दो दिवसीय प्रशिक्षण से विषय के शोधार्थियों के अतिरिक्त उत्तराखण्ड के विभिन्न स्थानों से आये कृषक लाभान्वित हुये।

केन्द्र द्वारा भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई०आई०टी०) रूड़की में ठोस अपशिष्ठ प्रबंधन पर प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन इस अवधि में आयोजित उल्लेखनीय कार्यक्रम में से एक था।

पर्यावरण एवं प्रदूषण व ग्लोबल वार्मिंग से चिंतित विश्व समुदाय द्वारा जलवायु परिवर्तन के कारणों के अध्ययन को प्राथमिकता दी जा रही है। अपने राज्य के संदर्भ में इस सामयिक विषय पर परिचर्चा व चिंतन हेतु यूसर्क द्वारा देहरादून स्थित यूनिवर्सिटी आफ पैट्रोलियम एण्ड एनर्जी स्टडीज के साथ एक सेमिनार आयोजित किया गया जिसमें इस विषय पर महत्वपूर्ण एवं उपयोगी तथ्य, जानकारियाँ, प्रस्ताव व विचार प्रस्तुत हुये।

परिषद एवं केन्द्र द्वारा राज्य में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के संबध में विविध कार्यक्रमों का आयोजन शोध तथा अनुसंधान एवं विकास को सतत गति देने के प्रयास जारी हैं। वैज्ञानिक समुदाय व राज्य के आमजन के सहयोग की अपेक्षा के साथ।

(डा० राजेन्द्र डोभाल), निदेशक

इस संस्करण में

- यूकॉस्ट द्वारा प्रायोजित शोध परियोजना ''इम्प्रूवमेंट आफ ब्रासिका जुनसिया डिफेंस मैकेनिजम टू काम्बैट आक्सीडेटिव स्ट्रेस'' का सफल समापन।
- यूकॉस्ट द्वारा प्रायोजित कार्यशाला ''नैनोटक्नोलॉजी एवं भविष्य में उपयोगिता''।
- यूकॉस्ट द्वारा प्रायोजित ''राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस''।
- यूकॉस्ट द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय जैव विविधता दिवस 2010 का राज्य के विभिन्न जिलों मे आयोजन।
- यूकॉस्ट द्वारा शोध विकास कार्यक्रम का सफल आयोजन।
- यूकॉस्ट द्वारा आई0पी0आर0 विषयक सेमिनार का सफल आयोजन।
- यूकॉस्ट द्वारा वृक्षारोपण कार्यक्रम का सफल आयोजन।
- यूकॉस्ट द्वारा वैज्ञानिकों/शोधार्थी को प्रदित यात्रा अनुदान।
- यूसर्क द्वारा प्रायोजित कार्यक्रम ''औषधीय एवं सगंध पौधो के उत्पादन'' का आयोजन।
- यूसर्क द्वारा कार्यक्रम ''ठोस अपशिष्ठ प्रबन्धन'' कार्यक्रम का आयोजन।
- यूसर्क द्वारा जलवायु परिवर्तन विषय पर सेमिनार का आयोजन।
- यूसर्क द्वारा अध्ययन की रोचक तकनीकी विषयक कार्यक्रम का आयोजन।
- यूसर्क द्वारा वैकल्पिक ऊर्जा पर कार्यशाला का आयोजन।
- यूसर्क द्वारा नॉनलिनियर विश्लेषण एवं गणित पर सेमिनार का आयोजन।

यूकॉस्ट द्वारा प्रायोजित शोध परियोजना

इम्प्रूवमेंट आफ ब्रासिका जुनसिया डिफेंस मैकेनिजम टू काम्बैट आक्सीडेटिव स्ट्रैस का सफल समापन।

पानी की कमी, पर्यावरण से होने वाले पादप विकास अवरोधकों के प्रमुख कारणों में से होने वाले पादप विकास अवरोधकों के प्रमुख कारणों में से एक है। यह पौधों के विकास तथा उनकी उत्पादकता पर अत्याधिक प्रतिकूल प्रभाव डालता है। पानी की कमी की वजह से हानिकारक उत्तेजित आक्सीजन कणों ;त्ब्द्ध के उत्पादन में वृद्धि होती है, जो कि पादप विकास के लिए अत्यन्त हानिकारक सिद्ध हुई है। पौधों को इन हानिकारक उत्तेजित आक्सीजन कणों के दुश्प्रभावों से बचाने के लिए इस परियोजना के अन्तर्गत ऐसे ट्रांसजनिक पौधों का विकास सफलतापूर्वक किया गया है जो कि उत्तेजित आक्सीजन कणों को नष्ट करने की क्षमता रखते हैं। परिणाम स्वरूप ऐसे ट्रांसजनिक पौधे पानी की कमी वाले पर्यावरण में भी सफलतापूर्वक लगाया जा सकते हैं। ट्रांसजनिक पौधों में यह क्षमता एम0एन0 सौड ;डदैव्क्द्ध नामक एन्जाइम के अत्याधिक उत्पादन द्वारा कार्यानवित की गयी है। हमारे द्वारा किये गये प्रारम्भिव शोध में ब्रासिका जुनसिया ;ठतेंपबं रनदबमंद्ध जो कि डदैव्क का अत्याधिक उत्पादन करने में सक्षम है, को पानी की कमी वाले वातावरण में विकसित किया गया है। महत्वपूर्ण है कि पानी की कमी के दौरान, उत्तेजित आक्सीजन अवरोधकों का स्तर ट्रांसजनिक पौधों की पत्तियों के समरूपी टुकड़ों में, सामान्य पौधों की पत्तियों के मुकाबले, कमतर पाया गया। यह परिणाम अन्य जैव रासायनिक तत्वों के मापे गये स्तरों, जिनमें कि सुपर आक्साइड डिसम्युटेस, एसकार्बेट परआक्सीडेज, कैटालेज, प्रोलीन इत्यादि शामिल है, से भी प्रमाणित किया गया है।

टी1 ट्रांसजेनिक ब्रासिका जुनसिया प्लान्टस जिन्हें कि पानी की कमी वाले वातावरण में उगाया गया था, उन्होंने सामान्य ब्रासिका जुनसिया प्लान्टस से बेहतर विकास–दर दर्ज किया जो कि ज्यादा प्रोलीन, कमतर हाइड्रोजन पराक्साइड तथा मैलेनडाएलडिहाइड के एकत्रीकरण से साबित होता है। हमारे द्वारा किये गये शोध से यह बात प्रमाणित होती है कि ब्रासिका जुनलिया प्लान्टस जो कि डदैव्क को अत्याधिक उत्पादन कर रहे है, वह पानी की कमी वाले वातावरण में अधिक प्रभावशाली तरीके से विकास करने में सक्षम है।

इस शोध परियोजना के महत्वपूर्ण परिणामों को निम्नलिखित राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विज्ञान पत्रिकाओं ;बपमदजपपिब श्रवनतदंसेद्ध में प्रकाशित किया गया है। इस शोध परियोजना के अन्तर्गत विकसित किये गये ट्रांसजनिक बीजों को अग्रिम परीक्षणों के लिए एक कम्पनी को दिये जाने पर विचार किया जा रहा है।

प्रकाशन

1. पंकज जोशी, एस0सी0 सक्सेना एवं संदीप अरोड़ा (2010) Characterization of Brassica juncea antioxidant potential under salinity stress. Acta Physiol, Plantarum. DOI: 10.1007/s11738-010-0606-7
2. पंकज जोशी एवं संदीप अरोड़ा (2010) Ectopic expression of MnSOD for strengthening Brassica juncea defense mechanisms against oxidative stress. Communicated to Transgenic Research.
3. सीमा के0 सिंह, डी0पी0 मिश्रा, पंकज के0 जोशी एवं संदीप अरोड़ा (2007) An efficient protocol for regeneration in Indian mustard Brassica juncea (L.) Czern and Coss. P. Journal of Research. Vol 5 (1); 9-13.

प्रोजेक्ट टीम

संदीप अरोड़ा
(परियोजना अधिकारी)

एसोसिएट प्रोफेसर, जी०बी० पन्त यूनिवर्स्टी आफ एग्रीकल्चर एवं टैक्नोलाजी, पन्तनगर

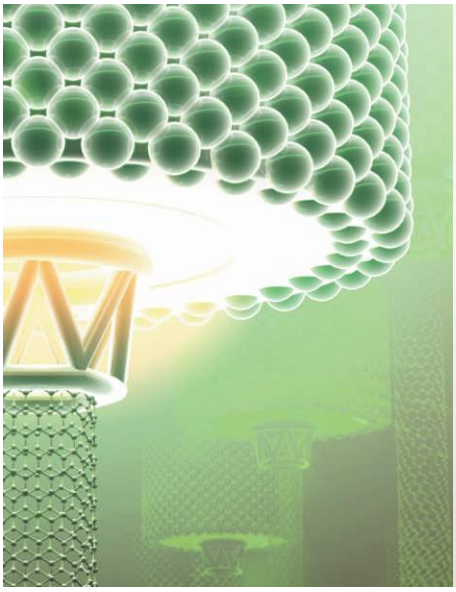

नैनोटैक्नोलॉजी एवं भविष्य में उपयोगिता

दो दिवसीय कार्यशाला जिसका शीर्षक ''पावरिंग द फयूचर विद नैनोटैक्नोलॉजी'', यूकास्ट एवं कुमाऊ कालेज आफ इनजनेरिंग द्वाराघाट, अल्मोड़ा के संयुक्त तत्वाधान में 22–23 अप्रैल, 2010 को किया गया। विषेशज्ञों द्वारा रिसर्च एवं नैनोटैक्नोलॉजी विषय में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किये जा रहे नवीनतम प्रयोगों एवं उपलब्धियों की जानकारी दी गयी। यह भी माना गया की नैनोटैक्नोलॉजी भारत में शुरूआती दौर से गुजर रही है एवं नये रिर्सच एवं उनके निर्शकशों द्वारा नये पायदान पर पहुचेगी। इस अवसर पर मुख्य अतिथि डा0 एस0के0 जोशी, भूतपर्व निदेशक, सी0एस0आई0आर0, नई दिल्ली ने नैनोटेक्नालॉजी एवं उसके विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग की चर्चा की। इस अवसर पर गेस्ट ऑफ आनर डा0 डी0एस0 चौहान, कुलपति, उत्तराखण्ड टैक्निकल यूनिर्वस्टी, देहरादून एवं डा0 एन0के0 शुक्ला, डा0 अश्वनी कुमार भी उपस्थित थे। इस दौरान निदेशक, यूकॉस्ट, डा0 राजेन्द्र डोभाल ने नैनोटेक्नालॉजी विषय सम्बंधित अपने अनुभव बाटें।

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस की अभिमुखीकरण कार्यशाला

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद भारत सरकार के उत्प्रेरण एवं सहयोग से एन.सी.एस.टी.सी. नेटवर्क द्वारा प्रतिवर्ष 27 से 31 दिसम्बर तक आयोजित की पाने वाली देशव्यापी वैज्ञानिक गतिविधि राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस को उत्तराखण्ड राज्य में पीपुल्स एसोसियेशन आफ हिल एरिया लांचर्स, यूकॉस्ट तथा शिक्षा विभाग के संयुक्त प्रयास से आयोजित किया जाता है। रा0बा0वि0का0 के इस वर्ष के मुख्य विषय 'भूमि संसाधन : समृद्धि के लिये उपयोग करें, भविष्य के लिये बचायें' पर राजीव गांधी नवोदय विद्यालय देहरादून में सभी जिलों के जिला समन्वयकों, अकादमिक समन्वयकों तथा सन्दर्भ व्यक्तियों व मैंटरों की दो दिवसीय अभिमुखीकरण कार्यशाला का आयोजन दिनांक 4 व 5 मई को किया गया। कार्यशाला का शुभारंभ करते हुये यूकोस्ट के निदेशक डा0 राजेन्द्र डोभाल ने कहा कि बच्चों में वैज्ञानिक अभिवृत्ति के विकास के लिये राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस एक महत्वपूर्ण गतिविधि है और इसमें अधिकतम बच्चों को शामिल किया जाना चाहिये।

मुख्य विषय के 6 उपविषयों यथा–अपनी भूमि को जानो, भूमि के कार्य, भूमि के गुण, भूमि पर मानव हस्तक्षेप, भूमि संसाधनों का दीर्घकालिक उपयोग तथा भूमि प्रयोग हेतु सामुदायिक ज्ञान पर डा0ए0के0बियानी, डा0एम मधु डा0 प्रणव पाल, डा0वी0के0 पाण्डेय, डा0 एन पुनेठा तथा डा0 बी0पी0 डिमरी द्वारा सन्दर्भ वार्ता दी गई। इस अवसर पर गत वर्ष की विज्ञान कांग्रेस में बाल वैज्ञानिकों के राष्ट्रीय स्तर पर प्रस्तुत शोध पत्रों तथा राज्य स्तर पर प्रस्तुत शोध सारांशों का संकलन 'सृजन' तथा अगामी वर्ष के लिये मार्गदर्शिका, पोस्टर तथा स्टिकर का विमोचन भी किया गया। राज्य समन्वयक डा0 अशोक कुमार पन्त ने बताया कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 की इक्जिक्यूटिव समरी में दिये गये निर्देशानुसार इस वर्ष से राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस को राज्य के सभी विद्यालयों में अनिवार्य गतिविधि के रूप में कराये जाने हेतु सचिव व निदेशक, विद्यालयी शिक्षा द्वारा सभी जिला शिक्षा अधिकारियों को निर्देशित किया जा चुका है। राज्य आयोजन समिति के अध्यक्ष प्रो0 आर0सी0 पाण्डेय ने आशा व्यक्त की कि इस वर्ष राज्य में ज्यादा बाल वैज्ञानिकों के प्रतिभाग करने से राज्य व राष्ट्रीय स्तर पर अधिक गुणवत्तायुक्त परियोजनायें प्राप्त होंगी। कार्यशाला में डा0 एम0पी0 जोशी, कर्नल एम0पी0 बडोला व पहल की अध्यक्ष श्रीमती ममला पन्त साहित सभी 13 जिलों में जिला समन्वयकों, अकादमिक समन्वयकों, सन्दर्भ व्यक्तियों तथा मेंटरों द्वारा प्रतिभाग किया गया।

प्रदेश की जैव विविधता संरक्षण हेतु अनूठा प्रयत्न

1992 में रियो डि जनेरो में हुए 192 देशों के सम्मेलन में 22 मई के दिन को जैव विविधता दिवस के रूप मे स्वीकृति मिली एवं संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2010 को जैव विविधता वर्ष घोषित किया। इसी क्रम में जैव विविधता पर राज्य स्तरीय संगोष्ठी का आयोजन 22 मई, 2010 को एफ0आर0आई0, देहरादून में यूकॉस्ट, देहरादून एवं राज्य जैव विविधता बोर्ड के संयुक्त तत्वाधान में किया गया। इस संगोष्ठी का मकसद आम लोगों को जैव विविधता के महत्व को समझाना एवं उससे जोड़ना था, ताकि प्रदेश की जैव विविधता को संरक्षित किया जा सके। संगोष्ठी के दौरान विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों ने प्रस्तुतिकरण किया एवं व्यापक चर्चा में भाग लिया।

कार्यक्रम का शुभारम्भ माननीय मुख्यमंत्री डा0 रमेश पोखरियाल 'निशंक' जी ने किया एवं अपने उद्भोधन में बताया कि उत्तराखण्ड जीव–जन्तुओं की विविधता के लिए जग प्रसिद्ध एवं उत्तराखण्ड ही एकमात्र ऐसा प्रदेश है जो जैव विविधता प्रदेश के रूप में विश्व पटल पर आ सकता है। उनके द्वारा जैव विविधता संरक्षण के लिए राज्य में स्थापित विभिन्न परिषदों और विभागों में समुचित तालमेल का आह्वान किया गया।

डॉ0 राजेन्द्र डोभाल, निदेशक, उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद ने कार्यशाला के अंत में समापन उद्बोधन में कहा कि उत्तराखण्ड जैव विविधता के क्षेत्र में सम्पन्न राज्य है। राज्य में जैव विविधता बोर्ड की स्थापना होने से अधिक से अधिक जैव विविधता के संवर्धन एवं संरक्षण करने हेतु जन जागरण के लिए व्यापक कार्यक्रम हो पायेंगें। उन्होंने कहा कि परिषद इस दिशा में पूर्व से ही काम कर रही है एवं इसी दिशा में बायोडाइर्वसिटी लौग बुक भी तैयार कर ली गई है।

संगोष्ठी के दौरान यह मत सामने आया कि जैव विविधता के संरक्षण के साथ अगर उद्यमिता विकास कार्यक्रम एवं स्थानीय व्यक्तियों को रोजगार के अवसर भी प्रदान किया जा सकेंगें तो यह कार्यक्रम सार्थक सिद्ध होगा।

इस अवसर पर प्रदेश के प्रत्येक जिले में अंतर्राष्ट्रीय जैव विविधता दिवस कार्यक्रम का आयोजन यूकॉस्ट के जिला समन्वयकों द्वारा अपने अपने क्षेत्र में किया गया।

शोध कार्यों की गुणवत्ता एवं उचित निष्कर्ष तक पहुंचने हेतु आयोजित कार्यशाला

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद (यूकॉस्ट) एवं उद्यमिता एवं प्रबंन्ध विकास संस्थान (ई0एम0डी0आई0) के संयुक्त तत्वाधान में दो दिवसीय शोध विकास कार्यक्रम का आयोजन 18 जुलाई, 2010 को किया गया। कार्यक्रम का मुख्य केन्द्र इनटिग्रेटेड रिर्सच टैक्निक्स फार साइंटिस्ट, रिसर्चस, सरवेयर एन्ड टैक्नीकल पर्सन था। इस अवसर पर यूकॉस्ट के निदेशक डा0 राजेन्द्र डोभाल ने कहा कि वैज्ञानिकों एवं शोधार्थी द्वारा किये गये शोध कार्य में गुणवक्ता की जरूरत है।

ई0एम0डी0आई0 के अध्यक्ष प्रो0 आर0के0 डोभाल ने बताया कि संस्थान इस प्रकार के कार्यक्रम आयोजित करने का प्रमुख धेय शोधों को उचित निष्कर्श तक पहुचाना है। इस दो दिवसीय कार्यशाला में कई शोधार्थियों ने अपने अनुभव बाटें।

बौद्धिक सम्पदा अधिकार विषय पर

यूकॉस्ट एवं एन०आर०डी०सी० के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित सेमिनार

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद एवं राष्ट्रीय शोघ विकास निगम, नई दिल्ली के संयुक्त तत्वाधान में दो दिवसीय क्षेत्रिय सेमिनार होटल पेसिफिक, देहरादून में किया गया। सेमिनार का उद्घाटन करते हुए प्रो० ए०एन० पुरोहित ने कहा कि बौद्धिक सम्पदा अधिकार के संबंध में युवा वैज्ञानिकों में जानकारी व जागरूकता होनी चाहिए। उन्होंने वैज्ञानिकों से तियुखा, फुलमा तथा भंगेडा से सम्बधित ज्ञान के संरक्षण का आह्वान किया। यूकॉस्ट के निदेशक डा० राजेन्द्र डोभाल ने कहा कि यूकॉस्ट प्रदेश सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की विकासनोमुख तथा संरक्षक संस्था के रूप में अग्रसर है। एन०आर०डी०सी० के उपप्रबधक वी०के० जैन ने कहा कि एन०आर०डी०सी० बौद्धिक सम्पदा संरक्षण, कापीराइट, डिजाइन व ट्रेडमार्क रजिशट्रेशन, भौगोलिक संकेतको का संरक्षण, भारतीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय पैटेटीकरण के साथ साथ उद्योगो द्वारा तकनीकों का अपनाने व संरक्षित अधिकारों के व्यवासीकरण द्वारा आर्थिक लाभ को बढ़ावा देने का कार्य कर रही है। इस सेमिनार में लगभग १०० प्रतिभागियों ने प्रतिभाग किया एवं पेटेंट से सम्बंधित ज्ञान लिया।

यूकॉस्ट द्वारा आयोजित पर्यावरण संरक्षण हेतु पौधारोपण

उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद एवं यूके-एड संस्था द्वारा ग्राम सभा मोहकमपुर खुर्द के चाणक्य पुरम क्षेत्र एवं कर्नल ब्राउन स्कूल परिसर में २५० से ज्यादा पौधों का रोपण किया गया। जिसमें काफी संख्या में ग्रामवासियों, यूकॉस्ट एवं यूके-एड के प्रतिनिधियों और स्कूल के छात्र-छात्राओं ने भाग लिया। इस कार्यक्रम के अर्न्तगत देहरादून के विभिन्न हिस्सों में वृक्षारोपण कार्यक्रम चलाये गये, जिसमें ग्राम सभा मोहकमपुर-खुर्द एवं कर्नल ब्राउन में तथा १५ अगस्त को स्वतंत्रता दिवस के मौके पर विज्ञान धाम, झाझरा में एक बड़े वृक्षारोपण कार्यक्रम का आयोजन किया गया। १५ अगस्त के शुभअवसर पर यूकॉस्ट निदेशक, डा० राजेन्द्र डोभाल ने वृक्षारोपण कार्यक्रम का शुभारम्भ सिलवर ओक वृक्ष रोप कर किया। तद्रोपरान्त यूकॉस्ट के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने यूके-एड के कर्मचारियों के साथ, निदेशक महोदय की उपस्थिति में विज्ञान धाम, झाझरा में २०० से अधिक वृक्षों का वृक्षारोपण किया। इस अवसर पर निदेशक, यूकॉस्ट ने कहा कि विकास की इस अंधी दौड़ में हमें पर्यावरण को नहीं भूलना चाहिए। यूके-एड संस्था के सचिव श्री पंकज शाह ने बताया कि यूके-एड विगत कई वर्षो से पर्यावरण बचाओ अभियान में सक्रिय है तथा अपने नारे स्वच्छ उत्तराखण्ड, हरा भरा उत्तराखण्ड के प्रति कृत संकल्पित है।

यूकॉस्ट द्वारा प्रदत्त यात्रा अनुदान

शोधकर्त्ताओं एवं वैज्ञानिकों को राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित कार्यशालाओं/सेमिनार/संगोष्ठी इत्यादि में प्रतिभाग करने हेतु यूकॉस्ट सदैव प्रोत्साहन देता है। विगत चार माह में भी 07 (सात) शोधकत्ताओं/वैज्ञानिकों को यूकॉस्ट द्वारा यात्रा अनुदान दिया गया, जिससे वे इन कार्यशाला/सेमिनार/संगोष्ठी इत्यादि में सम्मिलित हो सकें।

क्रं.सं.	नाम	स्थान	दिनांक
1.	श्रीमती भावना पाण्डे, जी0बी0 पन्त विश्वविद्यालय, पंतनगर।	ट्रीस्टे, इटली	03-04 मई, 2010
2.	प्रो0 बी0आर0 अरोड़ा, भूतपूर्व निदेशक, वाडिया इन्स्टीटयूट ऑफ हिमालन जियोलॉजी, देहरादून।	तापैइ, ताईवान	20-25 जून, 2010
3.	डा0 गुंजन पुरोहित, डी0ए0वी0 पी0जी0 कालेज, देहरादून।	ट्रीस्टे, इटली	05-16 जुलाई, 2010
4.	डा0 एम0एल0 शमा, जी0बी0 पन्त विश्वविद्यालय, पंतनगर।	कियो यूनिर्वस्टी, जापान	26-27 जुलाई, 2010
5.	डा0 एस0एस0 सिंह, कृषि विज्ञान केन्द्र, ढकरानी, देहरादून।	लिसबन, पोर्तगाल	22-27 अगस्त, 2010
6.	डा0 दिनेश भट्ट, गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार।	कैम्पौस डो जारडिओ, ब्राजील	22-28 अगस्त, 2010
7.	प्रो0 सी0एम0 शर्मा, एच0एन0बी0 गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर।	सिओल, कोरिया	23-28 अगस्त, 2010

औषधीय एवं सगंध पौधों के उत्पादन व संरक्षण के लिए दो दिवसीय प्रशिक्षण कार्यक्रम

केन्द्रीय औषधीय एवं संगध पौंधा संस्थान, सीमैप, लखनऊ एवं उत्तराखण्ड विज्ञान शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र (यूसर्क), विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, देहरादून द्वारा प्रायोजित परियोजना के अन्तर्गत दिनांक 26–27 मई, 2010 को सीमैप अनुसंधान केन्द्र, पंतनगर में प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया जिसमें 09 महिलाओं व 13 पुरूषों ने प्रतिभाग किया। दिनांक 17–18 जून को भी दो दिवसीय उद्यमिता प्रशिक्षण कार्यक्रम सीमैप संसाधन केन्द्र पुरड़ा बैजनाथ के निकट बागेश्वर में आयोजित किया गया। इस कार्यक्रम में 13 महिला एवं 05 पुरूष लाभान्वित हुए। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम को डा0 ए0के0 सिंह के प्रयास से सम्भव किया गया। प्रतिभागियों को औषधीय एवं संगध पौधों के उन्नत कृषिकरण गुणमूल्यांकन, आर्थिक रूप से उपयोगी औषधीय व संगध पौधों के बाजारीकरण आदि के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई। इसके अतिरिक्त पौधों से उत्पाद बनाने के बारें में भी बताया गया। प्रशिक्षण कार्यक्रम के उपरान्त प्रतिभागियों को सीमैप के अनुसंधान खेतों को भी दिखाया गया। ये सभी कार्यक्रम विभिन्न स्थानों से पधारे विद्वान वैज्ञानिकों द्वारा संपन्न कराए गये। इस प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रम द्वारा प्रतिभागी स्वयं उन्नत कृषिकरण व गुणमूल्यांकन कर सकने में सक्षम होगें।

ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम

ये कार्यक्रम भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रूड़की के 'अनवरत शिक्षा केंद्र' की प्रो0 रेणू भार्गव द्वारा 27–29 मई, 2010 में आई0आई0टी0 कैम्पस रूड़की में आयोजित किया गया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में 16 प्रतिभागियों ने भाग लिया, जिसमें 12 प्रतिभागी पुरूष वर्ग से व 04 प्रतिभागी महिला वर्ग से थे। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देष्य था कि किस प्रकार से नगरीय ठोस अपशिष्ट का निस्तारण व प्रबंधन किया जाये? प्रशिक्षण में डा0 संजीव अग्रवाल ने अपशिष्टों को उचित तरीके से एकत्रित व अलग करने के महत्व को बताया ताकि उनको उचित तरीके से निस्तिारित किया जा सके। डा0 रेणू भार्गव ने बताया कि सबसे पहले समस्या का पता होना चाहिए फिर उसके लिये उचित क्रियाएं निर्धारित की जानी चहिए, जिससे कि अन्त में उचित योजना बनाई जा सके। उचित योजना को सरकार के माध्यम से लागू करना चाहिए। डा0 प्रमोद कुमार ने बताया कि लैंडफिल साइटस की समय–2 पर जॉच होनी चाहिए। डा0 एम0पी0 शर्मा ने अपशिष्ट को रिसाइकिल व कम्पोस्ट करने की विधियां बताई। इन सब विद्वानों के व्याख्यानों व प्रशिक्षण द्वारा प्रतिभागियों को नगरीय ठोस अपशिष्ट निस्तारण की आवश्यकता व उपयोग के बारें में तकनीकी जानकारी दी गई। भविष्य में प्रतिभागी इन विधियों का उपयोग कर ठोस अपशिष्ट का निस्तारण करने में सफल हो सकेगें।

उत्तराखण्ड और मौसम बदलाव पर मंथन

05 जून, 2010

विश्व पर्यावरण दिवस पर ''उत्तराखण्ड और क्लाइमेंट चेंज'' पर इनवायरन्मेंट समिट का आयोजन सहारनपुर रोड़ स्थित एक होटल में किया गया। कार्यक्रम के मुख्य वक्ता प्रो० ए०एन० पुरोहित ने कहा कि वातावरण में ९५ प्रतिशत जल वाष्प है, जबकि सीओटू का हिस्सा मात्र तीन प्रतिशत है। शेश मात्रा अन्य गैसों की है। धरती के तापमान में वृद्धि के लिए बड़ी मात्रा में वाटर वेपर्स जिम्मेदार है, लेकिन वैज्ञानिकों के प्रभावशाली समुदाय ने समूची बहस को सीओटू को केंद्रित कर दिया है। उन्होंने विज्ञान को सनसनी के तौर पर पेश करने वाले वैज्ञानिको की निंदा करते हुए कहा कि पहले हिमयुग फिर ग्लोबल वार्मिंग व अब क्लाइमेट चेंज का होव्वा खड़ा कर जनसामान्य में भय पैदा किया जा रहा है। विज्ञान का जोर आम लोगों की जीवनचर्या को आसान करने में होना चाहिए, न कि भय पैदा करने में। उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद के निदेशक डा० राजेन्द्र डोभाल ने कहा कि जलवायु में आ रहे किसी भी नकारात्मक प्रभाव को सामूहिक प्रयास से ही नियंत्रित किया जा सकता है। पारम्परिक प्रदूषण के साथ आने वाले समय में मोबाइल, कम्पयूटर व भाँति-भाँति के इलेक्ट्रोनिक कचरा सबसे बड़ी चुनौती बनने जा रहा है। विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर पद्मविभूषण, पर्यावरणविद् श्री सुन्दर लाल बहुगुणा जी भी उपस्थित थे एवं उन्होंने चौड़ी पत्तियों वाले वृक्षों के लगाये जाने पर जोर दिया जोकि स्थानीय लोगों के लिए चारे का उत्पादन कर सके। बड़ी जल विघुत परियोजनाओं पर प्रतिबंध लगे, घर-घर सौर ऊर्जा का प्रसार हो।

वाडिया इंस्टीटयूट ऑफ हिमालयन जियोलॉजी के हिमनद विज्ञानी डा० डी०पी० डोभाल ने कहा कि उत्तरी व दक्षिणी ध्रुवो के ग्लेषियरों से हिमालयी ग्लेशियरों की तुलना ठीक नहीं। हिमालय के उत्तर पूर्व के ग्लेशियर तेजी से पिघल रहें हैं। जबकि पश्चिमी हिमालय में स्थित कश्मीर के कई ग्लेश्यिर बढ़ गये हैं। मध्य हिमालय स्थित उत्तराखण्ड के कुछ ग्लेशियर घट रहें हैं तो कुछ बढ़ भी रहे हैं। समिट, उत्तराखण्ड विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद, उत्तराखण्ड जैव विविधता बोर्ड, उत्तराखण्ड प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड व सी०आई०आई०, देहरादून की ओर से आयोजित की गई। कुमांऊ वि०वि० के कुलपति प्रो० वी०पी०एस० अरोड़ा ने वि०वि० में यूकॉस्ट के सहयोग से 'सेंटर फॉर क्लाइमेट चैंज एण्ड ग्लेशियोलॉजी' की स्थापना की घोषणा की।

पढ़ाई को रोचक बनाने हेतु कार्यशाला का आयोजन

08 जून, 2010

यूकॉस्ट, पहल एवं समाधान संस्था के संयुक्त तत्वाधान में पढ़ाई को रोचक बनाने विषय पर दून स्कूल में ''फोरम फॉर इमोशनल इंटेलिजेंस लर्निंग'' के दून चैप्टर द्वारा कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में विभिन्न स्कूलों के प्राचार्य, शिक्षकों एवं शिक्षाविशेषज्ञों ने भाग लिया। सभी ने बच्चों के लिए पढ़ाई को रोचक बनाने विषय पर चर्चा की। इस दौरान शिक्षा को रूचिपूर्ण बनाने संबंधी विषय पर हुई प्रतियोगिता के 150 प्रतिभागियों में से चुने गये 15 विजेताओं को पुरस्कृत भी किया गया। कार्यक्रम की शुरूआत शिक्षा सचिव मनीषा पंवार व दून स्कूल के हैड मास्टर पीटर मैकल्मुलिन ने दीप प्रज्जवल कर की। फोरम की चैप्टर हैड रश्मि वाधवा ने ''क्वालिटी एजुकेशन द नीड ऑफ द हावर'' पर प्रस्तुतिकरण किया। इसके माध्यम से उन्होंने बताया कि डर, बैचेनी व चिंता जैसी भावनाएं संक्रामक होती है। इसी प्रकार

हंसी–खुशी जैसी भावनाएं भी संक्रामक होती है। लेकिन आमतौर पर अभिभावक अपने बच्चों के अन्दर स्वयं ही डर भर देते हैं। इसी विषय पर हुए पैनल डिस्कशन में कई शिक्षाविदों ने भाग लिया व अपने अनुभवों को प्रतिभागियों में बांटा।

वैकल्पिक ऊर्जा

एवं उत्तराखण्ड के परिपेक्ष में उपयोगिता विषय पर सेमिनार का आयोजन

15 जुलाई, 2010

यूनिवर्सिटी ऑफ पैट्रोलियम एण्ड एनर्जी स्टडीज में वैकल्पिक ऊर्जा विषय पर दो दिवसीय सेमिनार का आयोजन आज के युग में ऊर्जा का उपयोग दिन प्रतिदिन बढ़ रहा है अतः वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतो के विषय में जानकारी व उपयोग को ध्यान में रखते हुए सोलर एनर्जी, बायोगैस, बायोडीजल एवं विंड एनर्जी पर विस्तार से चर्चा हुई। सेमिनार का उद्घाटन ऊर्जा मंत्री श्री राजेन्द्र सिंह भण्डारी ने किया। सेमिनार में प्रदेश में अक्षय ऊर्जा की संभावनाओं एव आवश्यकताओं पर प्रस्तुति दी गई। इस अवसर पर ऊर्जा विशेषज्ञों ने उत्तराखण्ड में गैर परम्परागत स्रोतों से ऊर्जा प्राप्त करने की तकनीक व सम्भावनाओं पर अपने-अपने अनुभव प्रस्तुत किये।

इस अवसर पर शिक्षकों व अधिकारियों ने बताया कि १०० लीटर बायोडीजल का प्रतिदिन उत्पादन किया जा सकेगा। प्लांट में जैट्रोफा पौधे के बीजों से डीजल बनाया जाता है। लगभग साढ़े तीन किलो बीजों से एक लीटर बायोडीजल बनता है। इस बायोडीजल को डीजल के साथ मिश्रित कर प्रयोग में लाया जाता है। डा० कमल बंसल ने सौर ऊर्जा मिशन के विषय में जानकारी दी। उन्होंने बताया कि इस मिशन के द्वारा सूबों में बढ़ती ऊर्जा की आवश्यकताओं को सौर ऊर्जा के माध्यम से पूरा किया जा सकता है। सौर ऊर्जा व पवन ऊर्जा अपने पर्यावरण को नुकसान भी नहीं पहुंचाती है।

इसी अवसर पर यूकॉस्ट के निदेशक, डा० राजेन्द्र डोभाल ने बताया कि प्रदेश में विंड मैपिंग की आवश्यकता है क्योंकि प्रदेश की भौगोलिक स्थिति के अनुसार यहाँ विंड एनर्जी की काफी सम्भावनाए है। उत्तराखण्ड बायोयूल्स के निदेशक डा० ए०के० लोहिया के अनुसार कैटल डंग से ऊर्जा का भंडार तैयार किया जा सकता है।

अन्त में पैट्रोलियम विश्वविद्यालय के निदेशक अरूण ढांड ने बताया कि ईधन क्षेत्र में काम करने वाले हर संस्थान का पैट्रोलियम विश्वविद्यालय स्वागत करता है। वि०वि० के अपने परिसर में ही १०० किलोवाट का सौर ऊर्जा सयंत्र लगाया गया है। जिससे प्रतिवर्श विश्वविद्यालय को एक लाख २५ हजार यूनिट बिजली प्राप्त हो सकेगी।

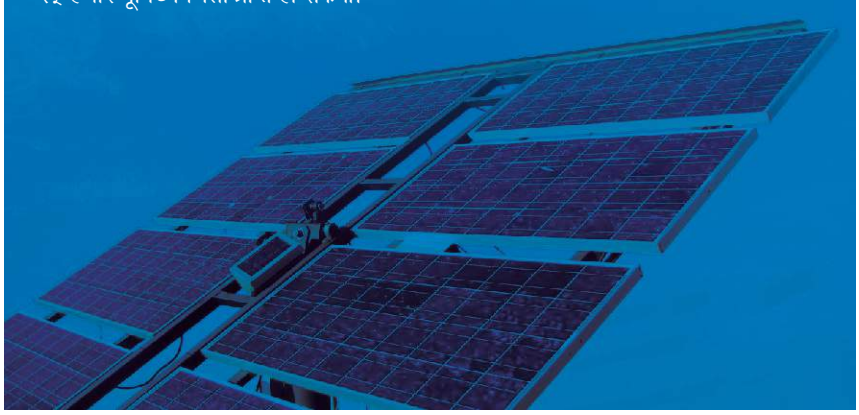

नॉनलिनियर विश्लेषण एवं गणित

की उपयोगिता पर सेमिनार का आयोजन

हेमवती नन्दन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय के पौड़ी परिसर में आयोजित "Non Linear Analysis & Application of Mathematics" विषय पर उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद की सहायता से प्रायोजित सेमिनार का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया, जिसमें दश के विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं संस्थाओं के 100 से अधिक प्रतिनिधियों द्वारा प्रतिभाग किया गया।

सेमिनार के उद्घाटन के अवसर पर मुख्य अतिथि प्रो0 दानी, चेयरपर्सन, नेशनल बोर्ड आफ हायर मैथामेटिक्स ने विद्यार्थियों/शोधार्थियों को अपना ज्ञान विस्तार करते हुए आगे बढ़ने का आह्वान किया व कहा कि ऐसे आयोजन गणित के विद्यार्थियों व शोधार्थियों के लिए लाभदायक होंगें। National Board of Higher Mathematics के द्वारा चलाये जा रहें कार्यक्रमों एवं गणित विषय की शिक्षा, शोध व विकास के लिए बोर्ड द्वारा किये जा रहे प्रयासों की जानकारी देते हुये उन्होंने इसका लाभ उठाने का सुझाव प्रतिभागियों को दिया। अध्यक्षता करते हुए गढ़वाल वि0वि0 के विज्ञान विभागाध्यक्ष प्रो0 एस0सी0 तिवाड़ी ने गणित का बाइलोजिकल साइंस में कैसे प्रयोग किया जाए, विषय पर चर्चा की। आयोजन सचिव पौड़ी परिसर के डा0 यू0सी0 गैरोला ने बताया कि सेमिनार के माध्यम से शोध में ''नॉनलिनियर विश्लेषण'' जैसे जटिल समीकरणों को हल करने के उपाय व लाभ भी बताए गये। सेमिनार में एप्रोक्सीमेशन, फिक्सड प्वाइंट, आपरेटर, ऑप्टीमाइजेशन थ्योरी के साथ फैक्टल एनालिसिस व सैल्फ वैल्यूड एनालिसिस पर जोर दिया गया।

वृक्ष विज्ञान

वीणापाणी जोशी

विश्व के समक्ष पर्यावरण प्रदूषण की समस्या दिन–प्रतिदिन गंभीर रूप धारण करती जा रही है, जिसका कारण बढ़ती हुई जनसंख्या तथा घटती हुई वनस्पति है। वनस्पति और जीव–जगत का अभिन्न सम्बन्ध है, इनकी पारस्परिक उपयोगिता पर ही इनका कल्याण निर्भर है। इसके लिए हमें वनस्पति के विषय में गंभीरतापूर्वक सोचने की आवश्यकता है। कुछ कहने से पूर्व मुझे राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरणगुप्त की सुविख्यात पुस्तक 'भारत भारती' की पंक्तियां याद आ रही हैं:–

"हाँ और ना भी अन्यजन, करना न थे जब जानते,

थे ईश के आदेश से हम वेदमन्त्र बखानते।

जो थे हजारों वर्ष पहले जिस तरह हमने कहे,

विज्ञान वेत्ता अब वही सिद्धान्त निश्चित कर रहे।।"

आज विश्वभर में पर्यावरण संरक्षण हेतु, वृक्षारोपण संवर्धन एवं संरक्षण के लिए हर देश चिंतित है। इसके लिए नई–नई वैज्ञानिक पद्धतियां तथा तकनीक का सहारा लिया जा रहा है। पृथ्वी का जो रूप जीवधारियों के रहने योग्य बना उसकी संरचना में हजारों वर्ष लगे। दीर्घकालिक प्राकृतिक रचना प्रक्रिया के बाद ही पृथ्वी पर पारिस्थितिक सन्तुलन हो पाया तथा वसुन्धरा प्राणिमात्र और वनस्पति का आधार बनी। पृथ्वी पर जीवन योग्य परिस्थितियों को प्रकृति चक्र कहा जाता है। वैज्ञानिकों के मतानुसार वायुमण्डल के जिस घेरे से जीवधारियों को हवा मिलती हैं उसे ट्रोपोस्फीयर या क्षोभमंडल कहते हैं। यह पृथ्वी का निकटतम रक्षक घेरा है। सौर ऊर्जा छन कर उपयुक्त मात्रा में इससे हो कर आती रहती है। इसके बाद दूसरी परत स्ट्रटोस्फीयर या समतापमण्डल और उसके बाद की मीजोस्फीयर या मध्यमण्डल कहलाती है, और अन्तिम परत आयनोस्फीयर की है। आयनोस्फीयर का यह कवच अन्तर्ग्रहीय हानिकारण किरणों से पृथ्वी के जीवधारियों की रक्षा करता हैं। सूर्य से निसृत प्रचण्ड ऊर्जा तथा अन्य ग्रहों से आने वाली हानिकारक किरणों से पृथ्वी की रक्षा ये कवच करते हैं। वायुमण्डल में स्थित इस नैसर्गिक संरचना ने ही पृथ्वी पर जीवनदान दिया अन्यथा पृथ्वी भी दूसरे ग्रहों की भांति वीरान होती। मानव के लिए वरदान स्वरूप पृथ्वी के साथ अत्यधिक छेड़छाड़ भूसम्पदाओं का अशास्त्रीय–अवैज्ञानिक दोहन करना सर्वदा अनैतिक एवं विनाशकारी हैं। निरंतर बढ़ते हुए औद्योगीकरण से वायुमण्डल, जलाशय, पावन नदियां तथा वनस्पति बुरी तरह प्रभावित होते जा रहे हैं। अधिक उत्पादन के लिए कृत्रिम रसायनों का, कीट नाशकों का अधिक उपयोग करने से भूमि की उर्वरा शक्ति में दुष्प्रभावी परिवर्तन हो रहे है।

भारतीय संस्कृति आरंभ से ही महान रही है। वैदिक काल से ही प्रकृति एवं वनस्पति पूजन की परम्परा चली आयी है। "वसुधैव कुटुम्बकम्" तथा "सर्वेभवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः" की भावना में सार्वभौमिक कल्याण कामना है। प्रकृति प्रेम, वनस्पति पूजन, आस्तिकता या धर्म का जो भी भाव या दृष्टांत रहा हो, वह कोरा मिथक या काल्पनिक कथाएं नहीं है अपितु प्राचीन भारतीय जीवन दर्शन में मनीषियों ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण, प्रकृति पूजन को इसलिए महत्व दिया कि प्रकृति हमारी संरक्षिका रही है हमारा जीवन ही प्राकृतिक उपादानों पर निर्भर रहता आया है। मानव प्रकृति का सम्पूर्ण उपभोग करता है। यह उपभोग उसके अपने भरण पोषण तक सीमित होना वांच्छनीय है। ईशावास्योपनिषद् में लिखा है:–

"ईशावास्यमिदंसर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।

तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः
कस्यचिद्धनम्"।।

संक्षेप में इसका अर्थ यों हुआ, 'संसार में जो कुछ भी है उसमें ईश्वर का निवास है। इसे त्यागपूर्वक उपभोग करना चाहिए। लालच मत करो।

किन्तु आज पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित हमारा मन अपनी मूल संस्कृति को भूल चुका है, फलतः प्रकृति में विद्यमान आधिदैविक शक्ति को उपेक्षित कर आधिभौतिक शक्ति की महत्ता को समझकर अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए प्रकृति से अधिकाधिक लाभ पाना चाहता है। कम समय में कम प्रयास से अधिक पाना चाहता है जोकि सर्वथा अवैज्ञानिक है।

प्राकृतिक उपादानों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण हमारे वृक्ष हैं। वनस्पति की महिमा को समझते हुए प्राचीन भारतीय वैज्ञानिकों ने जिन्हें हम ऋषि कहते हैं, सतत साधना एवं शोध आधारित वृक्षविज्ञान पर अनेक ग्रन्थ लिखे। कश्यप ने काश्यप–संहिता में वृक्षायुर्वेद की रचना की है, जिसमें उन्होने विभिन्न प्रकार की कृषि और वृक्षों का विज्ञान बताया है। अनुचित और अनियम से वृक्षछेदन से उभयलोक दुर्गति होती है। वनस्पति हत्या के भ्रूण पाप द्वारा वंशविनाश होना बताया गया ह। महर्षि याज्ञवल्क्य ने

"इन्धनार्थे द्रुमच्छेदः" पाप बताया है। किन्तु मुनि कश्यप ने बताया है कि देववृक्ष, तीर्थस्थान के और स्वस्थ युवा वृक्षों को छोड़कर हवा से गिरे सूखे वृक्षों को आवश्यकतापूर्ति हेतु ले सकते हैं।

वृक्षारोपण के लिए रोहिणी, मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु अनुराधा, रेवती, मूल, श्रवण हस्त नक्षत्रों को प्रशंसनीय बताया गया है। इसी प्रकार बीज बोने से पूर्व भूमि का संस्कार करना अर्थात भूमि को शोधित करना बताया गया हैः–

"शुचिर्भूत्वा तरोः पूजां कृत्वा स्नानानुलेपनैः।

रोपयेत् रोपितांश्चैव पत्रैस्तैरेव जायते।। 1।।

मृद्वी भू सर्ववृक्षाणां हिता तस्यां तिलान्वपेत्।

पुष्पितां तांश्च मृद्वीयात कर्मैतप्रथमं भुवः।। 2।।

स्नान अनुलेपनादि से पवित्र हो कर वृक्षारोपण करें (भूमि को खोद कर पत्थर साफ) कर सर्वप्रथम तिल बोवें। जब तिल के पौधें पुष्पित हो जाँय, तब हल लगाकर उन पौधों को उस जमीन में उलट–पलट कर चूर देना यह भमि का प्रथम संस्कार है। इससे पृथ्वी की उर्वरा शक्ति का विकास होता है। इसके पश्चात् ही खेती की जाय।

प्रत्येक वस्तु में विद्यमान आधिदैविक तत्व की रक्षा करने से भले ही आधिभौतिक लाभ न हो किन्तु अन्न को ब्रह्मस्वरूप कहा गया है, जिससे जीवन में बल विवेक और ओज की वृद्धि होती है। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में पावन परिवेष की कल्पना के साथ ही भूमिविज्ञान के अनुसार भूमि का उपयोग किया जाना बताया गया है जिससे मनुष्य निरोग, ओजस्वी, वीर्यवान तथा समर्थ हो तथा भू सम्पदा के उपयोग के फल आधिदैविक गुण परक हों। वृक्षारोपण के विषय में मुनिवर कश्यप कहते हैं कि बगीचे में सर्व प्रथम इन वृक्षों को लगाना चाहिएः–

"अशोकचम्पकारिष्टपुन्नगाश्च प्रियंगवः।

शिरीषोदुम्बराः श्रेष्ठाः पारिजातकमेव च।।

एते वृक्षाः शुभाः ज्ञेयाः प्रथमं तांश्च रोपयेत्।।"

अशोक, चम्पा अरिष्ट, पुन्नाग प्रियंगु, शिरीष, उदुम्बर तथा पारिजात, इन वृक्षों को पहले लगाना चाहिये। ये वृक्ष शुभ माने जाते हैं। इनमें देवताओं का निवास होता है।

वृक्षों की कलम तैयार करने की विधि, उनके रोपण की विधि, रोगनिवारण तथा उपचार, अधिक व पुष्ट फल पाने के सभी उपाय विषय विस्तृत रूप से काश्यप संहिता में वर्णित हैं।

पनसाशोककदली जम्बूलकुचदाडिमाः।।

द्राक्ष्यापालिवनाश्चैव बीजपूरातिमक्तकाः।

एते द्रुमाः काण्डरोप्याः गौमयेन प्रलेपिताः।।

मूलोच्छेदेथवा स्कन्धे रोपणीयाः परे ततः।।

अजातशाखान् शिशिरे जातशाखान् हिमागमे। वर्षागमे च सुस्कन्धान् यथादिक्स्थान्प्ररोपयेत्।

उक्त वृक्षो की कलमें इस प्रकार लगानी चाहिये, पहले गांठ की जगह पर गोमय से पट्टी बाँधे और जब कलम तैयार हो जाय, तब उसे वहाँ से काटकर दूसरे सजातीय वृक्ष पर लगावे, जब दूसरी जगह वह कलम लगावे, तो मिट्टी से उस जगह का लेपन कर दे और जड़ को गाढ़ी मिट्टी से बांध दे।

कलम किस ऋतु में पृथ्वी पर जमानी चाहिए–जिन वृक्षों में लता–अंकुर न आए हों, उन्हे शिशिर ऋतु (माघ फाल्गुन) में लगावे और जिनके लता–अंकुर निकल गये हों, उन्हें मार्गशीर्ष (पौष मास) में तथा जिनकी पत्ती व टहनी, खुब उठ आयी हों, उन्हें वर्षाकाल में। जिस दिशा में जो वृक्ष लगाना लिखा है, उसे क्रमपूर्वक लगाने से उनमें दिव्य शाक्ति का विकास यानी देवताओं का वास होता है।।

घृतशीरतिलक्षौद्रविडङ्गक्षीरगोमयैः।

आमूलसकन्धलिप्तानां संक्रामणविरोपणम्।।

एक स्थान से उठाकर दूसरे स्थान में जब वृक्ष लगाया जाता है, तो उसके जड़ से लेकर शाखा पर्यन्त को घी, तिल, शहद, बिड़ंग, गो–दुग्ध और गोबर इन सबको इक्टठा कर हाथ से सब चीजों को मिला कर उस वृक्ष पर लेपन कर दे, तब दूसरी जगह पर लगावे।।

कश्यपसंहिता में लिखा है –

अन्तरं विंशतिः हस्ता वृक्षाणामुत्तमं स्मृतम्।

मध्यमं षोडशज्ञेयमधमं द्वादशस्मृतम्।।

एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष का अन्तर 20 हाथ उत्तम है। जगह कम हो तो 16 हाथ, लेकिन 12 हाथ से कम अन्तर में फल अच्छे नहीं होंगे। इसमें भी बड़े पौधे के लिहाज से अनके बीच कितनी जगह खाली रखनी चाहिए जिसमें पौधे अपनी खुराक आसानी से खींच सके और दूसरे के हिंसक न बन सकें। जिस प्रकार मनुष्यों को जलवायु परिवर्तन या विषम होने से रोग होते हैं उसी तरह वृक्षों को भी अधिक शीत, धूप, हवा से रोग होते है। जो वृक्ष जितना सर्दी गर्मी और हवा सहन कर सकता है उससे अधिक या कम उस वृक्ष के लिए रोग जनक है। यह आवश्यक नहीं कि सब प्रकार के वृक्षों को समान जलवायु चाहिए। वृक्षों की विविधता और फसल की विविधता को समझते हुए उनका क्रम जानना चाहिए। जब वृक्ष रोगी होते हैं तो उनके पत्ते धूसर होने लगते है, अंकुर मुरझाने लगते है, टहनियाँ सूखने लगती है और वृक्ष से रस का निर्यास निकलने लगता है। इस अवस्था में उन वृक्षो की चिकित्सा करनी चाहिए।

चिकित्सितमथैतेषां शस्त्रेणादौ विशोधनम्।

विडङ्गघृतपङ्क्तान् सेचयेद् क्षीरवारिणा।।

प्रथम सूखी–सूखी टहनियों को कैंची से छाँट दे और फिर विड़ंग, घृत, कीचड़ सबको मिलाकर उस पर खूब लेप दे तथा पानी में दुग्ध मिला कर उस पानी से उसे सींचता जाय, जब तक वह वृक्ष ठीक न हो जाय।।

जिस वृक्ष के फल सूख जाँय या कीड़ा लग जाय, फल न आवे उसको, कुलत्थ, उड़द, मूंग, तिल, जव इन सबको पीस कर जल में भिगोकर दूध में पका ले और जब दूध ठण्डा हो जाय (याने दूध इतना ज्यादा डाले कि दवा पककर पनेरी रहे) तब दूध से पिचकारी करे या जड़ में सींचे, तब फल खूब लगेंगे। कश्यप कहते हैं कि फल जिस वृक्ष में न आये या कम आये तो उनकी चिकित्सा इस प्रकार करेः–

बकरी का गोबर दो प्रस्थ, तिल चार प्रस्थ, एक प्रस्थ जौ का सत्तू, सौ प्रस्थ गोबर, दो सौ प्रस्थ जल इनकी खाद बना सात दिन गढ़े में रक्खे तब वृक्षों को दे, इससे फल खूब आयेंगे। बीज अच्छे बनाने का प्रयोग वाराहमिहिर कहते हैः–

घी के हाथ से मलकर बीच को दुग्ध में रख दे, फिर सुखाकर घी के हाथ से दुग्ध में रक्खे। इस तरह 10 दिन रोज करता जाय, पीछे सूखे गोबर के साथ्थ खूब मलकर दाने–दाने सुखा दे, तब वह बीज उत्तम धान्य को पैदा करता है।

मानव जाति की प्राणरक्षा हेतु आयुर्वेद के ग्रन्थों की रचना वनस्पति सृष्टि के आधार अर्थात वृक्ष विज्ञान के गुणावगुण के आधार पर ही की गई है। भारतीय संस्कृति और वनस्पतियाँ परस्पर मणिकांचनमाला सी गुँथी हुई हैं।

संदर्भ : प्राच्यशिक्षा रहस्य, ले. हरिदत्त शास्त्री, 1951

अध्यक्ष, धाध महिला समिति, देहरादून

पत्थर का जन्म प्रमाणपत्र

अजय कुमार बियानी

मैं सड़क के किनारे पड़ा अदना सा पत्थर कभी ट्रक, कभी बस तो कभी पावों द्वारा बुरी तरह से रौंदा जा रहा हूँ। मेरी चिन्ता तो किसी को है नहीं बल्कि आने जाने वाले मुझे बुरी निगाह से तिरस्कृत करते रहते हैं क्योंकि मैं उनके आवागमन मे बाधक जो हूँ। अभी सुबह की ही बात है, दो स्कूली छात्र मुझे घूरते हुए कहते जा रहे थे कि ये पत्थर पिछले पन्द्रह दिनों से यहाँ पड़ा है, पर किसी ने इसको हटाया तक नही। उनके इस वाक्य ने मुझे विचलित कर मेरे आत्म सम्मान को ठेस पहुंचाई। अरे! मैं हूँ तो यह दुनिया है। अगर मैं नहीं होता तो यह दुनिया भी नहीं होती। मेरा भी जन्म होता है और विनाश भी। जन्म के साथ ही प्रताड़ना और परिवर्तन का दौर शुरू हो जाता है। इसको कब तक भुगतना पड़ेगा यह तो मैं स्वयं भी ठीक से नहीं जानता हूँ। हाँ, मैं अपने जन्म को अवश्य जानता हूँ। पत्थर हूँ तो क्या हुआ मेरा भी तो जन्मदिन होता है, मेरी भी तो उम्र होती है। कोई अगर मुझसे पूछे कि मेरी उम्र कितनी है, तो उम्र बताने में मै असहजता महसूस करता हूँ। पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों की उम्र सौ–सवासौ वर्ष तक ही हो सकती है, बड़े–बड़े वृक्षों की उम्र तीन–चार सौ वर्ष तक की हो सकती है। मेरी उम्र में समय की इस तुच्छ सी नाप का अक्सर कोई महत्व नही होता है। मेरी उम्र लाखों, करोड़ों अथवा अरबों वर्ष की भी हो सकती है। इसका यह अर्थ नही निकलना चाहिए कि मैं आजकल उत्पन्न नही हो रहा हूँ। जब से पृथ्वी माता अस्तित्व में आई है तभी से कभी यहाँ तो कभी वहाँ पर जन्म लेता रहता हूँ। आज भी मेरा जन्म ज्वालामुखियों द्वारा हो रहा है। मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि हर पत्थर की अलग–अलग उम्र होती है। कोई नया है तो कोई पुराना, किसी का अगर यह पहला जन्म है तो किसी का पुनर्जन्म। मेरा हर बन्धु–बान्धव अपने साथ अपनी पूरी राम कहानी और बर्थ सर्टीफिकेट लेकर साथ घूमता है।

मेरी राम कहानी और जन्म प्रमाणपत्र, भूविज्ञानियों के लिए कौतूहल का विषय रहा है। आखिरकार वे ही तो मुझ में से सोना–चांदी, हीरे–पन्ने, पेट्रोलियम जैसे पदार्थ निकलवाते हैं। मेरी आपके लिए उपयोगिता भूवैज्ञानिक ही बताते हैं और वे ही मेरी वास्तविक आयु जानने का प्रयास करते हैं। एक दक्ष भूवैज्ञानिक मेरी शक्ल सूरत देख कर लगभग सही आयु का आकलन कर लेता है। भूविज्ञान के जटिल अन्वेषणों से मेरी सही–सही आयु पता लग जाती है। मेरी आयु भी वैसे ही ठीक–ठीक लिखी जाती है जैसी आपके बर्थ सर्टीफिकेट मे होती है।

मेरा जन्म प्रमाणपत्र मुझे कहीं से लाने की जरूरत नही होती है, वह मेरे अन्दर ही समाहित रहता है। मैं पृथ्वी के खानदान का एक हिस्सा हूँ। जैसे खानदान के अलग–अलग सदस्यों की आयु अलग–अलग होती है वैसे ही अलग–अलग पत्थरों की आयु अलग–अलग हो सकती है। पृथ्वी का प्रादुर्भाव आज से करीब 4.6 अरब वर्ष पूर्व हुआ था। उस वक्त के मेरे पितामह आज मौजूद नहीं है। आज हमारा सबसे वरिष्ठ सदस्य करीब 4.3 अरब वर्ष पुराना है जो ग्रीन लैंड के उतरी क्यूबैक क्षेत्र का निवासी है। आपको यह जानकर सुखद आश्चर्य होगा कि मेरे अरबों वर्ष पुराने सदस्यों की आयु में दस–बीस लाख साल की उम्र की हेराफेरी का सामान्य तौर पर कोई महत्व नहीं होता है।

अब मैं अपने अन्दर की उन रहस्यमयी जानकारियों को उजागर करता हूँ, जिनसे

किसी भी पत्थर की उम्र का पता लग सकता है। उम्र निकालने का सबसे आसान तरीका है, मेरे अन्दर पाये जाने वाले आदिकालीन प्राणियों और वनस्पतियों के अवशेष पंच महाभूतों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश) को तो आप जानते ही हैं। मनुष्य की मृत्यु के पश्चात् उसका शरीर इन महाभूतों में विलीन हो जाता है। आप इस गुमान में मत रहिए कि यह केवल मनुष्य के लिए है। प्रकृति का यह नियम सब प्राणी और पौधों पर लागू होता है। नियम के अपवाद भी होते हैं तो अपवाद स्वरूप उनके कुछ कठोर अंग समय के साथ उपयुक्त वातावरण मिलने पर पत्थर में परिवर्तित हो जाते हैं, जिन्हें आप और हम जीवाश्म के नाम से जानते हैं। हर जीवाश्म मे परिवर्तित हुआ प्राणी या वनस्पति, एक विशिष्ट समय पर ही पृथ्वी मे उपस्थित था। अगर किसी पत्थर के अन्दर जीवाश्म है तो उस पत्थर की भी वही आयु होगी जिस समय वह प्राणी या वनस्पति पृथ्वी पर सक्रिय था। जीवाश्म की तुलना आप गहनों से कर सकते है जो मैं अपने बनने के वक्त से धारण किये रहता हूँ जैसे महाभारत का योद्धा कर्ण जन्म से ही कवच और कुण्डल धारण किये हुए था। जिस प्रकार हर स्त्री के पास गहने नहीं हो सकते हैं उसी प्रकार हर पत्थर में जीवाश्म नही होते हैं। साठ करोड़ वर्ष से पुराने मेरे भाई–बन्दों मे जीवाश्म होते हुए भी उनकी आयु का सही–सही निर्धारण मुश्किल होता है क्योंकि उस वक्त का जीवन आज के मुकाबले में बिल्कुल भी जटिल नहीं था।

उन्नीसवी शती के अन्त में महान वैज्ञानिक हेनरी बैंक रेल ने रेडियो धर्मिता की खोज की थी। रेडियो धर्मिता शब्द बड़ा बोझिल लगता है मानो कोई गूढ़ रहस्य वाला हो। इसे समझना आसान है। पृथ्वी पर पाए जाने वाले कई तत्व जैसे यूरेनियम, थोरियम अपने आप में विघटित होते रहते हैं और समय के साथ परिवर्तित हो कर नए तत्व में बदल जाते हैं। यह प्राकृतिक क्रिया अत्यन्त धीमी गति से भी होती है और किन्ही तत्वों में अत्यन्त द्रुत गति से भी। आज 117 में से करीब 40 से उपर रेडियो धर्मी तत्वों की जानकारी वैज्ञानिकों को है। अधिकांश रेडियो धर्मी तत्व हम पत्थरों में अपने–अपने स्वभाव के अनुसार पाये जाते हैं। याद रखिए आपकी तरह ही हम भी किसी ऐरे गैरे नत्थू खैरे तत्व को अपने अन्दर जगह नहीं देते हैं। जैसे आपकी पसन्द/नापसन्द होती है, उसी तरह हमारी भी पसन्द्र/नापसन्द होती है। मै अपने स्वभाव की चर्चा बाद में कभी करूंगा।

हम बात कर रहे थे कुछ तत्वों के विशेषगुण रेडियो धर्मिता की जिसके कारण मूल तत्व किसी दूसरे तत्व में समय के साथ बदल जाता है। यह बदलाव सीधे–सीधे भी हो सकता है जैसे एक तत्व दूसरे स्थायी तत्व में बदल जाए या यह क्रिया एक लम्बी श्रृंखला के माध्यम से सम्पन्न हो जिसमें अन्तिम स्थायी तत्व के पूर्व कई अन्य तत्व बारी–बारी से आए और परिवर्तित होते गए और अन्त मे एक स्थायी तत्व का निर्माण हुआ। क्रिया दोनों में से कोई भी हो पर महत्व की बात है कि इस बदलाव मे कितना समय लगेगा। अगर बदलाव के समय की सही जानकारी हो और मेरे अन्दर कितना रेडियो धर्मी मूल तत्व और मूल तत्व से उत्पन्न अंतिम स्थायी तत्व (डाटर एलीमेन्ट) कितनी मात्रा मे है तो समझ लीजिए कि मेरी सही उम्र निकल आई। मेरे अन्दर रेडियो धर्मी तत्वों की मात्रा नगण्य ही होती है। इस अत्यन्त अल्प मात्रा को जानने के लिए विशेष प्रकार के अति संवेदनशील 'मास स्पेक्ट्रोस्कोप' नामक करोड़ों की लागत वाले यंत्र की आवश्यकता होती है। इन यंत्रों का संचालन भी उच्च कोटि के तकनीशियन करते हैं। एक पत्थर में से आयु निकालने के लिए कम–से–कम दो सप्ताह का समय लग जाता है। पत्थरों की आयु ज्ञात करना और आयु का सही विश्लेषण करना भू आयु विज्ञान (जियोक्रोनोलॉजी) कहलाता है जो भूविज्ञान, रसायन विज्ञान और भौतिकी का सुन्दर समन्वय है।

अब मैं आपका परिचय भूआयु विज्ञान की कुछ विधियों से करवाता हूँ। आपने 'रेडियो कार्बन डेटिग' का नाम तो सुना ही होगा। वायुमंडल में बहुत उँचाई पर पायी जाने वाली नाइट्रोजन गैस पर जब सूर्य से निकली हुई कास्मिक किरणें टकराती हैं तो नाईट्रोजन रेडियो धर्मी कार्बन सी 14 में बदल जाती है। सामान्य रूप से पाई जाने वाली कार्बन को सी 12 कहते हैं। वातावरण गतिशील होने के कारण रेडियो धर्मी कार्बन सी 14 पृथ्वी पर उतर आती है और जहाँ भी हवा प्रवेश कर सकती है, उस जगह पर यह चली जाती है। अगर कुछ समय बाद हवा का प्रवेश रुक जाए तो उस तंत्र मे एकत्रित सी 14 धीरे–धीरे सामान्य कार्बन में विघटित होती है। संचित मात्रा का आधा विघटन जिसे हम रेडियो धर्मी तत्व की अर्द्ध आयु कहते है वह सी 14 के लिए मात्र 5570 वर्ष है। अगर सी 14 के विघटन से उत्पन्न तत्व की मात्रा ज्ञात कर ली जाए तो 50000 वर्ष तक के किसी भी प्रकार के पदार्थो की आयु आप निकाल सकते हैं। भूविज्ञान की दृष्टि से पृथ्वी के 4.5 अरब वर्ष के इतिहास में 50000 वर्षों का कोई महत्व नहीं होता है। परन्तु पिछले 50000 वर्षों मे वे सब घटनाएँ हुई हैं जो हमे सर्वाधिक प्रभावित करती हैं यथा मौसम परिवर्तन या हमारा स्वयं का इतिहास या विनाशकारी प्राकृतिक आपदाओं की आवृत्ति। याद रखिए इस दुनिया में मैने सिर्फ मनुष्य को ही आश्रय नही दिया। मेरी गोद में तो लाखों प्रकार के प्राणी और वनस्पतियाँ पली–बढी हैं और विलुप्त भी हुई हैं। पिछले 50000 वर्ष से पूर्व की घटनाओं के समय को जानने के लिये कई विधियाँ हैं।

आजकल बड़े पैमाने पर परमाणु ऊर्जा का उपयोग मनुष्य की ऊर्जा की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हो रहा है। परमाणु ऊर्जा फिलहाल तो यूरेनियम से उत्पन्न की जा रही है परंतु भविष्य मे थोरियम भी परमाणु ऊर्जा के उपयोग मे आने लगेगा जिसके भारत में विश्व मे सबसे बड़े भण्डार दक्षिणी प्रातों के समुद्र के किनारों की रेत में मौजूद हैं। ये रेडियो धर्मी तत्व कुछ विशेष किस्म के पत्थरों खासकर ग्रेनाईट जिसका आजकल बड़े पैमाने पर घरों मे उपयोग होता है में अल्प मात्रा में मिलते हैं। यह दोनों रेडियो धर्मी तत्व सीसे नामक तत्व मे करोड़ों वर्षों मे परिवर्तित हो जाते हैं। इनसे भी आयु ज्ञात की जाती है। मुझमें पाये जाने वाले कुछ तत्वों का विशिष्ट व्यवहार होता है। एक ही तत्व के भार में उसकी आन्तरिक संरचना के कारण मामूली सा परिवर्तन पाया जाता है। ऐसे विभिन्न भारों वाले एक ही तत्व के विभिन्न रूपों को वैज्ञानिक 'आइसोटोप' कहते हैं। कुछ तत्वों के कुछ आइसोटोप सामान्य या अरेडियोंधर्मी होते हैं और कुछ असामान्य अर्थात रेडियोधर्मी और कुछ के रेडियोधर्मी व अरेडियोधर्मी दोनों। इस तरह के तत्व हैं रुबीडियम और पोटेशियम। रूबीडियम स्ट्रांशियम तथा पोटेशियम अरगान नाम की असक्रिय गैस में बदलते हैं। रूबीडियम को आधे स्ट्राशियम मे बदलने के लिए करीब 5000 करोड़ वर्ष का समय लगता है तथा पोटेशियम को आधे अरगान में बदलने के लिए 1180 करोड़ वर्ष

का समय। एक सामान्य आदमी के लिए इतने विशाल समय के अन्तराल की कल्पना मुश्किल है, परन्तु उच्च कोटि के यंत्रों से सावधानीपूर्वक निष्पादित प्रक्रिया से मुझ में या मेरे अन्य भाइयों में चारो तत्वों की मात्रा सही सही ज्ञात की जा सकती है। एक बार मात्रा ज्ञात हो जाने के पश्चात् जटिल समीकरणों से हमारी आयु का पता लग जाता है। हम निर्जीव हैं इसलिए आपकी तरह कुछ भी छुपा नही सकते हैं। सामारियम नामक तत्व निओडायनियम में, रहे नियम ओसमियम मे, आयोनियम टीन में बदल जाते हैं। इन सब की अर्ध आयु बहुत ही अधिक होती है। इनसे भी पत्थर की आयु निकाली जा सकती है यद्यपि ये हर पत्थर मे मिलते नहीं।

आपको मेरी अभी तक वर्णित आत्मकथा से यह नहीं मान लेना चाहिए कि मेरे अन्दर केवल वे ही रेडियो धर्मी तत्व समाहित हैं जिनकी अर्ध आयु करोड़ो से अरबों वर्षों की है। इतना पुराना तो इस ब्रह्मांड का भी अस्तित्व नहीं। ब्रह्मांड कब उत्पन्न हुआ निश्चित तौर पर तो कोई नहीं बता सकता है, परन्तु आप यह मान कर चल सकते है कि यह कम से कम 1000 करोड़ वर्ष से भी अधिक पुराना होगा और पृथ्वी की आयु ब्रह्मांड की आयु के आधी से भी कम है। पृथ्वी बनने के साथ ही हम बने हैं और हम आज भी बन रहे हैं। मेरे शिशु बालक अथवा किशोर भाइयों की आयु बेरिलीयम, हायड्रोजन–3, अल्यूमिनीयम, क्लोरीन, सिलीकान, यूरेनियम 234, यूरेनियम 238 प्रोटेक्शीनीयम–थोरीयम, आयोनीयम–थोरीयम तथा रेडियम नामक तत्वों से ज्ञात की जा सकती है। मेरे अन्दर कुछ ऐसे भी पदार्थ होते हैं जो प्रकाश के प्रति संवेदनशील होते हैं। इस प्रकार के पदार्थों से भी आयु निकाली जा सकती है।

मै अपने जन्म प्रमाणपत्र की कहानी का अंत एक ऐसी विधि से करना चाहूँगा जो एक समय में बहुत लोकप्रिय थी पर अब इसे कोई महत्व नही देता हैं। ये जो यूरेनियम है ना उसके कुछ परमाणु मेरे अन्दर बिखरे रहते हैं। अपनी आदत से मजबूर अणु को विखण्डित होना ही है। बिखण्डन की प्रक्रिया में कुछ किरणें भी निकलती हैं जिन्हें वैज्ञानिक अजीबोगरीब, बेमतलब अल्फा, बीटा और गामा किरणों के नाम से पुकारते हैं। अल्फा किरणें भारी भरकम शरीर की होने के कारण अपनी दादागिरी से मेरे अन्दर अपेक्षाकृत गहरी रेखाएँ खुरच देती हैं और मेरे अच्छे खासे चेहरे को बदसूरत बना देती हैं। बीटा और गामा किरणें हल्की होने के कारण मेरी कठोरता उन पर हावी रहती है और वे खुबसूरती को कोई नुकसान नहीं पहुँचा पाती है। जितना पुराना मेरा जन्म होगा उतना ही बदसूरत मेरा चेहरा अल्फा किरणों के कारण होगा। मेरा बदसूरत चेहरा आप आसानी से नहीं देख सकते है, इसे देखने के लिए उच्च कोटि के माइक्रोस्कोप की आवश्यकता तो होती हैं, साथ ही तेजाब जैसी चीजों मे जबरदस्ती मुझे डुबाये रखना पड़ता है जो मेरी बदसूरती को और बढ़ा देता है। एक बार मेरी बदसूरती सामने आ जाए तो एक साधारण से सिद्धान्त कि जितना पुराना उतना ही ज्यादा बदसूरत (महिलाएँ क्षमा करें!) के आधार पर मेरी उम्र निकल आएगी। परन्तु आयु निर्धारण की इस विधि में एक अडचन है। वह यह है कि यह बदसूरती मेरे पूरे शरीर पर एक जैसी नहीं होती। मेरे हर बाहरी अंग की अलग–अलग होती है। इसी बहरूपियेपन के कारण कहीं से तो मै युवा लगता हूँ और कही से वृद्ध। इसलिये यह विधि बहुत विश्वसनीय नहीं मानी जाती।

मेरा बर्थ सर्टीफिकेट भी म्युनिसिपालटी अथवा नगर निगम के बर्थ सर्टीफिकेट के समान ही सामान्य रूप से विश्वसनीय होता है। कुछ लोग मेरा झूठा बर्थ सर्टीफिकेट भी बनाने का प्रयास करते हैं, जो अक्सर विवादों को जन्म देता है। कोर्ट की तरह ही इन विवादों का समाधान निकालने में वर्षो से दशकों का समय लग जाता है। समय और धन की हानि होती है सो अलग। हर विवाद एक गहरी चिन्तन प्रक्रिया को जन्म देता है। विज्ञान इसके कारण भी आगे बढ़ा है।

मेरी उम्र जान लेने से ही मेरी कहानी खत्म नही होती है। मेरी लम्बी जीवन यात्रा के अलग–अलग हजारों आयाम है। जब भी अवसर मिलेगा तो अपने दुख दर्द जीवन से लेकर सम्राटों के ताज का गौरव बनने वाली कहानी आपको सुनाता रहूँगा। याद रखिए आपको मेरी कहानी जायकेदार तभी लगेगी जब आप मेरे मित्र बनेंगे। मैं तो अपनी तरफ से आपसे मित्रता की ही अपेक्षा कर सकता हूँ। आशा है आप मुझे निराश नहीं करेंगे क्योंकि आपको मालूम हो या न हो मेरे बिना आपका जीवन नही चल सकता है। यही है मेरी औकात।

मुझे अपने पर कई बार गर्व भी होता है कि मैं मनुष्य के लिये आज भी वैसा ही उपयोगी हूँ जैसा अनादिकाल में था। आदि मानव अपनी शक्ति का प्रदर्शन मेरे माध्यम से करता था चाहे उसे अपने कुटुम्बी ही मारने हों अथवा जंगली जानवर। आज का मानव भी चाहे जितना विकास के गुण गाता हो परन्तु जब सामूहिक रुप से लड़ता है तो पत्थर बाजी में मेरा ही उपयोग करता है। मुझे प्रसन्नता तो तब होती है जब कंधे पर राइफल लादे, सुरक्षा कवच पहने हुए पुलिस वाला भी हमलावर भीड़ का जवाब पत्थर के बदले पत्थर से ही देता है क्योंकि मैं फ्री होने के साथ साथ सुलभ भी हूँ, घातक भी हूँ और लोगों को जान के लाले भी नहीं पड़ते है।

भूविज्ञान विभाग
डी.बी.एस. महाविद्यालय,
देहरादून

उत्तराखण्ड के विज्ञान संस्थान–I

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, देहरादून

एक अवलोकन

बृजेश कुमार,
अच्युतानन्द शुक्ला एवं
एस.के. श्रीवास्तव

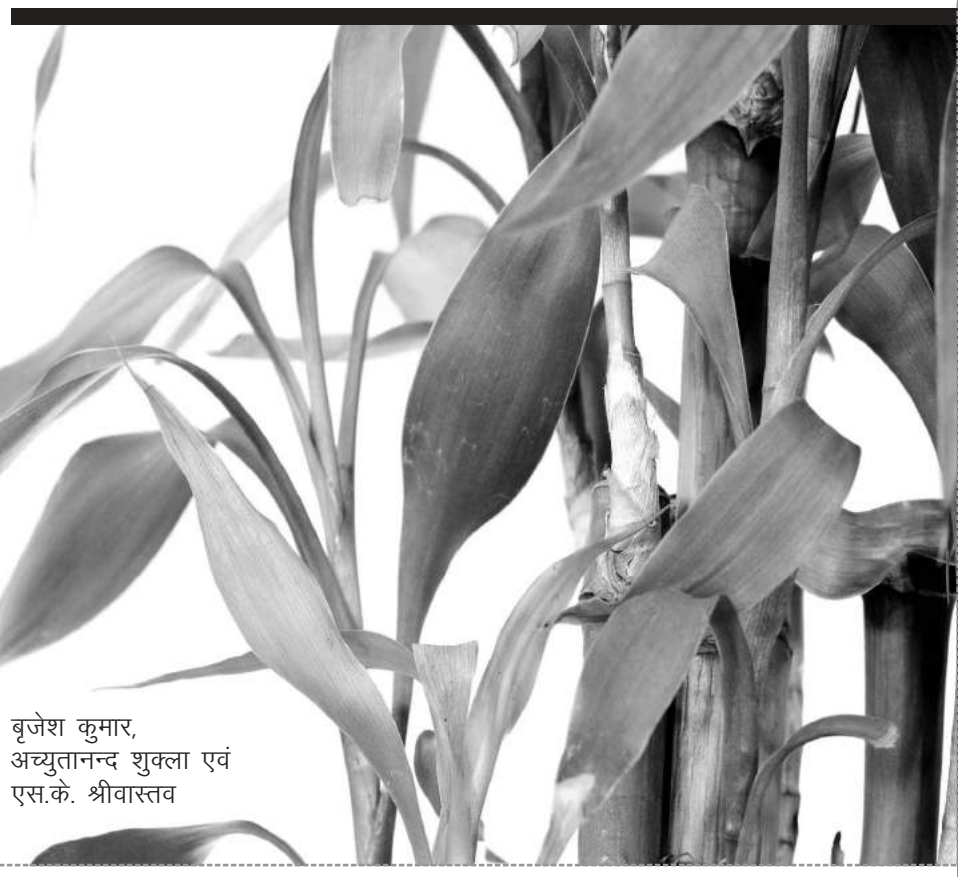

पृथ्वी पर जीवन उद्भव से लेकर अब तक यहां मौजूद समस्त जीवधारियों के जीवन का प्रमुख आधार वनस्पतियां बनीं। वनस्पतियों के महत्व को आदिकाल से ही मान्यता दी गयी है। वनस्पतियां भोजन का प्रमुख स्रोत होने के साथ–साथ इस धरती पर रहने वाले समस्त जीवधारियों के लिये प्राण वायु एवं जल का भी प्रबन्धन करती हैं। इसी क्रम में मनुष्य ने भी इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखकर वानस्पतिक संसाधनों का मूल्यांकन एवं सर्वेक्षण करना प्रारम्भ किया।

भारतीय उपमहाद्वीप भी अपनी जैव विविधता एवं वानस्पतिक विविधता के लिये प्रसिद्ध है। इसे सम्पूर्ण संसार के सर्वाधिक जैव विविधता वाले 14 क्षेत्रों में से एक होने का गौरव प्राप्त है। आदिकाल से ही ऋषियों, मुनियों एवं पारम्परिक वैद्यों द्वारा यहां प्रचलित पारम्परिक वानस्पतिक ज्ञान को वेदों, चरक संहिता, सुश्रत संहिता आदि जैसे अन्य पौराणिक ग्रन्थों में लिपिबद्ध करके संरक्षित किया गया। ये प्राचीन सन्दर्भ ग्रन्थ आज भी अति महत्वपूर्ण बने हुये हैं। इसके साथ इन्होंने समय–समय पर सुदूर देशों के लोगों का भी ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया। इसी क्रम में अरबी, पुर्तगाली, डच, फ्रांसीसी और अंत में ब्रिटिश व्यापारियों का आगमन हुआ।

ब्रिटिश शासकों ने यहां के वानस्पतिक ज्ञान की उपयोगिता को समझते हुये यहां के वन तथा वनस्पति के वैज्ञानिक प्रबन्धन हेतु नीतियों का निर्धारण कर, इनके अध्ययन एवं संग्रहण के कार्य प्रारम्भ किये। इस कार्य के लिये अनेक पादप वैज्ञानिकों जैसे कोएनिग, रॉक्सबर्ग, कैम्पबेल, वालिच, हूकर आदि का आगमन 18वीं सदी में भारत में हुआ जिन्होंने इस महाद्वीप में व्यापक रूप से पादप संग्रहण एवं सर्वेक्षण का कार्य प्रारम्भ किया। इस क्रम में 1787 में कर्नल रॉबर्ट किड की सिफारिश पर शिवपुर, कलकत्ता में रॉयल बाटनिक गार्डेन की स्थापना की गयी। इसका प्रमुख उद्देश्य महाद्वीप में मिलने वाले अद्भुत, विलक्षण, आर्थिक एवं औषधीय महत्व के पौधों को लाकर रोपित करना और संग्रहण करना था। शिवपुर, कोलकाता के साथ–साथ ही तत्कालीन बम्बई, सहारनपुर, मद्रास एवं अन्य जगहों पर भी इसी प्रकार के वानस्पतिक उद्यानों की स्थापना की गयी।

सन् 1871 में ले. कर्नल सर जार्ज किंग रॉयल बाटनिक गार्डेन, शिवपुर, कलकत्ता के प्रभारी बनाये गये। उन्होंने 1882 में एक पादपालय का निर्माण करा कर, इसमें तब तक उपलब्ध सभी सन्दर्भ ग्रन्थ, पुस्तकें एवं लगभग पांच लाख पादप नमूनों को इसके नये भवन में संग्रहीत कराया। पादप संग्रहण एवं सर्वेक्षण हेतु अनेक अभियानों को व्यापक रूप से चलाया गया जिससे इसमें मौजूद पादप नमूनों की वास्तविक संख्या 1897 में उनके कार्यकाल के अन्तिम समय में लगभग दुगुनी हो गयी।

इस सम्पूर्ण कार्य को एकीकृत कर सुचारू ढंग से विकसित करने के लिये एक केन्द्रीय सर्वेक्षण स्थापित करने के उद्देश्य से तत्कालीन ब्रिटिश सरकार द्वारा एक केन्द्रीय संस्थान की स्थापना को मंजूरी दे दी गयी। इस प्रकार 13 फरवरी 1890 को भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण की स्थापना हुई एवं सर जार्ज किंग भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के प्रथम निदेशक बनाये गये। वानस्पतिक ज्ञान को ठीक ढंग से समायोजित करने के उद्देश्य से देश को चार वनस्पति क्षेत्रों में बांटा गया। इन क्षेत्रों के केन्द्र उत्तर में सहारनपुर, दक्षिण में मद्रास, पूर्व में कलकत्ता (शिवपुर) एवं पश्चिम में बम्बई (पूना) थे। कलकत्ता को इन सभी क्षेत्रों का मुख्यालय बनाया गया। भारतीय

वनस्पति सर्वेक्षण में कार्य करने वाले महत्वपूर्ण वैज्ञानिकों में एच. फाल्कोनर, टी. एच. कोलब्रुक, डब्ल्यू ग्रिफिथ, हैमिल्स, विलियम राक्सबर्ग, नैथानियल वॉलिच, डेविड प्रेन, जे.एफ. डथी, आर. स्ट्रेची, जे.ई. विंटरबॉटम, डब्ल्यू मूरक्राट, जे. एफ. रॉयल आदि प्रमुख हैं। इन वैज्ञानियों ने भारतीय उपमहाद्वीप की वानस्पतिक विवेचना को महत्वपूर्ण आयामों के साथ संकलित किया।

सन् 15 अगस्त 1947 को भारत को स्वाधीनता प्राप्त होने के पश्चात् नवगठित सरकार में देश की पादप सम्पदा के सर्वेक्षण, पौधों की विस्तृत जानकारी, पारिस्थितिकी, आर्थिक महत्व, एवं जिलों, राज्यों तथा राष्ट्रीय पादप सम्पदा के मूल्यांकन के लिये अनेक कार्यक्रमों की रूप रेखा तय की गयी। इसी क्रम में डा. इ.के. जानकी अम्माल को इसका उत्तरदायित्व देते हुये विशेष कार्य अधिकारी नियुक्त किया गया तथा 29 मार्च 1954 को भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण का पुनर्गठन किया गया तथा कलकत्ता को इसका मुख्यालय बनाया गया। देश भर में पादप भौगोलिक महत्ता को ध्यान में रखते हुए चार स्थानों पर परिमण्डलों की स्थापना की गयी। ये परिमण्डल क्रमशः पूर्व में शिलांग, उत्तर में देहरादून, पश्चिम में पुणे एवं दक्षिण में कोयम्बटूर थे।

तत्कालीन नवगठित भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के प्रमुख उद्देश्य निम्न थे।

1. गहन पादप संरक्षण, तथा देश में पौधों की उपलब्धता, व्याप्ति एवं आर्थिक उपयोग की सटीक और विस्तृत जानकारी एकत्रित करना।

2. शैक्षिक और शोध संस्थानों के लिये उपयोगी सामग्री का संग्रहण, अभिनिर्धारण और वितरण।

3. सुनियोजित पादपालयों में प्रामाणिक संग्रहों का अभिरक्षण तथा स्थानीय जिला, राज्य और राष्ट्रीय वनस्पति जाल के रूप में पादप संसाधनों का प्रलेखन।

दिसम्बर 1957 में केन्द्रीय वनस्पति प्रयोगशाला, लखनऊ की स्थापना होने के पश्चात्, भारतीय वनस्पति उद्यान के पादपालय को भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण को हस्तान्तरित कर दिया गया जो कालान्तर में केन्द्रीय राष्ट्रीय पादपालय के नाम से लोकप्रिय हुआ। 1 जनवरी 1963 को भारतीय वनस्पति उद्यान का नियंत्रण पश्चिमी बंगाल राज्य सरकार द्वारा भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण को सौंपा गया। आबंटित कार्यों को प्रभावी ढंग से निष्पादित करने हेतु क्रमशः 5 नये परिमण्डलों की स्थापना की गयी।

केन्द्रीय परिमण्डल, इलाहाबाद (1962)
शुष्क क्षेत्र परिमण्डल, जोधपुर (1972)
अण्डमान निकोबार परिमण्डल, पोर्टब्लेयर (1972)
अरुणाचल प्रदेश परिमण्डल, ईटानगर (1977)
सिक्किम हिमालय परिमण्डल, गंगटोक (1979)

भारत गणतंत्र का वानस्पतिक उद्यान, नोयडा (2002)

डेक्कन परिमण्डल, हैदराबाद (2005)

वर्ष 2009 में भारतीय वनस्पति उद्यान को आचार्य जगदीश चन्द्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान नामित किया गया, तथा सभी परिमण्डलों का नाम क्षेत्रीय केन्द्र रख दिया गया।

समय–समय पर भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के कार्यक्रमों में सीमित क्षेत्रों, दुर्लभ एवं संकटापन्न पादप जातियों के मूल्यांकन तथा विवरणिका तैयार करना, संरक्षण की रणनीति बनाना, भंगुर परितंत्र, अभयारण्य, राष्ट्रीय उद्यान एवं जीव मण्डल रिजर्व जैसे संरक्षित क्षेत्र, वनस्पतीय घटकों में परिवर्तन की मॉनिटरिंग, परस्थानिक एवं स्वस्थानिक संरक्षण, पादप आनुवंशिक संसाधन के जर्म प्लाज्म, सीमित क्षेत्री तथा संकटग्रस्त जातियों आदि के गुणन और रख–रखाव, नृवनस्पति एवं भूस्थलीय अध्ययन, पादपालय राष्ट्रीय आधारी आंकड़ा के विकास को शामिल किया गया। सन् 1987 में विभाग के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का पुर्ननिर्धारण किया गया, जिसमें संकटग्रस्त जातियों की विवरणिका, पादप संसाधनों की गवेषणा एवं सर्वेक्षण, राष्ट्रीय तथा राज्य वनस्पति जात के प्रकाशन एवं राष्ट्रीय डाटा बेस को प्राथमिकता दी गयी।

फरवरी 1994 में भारत सरकार द्वारा जैव विविधता पर सम्मेलन के विचार बिन्दुओं के अनुसरण के फलस्वरूप भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण की भूमिका बढ़ गयी तथा सम्मेलन की धाराओं 7, 8, 9, 12, 16 में किये गये प्रावधानों के पालन के फलस्वरूप भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के प्राथमिक एवं गौण उद्देश्यों की विविधता बढ़ गयी।

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण के वर्तमान प्राथमिक एवं गौण उद्देश्य निम्नवत हैं :

प्राथमिक उद्देश्य :

1. सामान्यतः सम्पूर्ण देश और विशेष रूप से संरक्षित क्षेत्र वनस्पति भण्डार, भंगुर परितंत्र, नमभूमि, पावन वन आदि की गवेषाणा और विवरणिका।
2. राष्ट्रीय, राज्य, जिला वनस्पति जात, संरक्षित क्षेत्र, वनस्पति भण्डार, भंगुर परितंत्र आदि के वनस्पति जात के रूप में वनस्पति जात विविधता का प्रलेखन।
3. जैव विविधता में गुणात्मक एवं परिमाणात्मक परिवर्तन के मूल्यांकन हेतु मानिटरिंग।
4. सीमित क्षेत्री और संकटापन्न जातियों का अभिनिर्धारण, उनका मानचित्र का अभिनिर्धारण।
5. परम्परागत और जैव तकनीकी पद्धति से वनस्पति उद्यानों में अति संकटापन्न पेड़–पौधों की जातियों का परस्थाने संरक्षण।
6. संरक्षण एवं सतत उपयोग हेतु आर्थिक और नृवनस्पतीय महत्व की पादप जातियों का सर्वेक्षण संग्रह तथा अभिनिर्धारण।
7. उपरोक्त के अलावा पादपालय संग्रह, वनस्पति उद्यानों में संग्रहीत जीवित पेड़ पौधों, पादप व्याप्ति आदि का राष्ट्रीय डाटा बेस तैयार करना।

गौण उद्देश्य :

1. पर्यावरणीय संघट्टन मूल्यांकन अध्ययन।
2. जनजातियों द्वारा उपयोग में लाये जाने वाले औषाधीय पौधों का भेषज अध्ययन।
3. निकट सम्बन्ध रखने वाले टैक्सा की सिस्टेमेटिक एवं टैक्सोनॉमिक स्थिति के निर्धारण हेतु अतिरिक्त जैव

रासायनिक, पेलिनोलाजिकल तथा कोशकीय अध्ययन।

4. लोगों द्वारा उपयोग में आने वाले विभिन्न पादप उत्पादों का संग्रह एवं परिरक्षण कर संग्रहालय में प्रदर्शित करना।
5. निर्धारित क्षेत्रों में भूवनस्पतीय अध्ययन।
6. पर्यावरणीय संरक्षण तथा प्रदूषण नियंत्रण में पौधों की भूमिका के बारे में जागरूकता पैदा करने के लिये विभिन्न कार्यक्रम।

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र, देहरादून

देश के महत्वपूर्ण जैव विविधता वाले क्षेत्रों में से एक उत्तरी पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र को ध्यान में रखकर इस क्षेत्रीय केन्द्र की स्थापना दिनांक 1 अगस्त 1956 को कलकत्ता में की गयी, तथा डा. एम. अनन्त स्वामी राव को इसका प्रभारी बनाया गया। इस केन्द्र का प्रथम कार्य स्थल 63–राजपुर मार्ग पर स्थित एक किराये के भवन को बनाया गया। सन् 1967 में इसे 3–लक्ष्मी मार्ग पर एक अन्य किराये के भवन में स्थानान्तरित कर दिया गया। वर्तमान में यह 192, कौलागढ़ मार्ग पर 16 एकड़ के परिसर में शोभायमान है। अपनी स्थापना के समय इस केन्द्र के अन्तर्गत पश्चिमी उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, जम्मू–कश्मीर, पंजाब, हरियाणा, चण्डीगढ एवं दिल्ली के लगभग 100 जिलों को इसका कार्यक्षेत्र चुना गयां। दिनांक 9 नवम्बर 2002 को उत्तराखण्ड राज्य की स्थापना के पश्चात् इस परिमण्डल का कार्यक्षेत्र घटकर जम्मू–कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, पंजाब, हरियाणा, चण्डीगढ़ के लगभग 80 जिलों तक सिमट कर रह गया है।

स्थापना के बाद डा. एम.ए. राउ के कुशल नेतृत्व में हिमालय के सूदूर दुर्गम एवं दूर–दराज के क्षेत्रों में सघन वानस्पतिक सर्वेक्षणों को आयोजित किया गया, जहां से अनेक पादप प्रतिदर्शों का संग्रहण कर यहां के पादपालय की स्थापना की गयी। डा. राउ के इस अमूल्य योगदान को उनके उत्तराधिकारियों जिनमें डा. टी.ए. राव, डा. यू.सी. भट्टाचार्य, श्री बी.एम. वाधवा, डा. एच.जे. चौधरी, डा. आर.आर. राव, डा. सी.एल. मलहोत्रा, श्री बी.डी. नैथानी, श्री पी.सी. पन्त, डा. डी.के. सिंह डा. एस. के. मूर्ति आदि ने आगे बढ़ाया। इन सबके सार्थक और ईमानदार कर्तव्यों के फलस्वरूप इस क्षेत्रीय केन्द्र का पादपालय देश के समृद्ध पादपालयों में से एक माना जाता है। वर्तमान में डा. एस. के. श्रीवास्तव के निर्देशन में यह केन्द्र निरन्तर उन्नति के पथ पर अग्रसर है।

अन्य क्षेत्रीय केन्द्रों की भांति उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र में भी विभिन्न शोध कार्यों को कार्यान्वित करने के लिये विभिन्न क्रियात्मक इकाईयां हैं जैसे पादपालय, संग्रहालय, पुस्तकालय, फोटोग्राफी एवं चित्रकारी इकाई, प्रायोगिक वनस्पति उद्यान एवं औषधि वाटिका।
पादपालय – भारतीय वनस्पति उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र के पादपालय को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसको परिवर्ण (एक्रोनिम) बी.एस.डी. से जाना जाता है। यह पादपालय अपनी स्थापना के पश्चात् आज लगभग 1,30,000 पुष्पी एवं पर्णांग पादपों के प्रतिदर्शों के साथ अपनी उपयोगिता सिद्ध कर रहा है। पश्चिमोत्तर भारत में इस पादपालय को वन अनुसंधान संस्थान के पादपालय (डी.डी.) के बाद द्वितीय स्थान प्राप्त है। इसके अतिरिक्त यहां अन्य अपुष्पी पौधों जैसे शेवाल, शैवाक, कवक, हरितोद्भिद् के भी लगभग 10,000 प्रतिदर्श संरक्षित हैं। इसके अतिरिक्त कई देशों जिनमें ब्रिटेन, अमेरिका, जापान, भूतपूर्व सोवियत संघ आदि देशों से प्रत्यावर्तन के आधार पर प्राप्त पादप नमूनों का संग्रह भी उपलब्ध है। इसके साथ ही इस क्षेत्र में अन्वेषित नई पादप प्रजातियों के 110 पादप प्रारूप भी यहां संरक्षित हैं।

संग्रहालय

उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र के संग्रहालय में विभिन्न वर्ग की वनस्पतियों जिनमें शैवाल, कवक, शैवाक, हरितोद्भिद्, पर्णांग, आवृतबीजी एवं अनावृतबीजियों के रुचिकर नमूनों को उचित ढंग से प्रदर्शित एवं संरक्षित कर रखा गया है। इसके अतिरिक्त वानस्पतिक रूप से रोचक कीटभक्षी एवं परभक्षी पौधों, विषैले पौधों, औषधीय एवं आर्थिक महत्व के उपयोगी पौधों एवं इनके बीजों, फलों, फूलों एवं इनसे निर्मित विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का रोचक संग्रह भी उपलब्ध है। यहां उत्तर–पश्चिमी हिमालय क्षेत्र में पाये जाने वाले स्थानिक एवं संकटग्रस्त पौधों को प्रदर्शित किया गया है। संग्रहालय में ही इस क्षेत्र की वानस्पतिक सम्पदा एवं विविधता को दर्शाते श्वेत–श्याम एवं रंगीन छाया चित्रों का अनुपम एवं अद्वितीय संग्रह भी इस संग्रहालय के सम्मान को बढ़ता है।

पुस्तकालय

उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र का पुस्तकालय एक अत्यन्त समृद्ध पुस्तकालय है। यहां पादप जातीय अध्ययन, वर्गिकी, पारिस्थितिकी, पादप भूगोल, पर्यावरण एवं संरक्षण आदि विषयों से सम्बन्धित देशी एवं विदेशी प्रकाशनों की लगभग 8000 पुस्तकें एवं 7000 वैज्ञानिक शोध जर्नल, शोध कार्यों के लिये उपलब्ध हैं, एवं उनकी संख्या में प्रतिवर्ष निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। वर्तमान में एक अतिमहत्वपूर्ण कदम उठाते हुये सम्पूर्ण पुस्तकालय का डिजिटाइजेशन कर दिया गया है, जिसके परिणाम स्वरूप यहां की सारी पुस्तकों एवं जर्नल की जानकारी इन्टरनेट पर जन सामान्य के लिये उपलब्ध हो सकेगी।

इसके अतिरिक्त पुस्तकालय में कई महत्वपूर्ण प्राचीन प्रकाशन भी उपलब्ध हैं जिनमें प्रमुख हैं : बर्मन का फ्लोरा इन्डिका, फोर्स्कल का फ्लोरा एजिप्टिका–अरेबिका, वालिच का टेन्टामस फ्लोरा नेपालेन्सिस एवं प्लान्टे एशियाटिक रेरियोरिस, वाइट का आईकोन्स प्लान्टेरम इन्डे ओरियन्टेलिस एवं प्रोड्रोमस फ्लोरा पेनिन्सुली इन्डे ओरियन्टेलिस, डान का प्रोडोमस, वासटीड का हार्टस मालाबारिकस, राक्सबर्ग का प्लान्ट्स् आफ कोरोमण्डल कोस्ट एवं फ्लोरा इन्डिका, लिनियस का स्पीशीज प्लांटेरम एवं जेनेरा प्लान्टेरम, रॉयल का इलस्ट्रेशन आफ बाटनी आफ हिमालयन माउटेन्स एण्ड
फ्लोरा ऑफ कश्मीर, बेडोम का फर्न आफ ब्रिटिश इण्डिया आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त कार्यालय के हिन्दी अनुभाग में हिन्दी विश्वकोष (25 खण्डों में) एवं हिन्दी भाषा में पर्यावरण संरक्षण, पादप उपयोग आदि विषयों से सम्बन्धित लगभग 2000 पुस्तकें उपलब्ध हैं।

फोटोग्राफी एवं चित्रकारी ईकाई – उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र का अपना सुस्थापित फोटोग्राफी एवं चित्रकारी अनुभाग भी है। यहां कई दुर्लभ छायाचित्रों एवं चित्रों का अनूठा संग्रह उपलब्ध है। यह अनुभाग समय–समय पर आयोजित की जाने वाली प्रदर्शनियों, पर्यावरणी शिक्षा एवं चेतना कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से अपनी भागीदारी निभाता आ रहा है।

प्रायोगिक वनस्पति उद्यान

वनस्पति उद्यान की उपयोगिता एवं महत्ता को ध्यान में रखते हुये, उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र के अन्तर्गत इसके प्रायोगिक वनस्पति उद्यान को देहरादून कार्यालय से 180 कि.मी. दूर पौड़ी गढ़वाल जिले में सन् 1975 में स्थापित किया गया। जिनमें से एक नागदेव खण्ड के 14 हेक्टेयर क्षेत्रफल में फैला हुआ है, जबकि दूसरा उद्यान खिर्सू खण्ड में 8 हेक्टेयर क्षेत्रफल में फैला हुआ है।

नागदेव खण्ड में स्थापित उद्यान को राष्ट्रीय अनावृतबीजी पादप संग्रह के रूप में विकसित किया गया है। यहां मिलने वाले प्रमुख अनावृत बीजी पौधों में क्यूप्रेसस टारूलोसा, सिड्रस देवदारा प्रजातियां हैं। हाल ही में यहां टैक्सस वालिचियाना, गिन्गो बाइलोबा तथा नारियल कुल की एक अत्यन्त दुर्लभ प्रजाति ट्रेकीकार्पस टकील का प्रवेशन किया गया है। इसके अतिरिक्त उद्यान के ऊँचांई वाले स्थानों पर कुएरकस, रोडोडेन्ड्रान, लायोनिया, पापुल्स आदि के प्राकृतिक वन हैं। जबकि खिर्सू में मौजूद दूसरे उद्यान के प्राकृतिक स्वरूप को जस का तस ही सुरक्षित रखा गया है। यहां मिलने वाली प्रमुख पादप प्रजातियों में कुएरकस, रोडोडेन्ड्रान, बरबेरिस, माईरिका इस्कुलेंटा आदि हैं। इसके अतिरिक्त यहां अधिपादपी एवं स्थलीय आर्किडों की लगभग 30 प्रजातियां पायी जाती हैं जिनमें डेन्ड्रोबियम, ईरिया, सिम्बीडियम, ज्वैल आर्किड आदि प्रमुख हैं।

पादप संरक्षण को प्रभावी ढंग से निष्पादित करने के लिये देहरादून कार्यालय परिसर में भी एक छोटा उद्यान विकसित किया गया है। इसके समीप ही दो हरित गृहों का भी निर्माण किया गया है। उद्यान में हिमालयी क्षेत्र में मिलने वाली दुर्लभ, संकटापन्न, स्थानीय पादप प्रजातियों को समाविष्ट किया गया है। इनमें प्रमुख हैं ट्रेकीकार्पस टकील, सोफोरा मोलिस, गिन्को बाईलोबा, महोनिया, स्यूडोडेन्थोनिया हिमालयीइका, सिलेजिनेला एडन्का, साइथिया स्पाइनुलोसा, माइक्रोलिपिया स्पी., मैग्नोलिया ग्रेन्डीफ्लोरा, प्लेसस ओरिएन्टालिस आदि। इसके अतिरिक्त अनेक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी पादप प्रजातियों की लगभग 400 जातियां यहां फल–फूल रही हैं। यहां के हरित गृहों में हिमालयी क्षेत्रों में मिलने वाली आर्किड की प्रजातियों को समावेशित किया गया है जो यहां भली प्रकार से फलफूल रही हैं। इसके अतिरिक्त हिमालयी क्षेत्र में मिलने वाले पर्णांगों को संरक्षित करने के लिये विभाग द्वारा एक पर्णांग गृह प्रस्तावित है जिसके निर्माण का कार्य शुरु हो गया है। इस भवन के निर्मित हो जाने के बाद यहां के पर्णांग प्रजातियों के संरक्षण हेतु यह अपना अमूल्य योगदान दे सकेगा।

धन्वन्तरि औषध वाटिका

उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र की स्थापना दिवस की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर कार्यालय परिसर में धन्वन्तरि औषध वाटिका की स्थापना की गयी। इसमें औषधीय महत्व के पौधे जिनमें सर्पगन्धा, अश्वगन्धा, तुलसी, आंवला, बेल, हरड़, शतावर, खस इलायची, आदि को लगाया गया है।

वैज्ञानिक गतिविधियां एवं उपलब्धियां – स्थापना के पश्चात् इस केन्द्र के वैज्ञानिकों एवं कर्मचारियों ने अपने अथक परिश्रम से दुर्गम एवं दुरूह हिमालयी क्षेत्रों का सर्वेक्षण कर एक लाख पच्चीस हजार से अधिक पादप नमूनों को एकत्रित किया है। इसके अतिरिक्त यहां के वैज्ञानिकों ने कई पर्वतारोहण अभियानों जैसे भारतीय वायु सेना पर्वतारोहण अभियान (1959), भारत सोवियत अभियान (1960), नीलकंठ अभियान (1962), रूपकुण्ड अभियान (1963), त्रिशूल अभियान (1965), केदारनाथ पर्वत अभियान (1967), हेमकुण्ड अभियान एवं भारतीय थल सेना के इन्जीनियरिंग कोर का नन्दा देवी का वैज्ञानिक एवं पारिस्थितिकी अभियान (1993), में भाग लेकर उक्त क्षेत्रों की वानस्पतिक विविधता का अध्ययन किया।

यहां के वैज्ञानिकों ने इस केन्द्र के अन्तर्गत आने वाले हिमाचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर, पंजाब, हरियाणा, उत्तराखण्ड, लद्दाख, लाहुल स्पिती के क्षेत्रों का पादप सर्वेक्षण कार्य लगभग पूर्ण कर लिया है, एवं आंकड़ों को लिपिबद्ध किया जा रहा है। जिसके परिणामस्वरूप 1000 शोध पत्रों के अतिरिक्त अनेक उपयोगी पुस्तकें एवं पुस्तिकायें भी प्रकाशित की गयी हैं जिनमें हर्बेशियस फ्लोरा आफ देहरादून, चमोंली का फ्लोरा, स्टेट फ्लोरा आफ हिमाचल प्रदेश, फ्लोरा आफ पंजाब प्लेन्स, फ्लोरा ऑफ बशहर हिमालय, फ्लोरा आफ जम्मू एवं कश्मीर (प्रथम खण्ड), फ्लोरा आफ हरियाणा, ग्रासेज आफ उत्तर प्रदेश, बाटनी आफ नन्दा देवी नेशनल पार्क आदि प्रमुख हैं। इसके

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र का पादपालय

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र का पुस्तकालय

अतिरिक्त फ्लोरा आफ इण्डिया के प्रकाशनों में एस्टेरेसी कुल पर प्रकाशित खण्ड 12, 13 के साथ चार अन्य खण्डों में यहां के वैज्ञानिकों ने सक्रिय योगदान दिया है।

परिमण्डल के कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत आने वाले संरक्षित एवं भंगुर पारिस्थितिकी क्षेत्रों की वनस्पति जातियों का भी अध्ययन कर, फ्लोरा ऑफ कार्बेट नेशनल पार्क, फ्लोरा आफ दुधवा नेशनल पार्क, प्लाण्ट डाइवर्सिटी आफ सम वेटलैण्डस आफ दून वैली, प्लाण्ट वैल्थ आफ नंदा देवी बायोस्फीयर रिजर्व, वैली आफ फ्लावर नेशनल पार्क, फ्लोरा ऑफ पिन वैली नेशनल पार्क आदि का प्रकाशन किया जा चुका है।

इसी क्रम में अपुष्पी पादपों के अन्तर्गत आने वाली विभिन्न राज्य एवं केन्द्र सरकार की पनबिजली एवं सिंचाई परियोजनाओं जैसे व्यास–सतलज लिंक नहर परियोजना, टिहरी पन बिजली परियोजना, धौली गंगा – गौरी गंगा पन बिजली परियोजना के निर्माण स्थल के वानस्पतिक सर्वेक्षण के साथ इनके निर्माण के फलस्वरूप यहां मिलने वाली वनस्पतियों के अस्तित्व एवं पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन कर उनको प्रकाशित करने का कार्य यहां के वैज्ञानिकों द्वारा किया गया है।

राजभाषा के सतत विकास के उद्देश्य को ध्यान में रखकर इस केन्द्र द्वारा पश्चिमी हिमालय की वनस्पतियां व पारिजात नामक पुस्तक एवं पत्रिका का प्रकाशन किया गया है। इसके अतिरिक्त पर्यावरण वनस्पति वाणी, वन दर्पण आदि पत्रिकाओं में इस केन्द्र के वैज्ञानिकों द्वारा समय–समय पर वैज्ञानिक लेखों का प्रकाशन किया जा रहा है।

वर्तमान में इस केन्द्र के लिये स्वीकृत कार्य योजना के अन्तर्गत फ्लोरा आफ इण्डिया 22 वें खण्ड का कार्य प्रगति पर है। इसके अतिरिक्त फ्लोरा आफ उत्तराखण्ड, फ्लोरा आफ जम्मू एवं कश्मीर, द्वितीय खण्ड, टेरिडोफिटिक फ्लोरा आफ नार्थ वेस्ट हिमालया, एफिल्लोफोरेल्स आफ नार्थ वेस्ट हिमालया, गेस्ट्रोमाइसिटिज आफ उत्तराखण्ड पर कार्य चल रहा है। इसके अतिरिक्त संरक्षित क्षेत्र जैसे गंगोत्री नेशनल पार्क, गोविन्द पशुविहार, फ्लोरा आफ कोल्ड डेजर्ट आदि के पादप सर्वेक्षण का कार्य पूर्ण होने के पश्चात प्रकाशन हेतु कार्य चल रहा है।

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण द्वारा निर्धारित नये लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु इस क्षेत्रीय केन्द्र के कार्यक्षेत्र में आने वाले अनेकों स्थानिक दुर्लभ संकटापन्न, औषधोपयोगी व अन्य आर्थिकोपयोगी वनस्पतियों के अध्ययन, संवर्धन व परास्थाने संरक्षण हेतु उनका परिमण्डल के प्रायोगिक वानस्पतिक उद्यानों में रोपण का कार्य जारी है। इसके अतिरिक्त अपुष्पी पौधों विशेषकर कवकों व पर्णागों पर शोध कार्य को वरीयता दी जायेगी। उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र के कार्यक्षेत्र में स्थित समस्त नम भूमि तथा मृदुजल के समीपस्थ अनूपवनों के वानस्पतिक सर्वेक्षण, अध्ययन व संरक्षण क्षेत्रीय केन्द्र की भावी परियोजनाओं का महत्वपूर्ण अंग हैं।

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, उत्तरी क्षेत्रीय केन्द्र के उद्यान में स्थित हरित गृह

हास्य-व्यंग
कालका–शिमला रेलमार्ग
राजकीय रिपोर्ट

अशोक दुबे

दोस्तो पिछले दिनों शिमला में फील्ड वर्क के दौरान एक गुफा में मुझे कुछ कागज़ मिले। इन कागजों को वास्तव में फील्ड सैम्पल पैक करने के लिये उठाया गया था मगर ध्यान से देखने पर ज्ञात हुआ कि यह किसी प्राचीन राजकीय रिपोर्ट का एक हिस्सा हैं। मैं समस्त रिपोर्ट पढ़ने साथ ले आया और बिना किसी कांट-छांट के आपकी सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ।

माह 7 मार्च वर्ष सन 1780–महाराज की जय हो! महाराज के दरबार में हुजूर ने अपनी दिव्य वाणी द्वारा अपने सेवकों को बताया कि स्काटलेण्ड में भाप के ईंजन का आविष्कार हो गया है और अब सात समुंदर पार विलायत में भाप के ईंजन से रेल चलाने की योजना पर विचार हो रहा है।

महाराज ने इसी तरह की रेल हमारे पुनीत पर्वतीय हिमांचल में चलाने की इच्छा व्यक्त की है। महाराज की आज्ञा सर आंखों पर। आपके सेवक अपने प्राण देकर भी आपकी आज्ञा स्वीकार करेंगे। महाराज के आदेशानुसार प्रस्तावित रेलमार्ग के लिये राज्य के दरबारियों ने कई बैठकें आयोजित कीं। राजपुरोहित और राजकीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण विभाग के निदेशक से लेकर हजारों जनप्रतिनिधियों से वार्तालाप किया गया। विस्तृत चर्चा के पश्चात यह रिपोर्ट महाराज के चरणों की सेवा में प्रस्तुत की जा रही है।

आरदणीय श्री श्री राजपुरोहित जी द्वारा हमें यह पौराणिक गाथा सुनाई गई है।

प्राचीन काल में एक समय की बात है। हिमांचल प्रदेश में अनेकों ऋषि–मुनि निवास करते थे। दिन में वह यज्ञ करते थे और रात्रिकाल में विश्राम करते थे। जब यह ऋषि–मुनि गहरी निद्रा में लीन होते थे तब राक्षस लोग यज्ञ की आहुति में डाले जाने वाले घी और प्रसाद चोरी कर लेते थे। आदतन सहनशीन होने के कारण प्रारंभ में इसकी अनेदखी की गई मगर जब आश्रम प्रमुख को ज्ञात हुआ कि अब राक्षस लोग सरोवर से जल लाती आश्रम कन्याओं पर बुरी नजर डाल रहे हैं तो वह गुस्से से आगबबूला हो उठे। मामला तत्काल इन्द्र तक पहुँचाया गया और सहायता की मांग की गई। देवताओं की सेना तत्काल आ पहुँची मगर परेशानी यह थी कि राक्षस लोग रात्रि अंधकार में आकर चोरी करते थे और दिन में पर्वतीय के संदराओं के अंधकार में घुस जाया करते थे। अब उनका संहार कैसे हो? अंत में थक–हारकर इन्द्रदेव ने सभी कंदराओं के दरवाजे सील कर दिये और साथ ही सलाह दी कि अब नई पर्वतीय कंदराएँ न बनाई जाएं।

अनुमान है कि रेलमार्ग में करीब एक सौ दो सुरंगे बनानी होंगी और यह इन्द्रदेव की सलाह का सरासर अपमान होगा। हमारे श्री राजपुरोहित जी रेलमार्ग के समाचार से अत्यंत व्यथित हैं।

इस संबंध में एक और बात ध्यान देने योग्य है कि हर सुरंग में रेल के प्रवेश से पहले दीपक जलाने का प्रबंध एक मुख्य कार्य है। फलस्वरूप सुरंग के अंधकार में माताओं और बहनों के साथ शरारती तत्वों द्वारा छेड़छाड़ की घटनाएं संभव है। अपराधी तत्वों द्वारा चेन स्नैचिंग भी की जा सकती है।

रेलमार्ग चालू होने पर प्रजागण घोड़ागाड़ी और बैलगाड़ी में यात्रा बन्द कर देंगे जिससे राजमार्ग के किनारे घास बेचने वाले कई गरीब और असहाय लोग बेरोजगार हो जाएंगे।

रेलगाड़ी से डाक जाने पर कबूतर पालने वाले अनेकों लोग बेरोजगार हो जाएंगे। उनकी रोजी–रोटी के लिये आवश्यक है कि पत्र कबूतरों द्वारा ही भेजे जाएं।

रेलमार्ग के बीच आने वाले अनेकों हरे–भरे वृक्षों को काटना होगा इसलिये पर्यावरण लाबी पहले ही इसका विरोध करने का निश्चय कर चुकी है। कोयले द्वारा धुंवा छोड़ने से राज्य का पवित्र वातावरण दूषित होगा। इंजन की सीटी और छुक–छुक की आवाज से ध्वनि प्रदूषण भी बढ़ेगा। अतः पर्यावरण विशेषज्ञों को तैयार करना संभव नहीं है।

वृक्ष कटने पर कई पक्षी घोसला विहीन हो जाएंगे। इसके अलावा किसी जानवर के रेल की पटरी पर आ जाने से उसकी मृत्यु संभव है। सिर्फ पशु ही नहीं रेल की पटरी पर प्रातः क्रिया से निवृत होते लोग भी इंजन की चपेट में आ सकते हैं। इसलिये राजकीय पशु अधिकार एवं क्रूरता निवारण समिति प्रस्वावित योजना की घोर विरोधी है।

रेल मार्ग में अनेकों स्टेशन बनाए जाएंगे और हर स्टेशन पर एक कैन्टीन स्थापित होगी। कैन्टीन स्वामी अपने स्टॉल पर कोला पेय और फास्ट फूड का वितरण कर सकते हैं जिससे हमारा युवा वर्ग देशीय स्वास्थ्य वर्द्धक पेय और खाद्य पदार्थो से विमुख होगा। फलस्वरूप उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और मस्तिष्क में कलुषित विचार आएंगे।

रेल में सीट आरक्षण के लिए रेलवे स्टाफ को घूस दी जा सकती है। इससे महाराज के शांतिप्रिय राज्य में भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन मिलेगा और कानून व्यवस्था की हालत बदतर होगी।

रेलमार्ग निर्धारित करने के लिये भूवैज्ञानिकों की एक बड़ी टीम बनानी होगी। इस टीम के साथ अनेकों अर्दली और टट्टू लगेंगे। इस तरह टी. ए., डी.ए. और आकस्मिक खर्च पर जो व्यय होगा उसमें महाराज सारी उम्र कालका–शिमला की यात्रा कर सकते हैं।

प्रस्तावित रेलमार्ग के बीच जुतोग थ्रस्ट आता है जिसमें 550 किलोमीटर का डिस्प्लेसमेंट बताया गया है। इस थ्रस्ट के पुनः क्रियाशील होने पर कालका से चली रेलगाड़ी शिमला की बजाय स्वतः ही फिर से कालका पहुँच जाएगी।

यह एक भूकंप प्रभावित क्षेत्र है और सन् 1905 में कांगड़ा में जो भूकंप आने वाला है उससे रेलमार्ग को कितनी क्षति होगी इसका पूर्वानुमान एक दुष्कर कार्य है।

रेलयात्रा प्रांरम्भ होने पर इस तरह की मांग हिन्दुस्तान के दूसरे राज्यों में भी उठ सकती है जैसे देहरादून–मसूरी को रेलमार्ग से जोड़ना। क्या हमारे मित्र पड़ोसी राज्य इस तरह की मांगों को पूरा करने में सक्षम हैं?

उपरोक्त मुद्दों के मद्देनजर और इसे दृष्टिगत रखते हुए कि महाराज के राज्य में समस्त जनता अपने–अपने क्षेत्रों और अपने–अपने घरों में इतने आराम और सुविधा के साथ जीवन यापन कर रही है कि उन्हें कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है, यह कमेटी प्रस्तावित रेलमार्ग को ठंडे बस्ते में डालने का अनुरोध करती है।

महाराज का विनीत सेवक

शमशेर बहादुर सिंह, प्रधान मंत्री,
हिमांचल राज्य
उपरोक्त रिपोर्ट की सिफारिशों को मान्य करते हुए कालका–शिमला रेलमार्ग का प्रस्ताव निरस्त किया जाता है

हस्ताक्षर (अस्पष्ट)

प्रातः स्मरणीय श्री महाराज, पर्वतीय हिमांचल राज्य

वैज्ञानिक, वाड़िया हिमालय भू विज्ञान संस्थान, देहरादून

विज्ञान के नये आयाम

विद्यार्थियों के लिये नये अवसर

वैश्वीकरण के इस युग में विज्ञान की शाखाओं में विस्तार हुआ है। पंरपरागत विज्ञान विषयों के अतिरिक्त नित नए क्षेत्र उभर कर सामने आ रहे हैं जो न केवल रोजगारपरक हैं बल्कि इन क्षेत्रों मे विशेषज्ञता हासिल कर युवा अपना भविष्य उज्वल बना सकते हैं। आइए ऐसे ही कुछ विषयों पर विस्तारपूर्वक चर्चा करते हैं।

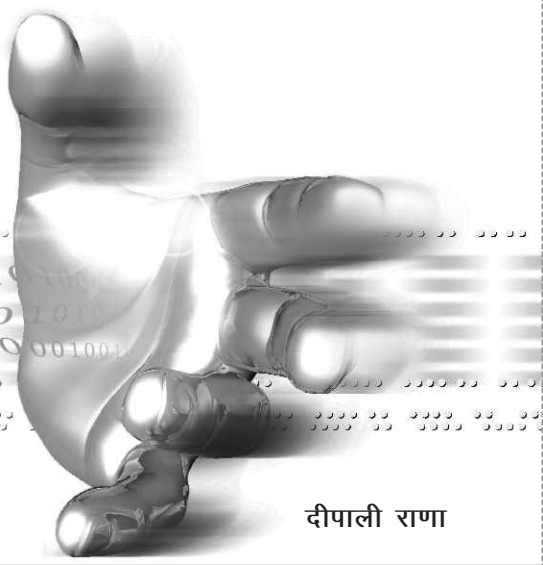

दीपाली राणा

पेट्रोलियम टेक्नोलॉजी

पेट्रोलियम ऊर्जा का अहम स्रोत है। यह विश्व की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है और इसकी उपयोगिता सर्वविदित है। पेट्रोलियम पदार्थों के उपयोग में भारत विश्व का आठवाँ देश है और हमारी जरूरतों का एक बड़ा हिस्सा विदेशों से आयात किया जाता है। एचपीसीएल, बीपीसीएल, रिलायंस, इंडियन आयल जैसी कंपनियों से सरकार को भारी–भरकम राजस्व मिलता है।

संभावनाएँ

पेट्रोलियम टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में नौकरी की अपार संभावनाएँ मौजूद हैं। पहले इस क्षेत्र में जियालाजिस्ट की काफी माँग थी, समय बदलने के साथ मैकेनिकल क्षेत्र के विशेषज्ञों ने इस इंडस्ट्री में अपनी धाक जमाई। करियर की अनेक संभावनाओं को देखते हुए इस क्षेत्र में प्रबंधन से लेकर इंजीनियरिंग तक के कोर्स शुरू किए गए हैं। यह क्षेत्र लगभग आठ लाख लोगों को रोजगार का अवसर प्रदान करता है तथा आने वाले समय में यह क्षेत्र अत्यंत लाभकारी सिद्ध होगा।

कोर्स

पेट्रोलियम युनिवर्सिटी ने बीबीए, एमबीए, बीटेक, एमएससी, जैसे कोर्स शुरू किए हैं। इसके अलावा देश के चुनिंदा संस्थानों ने पेट्रोलियम के क्षेत्र में बीई, बीटेक, एमई, एमटेक, एमएससी और बीएससी जैसे कोर्स शुरू किए हैं। ये सभी कोर्स पेट्रोकेमिकल इंजीनियरिंग, पोट्रोटेक्नोलाजी, गैस इंजीनियरिंग, पेट्रोमार्केटिंग में शुरू किए गए हैं।

योग्यता

बारहवीं की परीक्षा भौतिक विज्ञान, गणित और रसायन विज्ञान से 50 प्रतिशत अंकों से पास करने के पश्चात् आप इस कोर्स के लिए आवेदन कर सकते हैं। केमिकल और पेट्रोलियम इंजीनियरिंग में एमटेक के लिए आवेदन कर सकते हैं। बीबीए में प्रवेश के लिए किसी भी संकाय से बारहवीं उत्तीर्ण होना चाहिए।

संस्थान

1. डिब्रूगढ़ यूनिवर्सिटी, असम।
2. इंडियन स्कूल आफ माइंस, धनबाद।
3. अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, इंस्टीट्यूट ऑफ पेट्रोलियम स्टडीज एंड इंजीनियरिंग, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश।
4. यूनिवर्सिटी आफ पेट्रोलियम एंड एनर्जी स्टडीज, देहरादून।
5. यूनिवर्सिटी आफ पेट्रोलियम एंड एनर्जी स्टडीज, दिल्ली।
6. अन्ना यूनिवर्सिटी, चेन्नई, तमिलनाडु।
7. डा. हरिसिंह गौड़ यूनिवर्सिटी, सागर, मध्य प्रदेश।
8. महाराष्ट्र इंस्टीट्यूट आफ टेक्नोलाजी, यूनिवर्सिटी ऑफ पुणे, महाराष्ट्र।

पर्यावरण विज्ञान

आज विश्व के सभी देश पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं से जूझ रहे हैं। ग्लोबल वार्मिंग के परिणामस्वरुप प्राकृतिक जैवविविधता तथा परितंत्रों पर गम्भीर संकट उत्पन्न हो गया है। हमारे प्राकृतिक संसाधन तथा प्रकृति संकटग्रस्त हैं। पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ाने और पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी उपायों को अपनाना आवश्यक हो गया है। इसके तहत पर्यावरण में बदलाव, पर्यावरणीय क्षति की भरपाई तथा भावी पीढ़ी को बेहतर पर्यावरण देने की पहल की जा रही है। इसी संदर्भ में पर्यावरण विज्ञान आधारित तकनीकी एवं सैद्धांतिक पाठ्यक्रमों की शुरूआत की गई है। जल संरक्षण एवं प्रबन्धन, अपशिष्ट प्रबंधन, पर्यावरण हितैषी कृषि, प्रदूषण प्रबंधन तथा जैवविविधता संरक्षण आदि कुछ ऐसे कार्यक्षेत्र हैं जो पर्यावरण वैज्ञानिकों के लिए प्राथमिकता रखते हैं।

कोर्स

कालेज तथा विश्वविद्यालय स्तर पर पर्यावरण विज्ञान पूर्णकालिक पाठ्यक्रम के रुप में संचालित किया जा रहा है। इन पाठ्यक्रमों में बी.ई. (एंवायरनमेंट साइंस), बीएस.सी. (एंवायरनमेंट सांइस), एमएस. सी. (एंवायरनमेंट साइंस/एंवायरन्मेट बॉटनी), एंवायरनमेंट टाक्सिकोलॉजी (एंवायरन्मेट मैनेजमेंट), एमटैक. (एंवायरनमेंट इंजीनियरिंग) पीएच.डी. तथा सर्टिफिकेट एवं डिप्लोमा पाठ्यक्रम प्रमुख हैं।

इस क्षेत्र में ग्रेजुएट अथवा पोस्ट ग्रेजुएट डिग्री हासिल करने के बाद एटमास्फेरिक कैमिस्ट, पारिस्थितिकीविद, ओशियेनोग्राफर, हाइड्रोलोजिस्ट, एंवायरनमेंटल इंजीनियर, एंवायरनमेंटल कंसल्टेंट, एंनवायरनमेंटल मैनेजर, एंवायरनमेंटल जर्नलिस्ट आदि के रुप में विशेषज्ञता हासिल कर रोजगार पा सकते हैं। इसके अलावा रिसर्च में भी अपना योगदान दे सकते हैं। साथ ही साथ विदेशों में उच्च अध्ययन के लिए स्कॉलरशिप कई मेधावी छात्रों को प्रदान की जाती है।

अपशिष्ट उपचार, संयंत्रों पर आधारित उद्योगों, रिफाइनरियों, डिस्टिलरीज, उत्खनन उद्योग, उर्वरक संयंत्रों, खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों तथा टैक्सटाइल मिलों में भी इस प्रकार के प्रशिक्षित लोगों की आवश्यकता रहती है। प्रदूषण नियंत्रण विभागों, पर्यावरण एवं वन विभागों, शहरी योजना विभागों, कृषि अनुसंधान संस्थानों आदि में ऐसे प्रशिक्षित लोगों को नियुक्त किया जाता है।

प्रमुख संस्थान

बीएस.सी. (पर्यावरण विज्ञान)

1. दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
2. मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान।
3. तमिलनाडु जी.डी. एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, कोयम्बटूर, तमिलनाडु।
4. अवध यूनिवर्सिटी, फैजाबाद, उत्तर प्रदेश।

बी.ई. (एंवायरनमेंट सांइस)

1. दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
2. तमिलनाडु जी.डी. एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, कोयम्बटूर, तमिलनाडु।

एमएस.सी. (पर्यावरण विज्ञान)

1. जामिया हमदर्द यूनिवर्सिटी, दिल्ली।
2. जवाहर लाल नेहरू यूनिवर्सिटी, दिल्ली।
3. दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
4. उस्मानिया यूनिवर्सिटी, हैदराबाद, आन्ध्र प्रदेश।
5. असम यूनिवर्सिटी, सिल्चर, असम।
6. तेजपुर यूनिवर्सिटी, तेजपुर, असम।
7. गुरू गोविन्द सिंह यूनिवर्सिटी, दिल्ली।
8. इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ इकोलॉजी एंड एंवायरन्मेट दिल्ली।
9. गुरू जम्बेश्वर यूनिवर्सिटी, हिसार।
10. गुजरात यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद।
11. यूनिवर्सिटी ऑफ जम्मू, जम्मू।
12. विनोबा भावे यूनिवर्सिटी, हजारीबाग।
13. कोचीन यूनिवर्सिटी ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी, कोच्चि।
14. अवध प्रताप यूनिवर्सिटी, रीवा, मध्य प्रदेश।
15. मराठवाड़ा यूनिवर्सिटी, औरंगाबाद, महाराष्ट्र।
16. भारती विद्यापीठ, पुणे, महाराष्ट्र।
17. पुणे यूनिवर्सिटी, पुणे, महाराष्ट्र।
18. अन्नामलाई यूनिवर्सिटी, अन्नामलाई, तमिलनाडु।
19. गुरू नानक देव यूनिवर्सिटी, अमृतसर, पंजाब।
20. मदुरै कामराज यूनिवर्सिटी, मदुरै।
21. बुंदेलखंड यूनिवर्सिटी, झांसी।
22. फॉरेस्ट रिसर्च इंस्टीट्यूट युनिवर्सिटी, देहरादून।

मौसम विज्ञान

मौसम हमारे दैनिक जीवन को प्रभावित करता हैं इसकी जानकारी हमें मौसम वैज्ञानिकों के द्वारा मिलती है। आजकल लघु एवं दीर्घ अवधि के मौसम की जानकारी उपग्रहों से उपलब्ध चित्रों के आधार पर की जाती है। मौसम का गहन एवं विस्तृत अध्ययन मौसम विज्ञान के अंतर्गत किया जाता है। इसका कार्यक्षेत्र दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। मौसम विज्ञान में कैरियर बना युवा अपना स्थान एवं भविष्य सुरक्षित कर सकते हैं।

कोर्स

मौसम विज्ञान से सम्बन्धित पाठ्यक्रमों में बीएस.सी., एम.टेक., पी.जी., डिप्लोमा एवं डिग्री कर सकते हैं। इसकी विभिन्न शाखाओं में पीएच.डी. भी की जा सकती है। विभिन्न पाठ्यक्रमों की अवधि 1 से 3 वर्षों तक की है।

योग्यता

मौसम विज्ञान में स्नातक पाठ्यक्रम में प्रवेश लेने के लिए विद्यार्थी को 10+2 (12वीं) या समकक्ष परीक्षा विज्ञान विषय में उत्तीर्ण होना चाहिए। साथ ही भौतिकी, रसायन व गणित विषयों मे कम से कम 55 अंक प्राप्त छात्र प्रवेश–परीक्षा में शामिल हो सकते हैं। स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम में प्रवेश हेतु विज्ञान, अभियांत्रिकी, सांख्यिकी, गणित एवं इलेक्ट्रॉनिक्स डिग्रीधारी विद्यार्थी ही योग्य माने जाते हैं। स्नातक तथा स्नातकोत्तर (मौसम विज्ञान) में अध्ययन के लिए विश्वविद्यालयों / संस्थानों द्वारा प्रति वर्ष प्रवेश हेतु आवेदन अप्रैल – मई माह में आमंत्रित किए जाते हैं। प्रवेश मेरिट लिस्ट के आधार पर किए जाते हैं।

प्रमुख शिक्षण संस्थान

मौसम विज्ञान में स्नातक, स्नातकोत्तर, बी.टेक., एम.टेक. उपाधि तथा स्नातकोत्तर डिप्लोमा निम्न विश्वविद्यालयों / संस्थानों से किए जा सकते हैं –

1. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश।
2. अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश।
3. पुणे विश्वविद्यालय, पुणे, महाराष्ट्र।
4. कोच्चि विश्वविद्यालय, कोच्चि, केरल।
5. कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र, हरियाणा।
6. आंध्रप्रदेश विश्वविद्यालय, हैदराबाद, आंध्रप्रदेश।
7. गुवाहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी, असम।
8. पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़, पंजाब।
9. पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना, पंजाब।
10. पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला, पंजाब।
11. भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलूरू, कर्नाटक।
12. गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश।
13. जादवपुर विश्वविद्यालय, जादवपुर, पश्चिम बंगाल।
14. स्टेट ऑब्जर्वेटरी, नैनीताल, उत्तराखण्ड
15. भारतीय प्रौद्योगिक संस्थान।

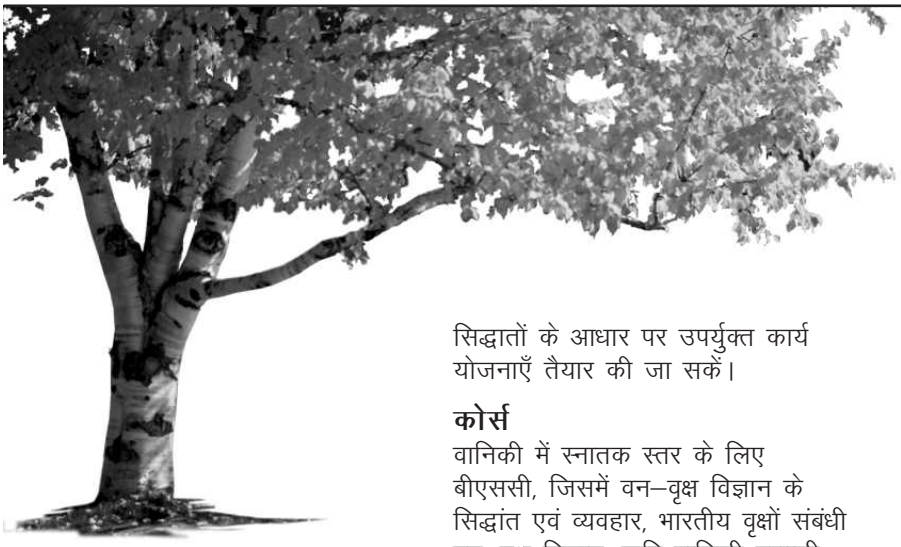

वानिकी

वानिकी के अंतर्गत वनों का सृजन, संरक्षण, उनका वैज्ञानिक प्रबंधन तथा वनों से संबंधित विभिन्न संसाधनों का उपयोग किया जाता है। देश के अनेक कृषि विश्वविद्यालयों में वानिकी से संबंधित विशेष विषयों में विशेषज्ञता के साथ वानिकी और कृषि वानिकी में मास्टर और पीएचडी कराई जाती है। सकल घरेलू उत्पाद में वानिकी क्षेत्र का उल्लेखनीय योगदान और महत्व है। विपरीत वन्य स्थिति से निपटने के लिए कुशल मानव शक्ति की आवश्यकता होती है जिससे शोध कार्यों और निर्देशक सिद्धातों के आधार पर उपर्युक्त कार्य योजनाएँ तैयार की जा सकें।

कोर्स

वानिकी में स्नातक स्तर के लिए बीएससी, जिसमें वन–वृक्ष विज्ञान के सिद्धांत एवं व्यवहार, भारतीय वृक्षों संबंधी वन–वृक्ष विज्ञान, कृषि वानिकी प्रणाली एवं प्रबंधन, विश्व वानिकी प्रणाली, पशुधन प्रबंधन, वन मापन, पर्यावरणीय विज्ञान तथा बागवानी के मूल तत्व आदि विषय शामिल हैं। स्नातकोत्तर स्तर पर वन–वृक्ष विज्ञान, वन उत्पाद, अर्थशास्त्र एवं प्रबंधन, काष्ठ विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी, वृक्ष आनुवांशिकी और प्रजनन में विशेषज्ञता के साथ वानिकी तथा कृषि वानिकी में एमएससी डिग्री प्रदान की जाती है। इसके अलावा वानिकी तथा कृषि वानिकी में पीएचडी के रुप में न्यूनतम तीन वर्षीय डॉक्टरेट कार्यक्रम उपलब्ध हैं।

योग्यता

बीएससी वानिकी में प्रवेश के लिए पीसीबी, पीसीएम या पीसीएमबी या कृषि विषयों के विद्यार्थी बारहवीं के पश्चात् आवेदन कर सकते हैं।

बीएससी में चयन विश्वविद्यालय अथवा संस्थान द्वारा आयोजित प्रवेश परीक्षा के आधार पर होता है। कुछ विश्वविद्यालयों में मेरिट के आधार पर भी चयन किया जाता है। वानिकी में बीएससी के उपरांत एमएससी में प्रवेश के लिए आवेदन किया जा सकता है। एमएससी में भी चयन कुछ विश्वविद्यालयों – संस्थानों में प्रवेश परीक्षा में सफल होने के बाद तथा कुछ में मेरिट के आधार पर होता है। पीएचडी के लिए मैरिट तथा विश्वविद्यालय के नियमों के अनुसार मेरिट तथा प्रवेश परीक्षा उत्तीर्ण करनी होती है।

संस्थान

1. इंस्टीट्यूट ऑफ वुड साइंस एंड टेक्नोलॉजी, बंगलूरु, कर्नाटक।
2. सेन्टर फॉट सोशल फारेस्ट्री एंड इंको रीहैबिलिटेशन (इंडियन काउंसिल ऑफ फॉरेस्ट्री रिसर्च एंड एजुकेशन), इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश।
3. इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ फारेस्ट मैनेजमेंट, मेन कैम्पस, नेहरु नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश।
4. कॉलेज ऑफ फारेस्ट्री एंड एनवायरमेंट पोस्ट, एग्रीकल्चर इंस्टीट्यूट, इलाहाबाद।

नैनोटेक्नोलॉजी में पी.जी. डिप्लोमा

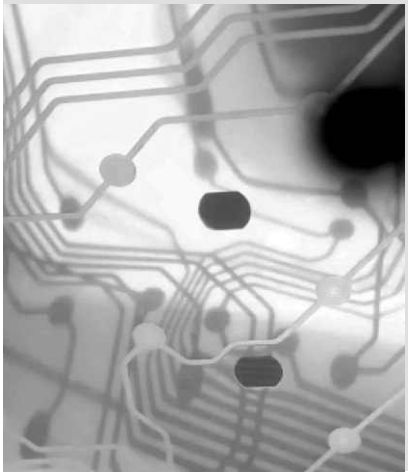

विज्ञान के इस युग में नैनोटेक्नोलॉजी जैसे क्षेत्र का अति विस्तृत महत्व है। इसमें रोजगार के अनेक अवसर मौजूद हैं, जिससे युवा अपने भविष्य को उज्वल बना सकते हैं। नैनोटेक्नोलॉजी के विविध अनुप्रयोगों को विभिन्न क्षेत्रों, जैसे कृषि पालन, मत्स्य पालन, खाद्य उद्योग, उपभोक्ता वस्तुएँ, ऊर्जा, पर्यावरण संरक्षण, अंतरिक्ष एवं वैमानिकी, इलेक्ट्रानिकी एवं कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी, दूर–संचार, रोग निदान एवं रोगोपचार आदि में उपयोग में लाया जा सकता हैं।

कोर्स

मैत्री कालेज, दिल्ली युनिवर्सिटी, दिल्ली, नैनो–टेक्नोलॉजी में पोस्ट ग्रेजुएट डिप्लोमा कोर्स संचालित करता है। इस संस्थान में सीटों की संख्या 30 है।

योग्यता

इस विषय में प्रवेश के लिए 50 प्रतिशत के साथ बीएस.सी. (ऑनर्स) बॉटनी / केमिस्ट्री / इलेक्ट्रानिक्स / फिजिक्स / जूलाजी; बीएससी लाइफ साइंस / एप्लाइड फिजिकल सांइस / इलेक्ट्रानिक्स बी टेक सम्बन्धित विषयों में उत्तीर्ण होना आवश्यक है।

डेयरी टेक्नोलॉजी

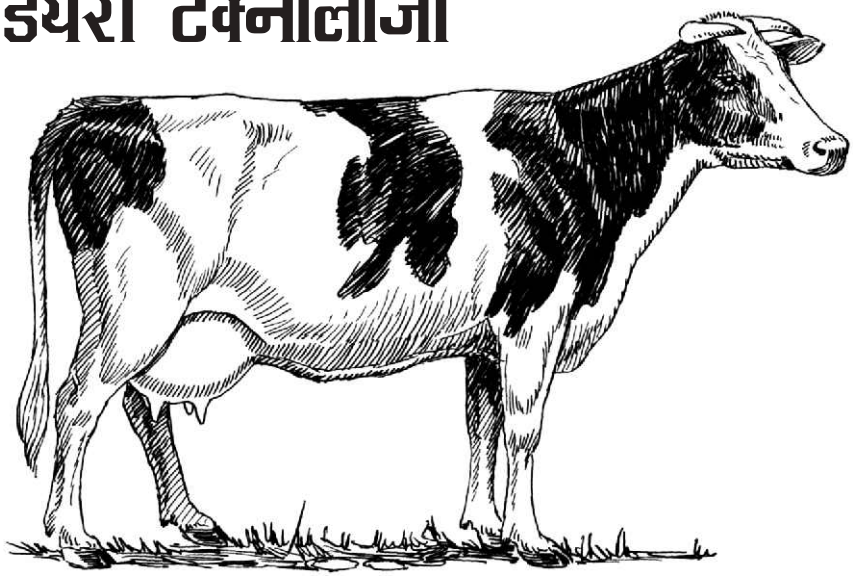

भारत जैसे कृषि प्रधान और बड़ी जनसंख्या वाले देश में डेयरी उद्योग का अहम योगदान है। डेयरी उद्योग के तहत दुग्ध उत्पादों का निर्माण और प्रोसेसिंग आता है। सिकुड़ते किचन के इस दौर में डेयरी उद्योग की अपनी अहमियत है। डेयरी उद्योग नए जमाने को समझ नए उत्पादों के साथ हर घर की जरूरत बन गया है। नई तकनीकों और बढ़ती प्रतियोगिता के कारण यह क्षेत्र युवाओं के लिए संभावनाओं से भरपूर है।

कोर्स

डिप्लोमा इन डेयरी इंजीनियरिंग; बीटेक इन डेयरी टेक्नोलॉजी; डेयरी केमिस्ट, डेयरी टेक्नोलॉजी, डेयरी इंजीनियरिंग, डेयरी माइक्रोबायोलॉजी, डेयरी इकोनॉमिक्स में पोस्ट ग्रेजुएट प्रोग्राम; मास्टर्स इन डेयरी, पीएच.डी. आदि कई रोजगार परक पाठ्यक्रम उपलब्ध हैं जो युवाओं को करियर बनाने के दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन पाठ्यक्रमों से युवा राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर की संस्थाओं में अच्छी जगह पा सकते हैं। किसी भी प्लांट मे क्वालिटी इंजीनियर या रिसर्चर के रुप में युवा काम कर सकते हैं।

बैचलर ऑफ वेटेरनरी साइंस एंड एनिमल हसबैंडरी के लिए वेटेरनरी काउंसिल ऑफ इंडिया, आल इंडिया कामन एन्ट्रेंस एग्जामिनेशन आयोजित करता है। वेटेरनरी काउंसिल ऑफ इंडिया भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थान है। इस कोर्स की अवधि पाँच साल की है जिसमें 6 महीने की इंटर्नशिप भी शमिल है। 60 प्रतिशत अंक लानेवाले उम्मीदवार डेयरी टेक्नोलॉजी के कोर्स में दाखिला ले सकते हैं।

प्रमुख संस्थान

1. सेठ एमसी कालेज ऑफ डेयरी साइंस, आणंद, गुजरात।
2. इलाहाबाद एग्रीकल्चरल इंस्टीट्यूट, डीम्ड यूनिवर्सिटी, उत्तर प्रदेश।
3. कालेज ऑफ टेक्नोलॉजी एंड एग्रीकल्चरल इंजीनियरिंग, उदयपुर, राजस्थान।
4. कालेज ऑफ वेटरनरी साइंस, तिरूपति, आंध्र प्रदेश।
5. इंदिरा गाँधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़।
6. नेशलन डेयरी रिसर्च इंस्टीट्यूट, करनाल, हरियाणा।
7. संजय गाँधी इंस्टीट्यूट ऑफ डेयरी टेक्नोलॉजी, पटना।
8. राजेंद्र एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, लोहियानगर, पटना।
9. डेयरी टेक्नोलॉजी कोर्स, आईआईटी, खड़गपुर।

जन्तु विज्ञान विभाग
डी.बी.एस. (पी.जी.) कालेज
देहरादून

पर्यावरण-शिक्षा शुरू हो अब स्कूली पाठ्यक्रमों से ही

रिजवान अहमद

आज चारों तरफ पर्यावरण में निरन्तर प्रतिकूल बदलाव की स्थिति व्याप्त है। उपभोक्तावाद एवं प्राकृतिक संसाधनों का अपव्ययकारी प्रयोग पर्यावरण की वर्तमान नाजुक स्थिति पर और भी अधिक बोझ डाल रहे है। विश्व पर्यावरण एवं विकास आयोग 1987 के अनुसार आज पर्यावरण चेतना में कमी आ गयी है। आधुनिक तकनीक एवं विकास के तरीकों ने भी पर्यावरण का काफी दोहन किया है। समस्याओं की गम्भीरता के मद्देनजर, आज यह जरूरी हो गया है कि समाज के प्रत्येक वर्ग में पर्यावरण चेतना जागृत हो और इसमें सभी का सहयोग अपेक्षित है। स्कूली बच्चों से लेकर बड़े–बूढ़ों सभी को शामिल करके हम एक प्राकृतिक – पर्यावरण के लिये आदर्श स्वावलम्बी योजना बना सकते हैं, जिससे उनके और उनके संसाधनों के बीच एक संतुलन व आदर्श सह–सम्बन्ध हो सके।

पर्यावरण–शिक्षा का स्वरूप इस तरह से होना चाहिए जिससे पर्यावरणीय–नीति का विकास हो सके, जैसे – मनुष्य के व्यवहार में परिवर्तन। साथ ही, मनुष्य यह अनुभव करे कि वह प्रकृति का अभिन्न अंग है, न कि प्रकृति से अलग।

दृष्टिकोण परम्परा का – 'परम्परा' बहुत व्यापक शब्द है। इसका अर्थ है, रीति रिवाज, रस्म या युगों से मान्य विचार या कार्य–पद्धति। पिता–माता या अन्य पूर्वजों और गुरुओं, विद्वानों ओर उपदेशकों से प्राप्त होने वाला ज्ञान और पुराने विश्वासों पर चलते रहने का झुकाव या दृष्टिकोण। भारतीय परिपेक्ष्य में वेद, उपनिषद आदि द्वारा स्थापित परम्परा को महान परम्परा कहेंगे और लोकगीतों, लोक नाट्यों, मुहावरों और लोकोक्तियों में वर्णित परम्परा को लघु परम्परा कहेंगे।

भारतीय संस्कृति की परम्परा तो शुरू हुई थी वनों में हीः चिन्तन–मनन से – भारतीय संस्कृति और सभ्यता वनों से ही आरंभ हुई। तपोवनों के वासी हमारे पूर्वज अध्यात्म के गुरु प्रतिष्ठित हैं। महान् ऋषि–मुनियों, संतों, मनस्वियों और दार्शनिकों ने लोक मंगल के लिए चिंतन–मनन किया। वनों से ही हमारे विपुल वांग्मय वेद–वेदांग एवं उपनिषद आदि का सृजन हुआ। अरण्यों (वनों) में लिखे जाने के कारण ग्रंथ विशेष आरण्यक कहलाए। प्रकृति के विभिन्न रूपों को समझते हुए वृक्षायुर्वेद की रचना की गई जिसका मूल सिद्धान्त था आधि–दैविक जीवन के महत्व को समझते हुए आधिभौतिक जीवन यापन हेतु प्रकृति का शास्त्रीय (वैज्ञानिक) विधि से दोहन करना। हमारे पुरखे कोई भी कार्य करने से पूर्व प्रकृति पूजन जरूर करते थे। नदियाँ, जलाशय, मेघ, पवन, अग्नि सभी के पूजन की परम्परा हमारे शास्त्रों में ही है। महर्षि याज्ञवल्क्य ने वृक्षायुर्वेद के उपवातक प्रकरणों में इन्धनार्थे द्रुमः छेदः (ईंधन हेतु वृक्ष काटना) पाप कहा है। किन्तु काश्यप संहिता में भगवान कश्यप ने लिखा है कि देववृक्ष तीर्थ स्थान में युवा और निरोग वृक्षों को छोड़कर सूखे या हवा से पतित वृक्षों को ले सकते हैं।

संरक्षण होना चाहिए अब वनों का भी – पर्यावरण–संरक्षण की यह परम्परा हमारी संस्कृति में मात्र इतने तक ही सीमित नहीं है। विभिन्न भारतीय त्यौहारों व पर्वो में भी पर्यावरण एवं प्रकृति प्रेम ही पिरोया हुआ है। इन पर्वो का निर्धारण प्राकृतिक चक्र (परिवर्तन) को ध्यान में रखकर किया गया है। शरद पूर्णिमा का पर्व जनमानव को प्रकृति के अधिकाधिक सामीप्य का संदेश देता है। महावीर जैन ने भी पशु–पक्षियों के प्रति हिंसा का निषेध कर पर्यावरण संतुलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। आचार–व्यवहार में उतारकर प्रकृति संरक्षण का संकल्प लेते हैं।

पर्यावरण–शिक्षा तो अब शुरू होनी चाहिए स्कूली पाठ्यक्रमों से ही – सम्यक शिक्षा के साथ ही पर्यावरण–शिक्षा एक ऐसा सशक्त माध्यम है, जो आने वाले समय में हमारे वनों को तथा पर्यावरण की रक्षा हेतु लोगों को जागरूक बना सकता है। इसमें परम्परागत, इकोफ्रन्डली कार्य कलापों का बड़ा योगदान हो सकता है। इसके लिए जरूरी है कि परम्परा का वह ज्ञान, जिससे पर्यावरण की रक्षा होती है, उसे प्राथमिक तथा माध्यमिक स्कूलों के पाठयक्रमों में भी अब उचित तरीके से शामिल किया जाय जिससे विद्यालयों में, इसकी चेतना बढ़े। साथ ही ऐसी विधियों का यह पाठयक्रम (को–करीकूलर) तथा अतिरिक्त पाठ्यक्रमीय (एक्स्ट्रा – पाठ्यक्रमीय) कार्यकलापों में भी पर्यावरण की संरक्षण–विधियों को डाला जाना भी लाभकर ही होगा। जिससे विद्यार्थी जो आगे चलकर नए राष्ट्र का निर्माण करेंगे उनमें भी यह चेतना बनी रहे कि बिना पर्यावरण की, वनों की रक्षा किये बगैर न तो अपना जीव सुखी बन सकेगा और न ही युगों से चली आ रही अपनी प्रकृति की ही रक्षा हो सकेगी। कृषि के क्षेत्र में भी इस चेतना द्वारा जन–जीवन के खाने के लिए जैविक विधि से प्रदूषण मुक्त खाद्य–सामग्री पैदा करने में भी काफी मदद मिलेगी जो कि अब समय की मांग ही बनती जा रही है। कारण कि पुरातन साहित्य में कहा गया है **'जीव जीवनम् कृषि' 'अन्न बहुकुर्वीत तद् व्रतम'** अर्थात् कृषि से ही जीवों का जीवन है और अधिक खाने योग्य सुरक्षित अन्न पैदा करो। सुरक्षित अन्न तो तभी मिलेगा जब हम कृषिगत पर्यावरण तथा इसके घटकों को प्रदूषण से मुक्त करेंगे, जिसके लिए पर्यावरण की शिक्षा/ज्ञान का होना जरूरी है।

21/1, राजेन्द्र नगर,
देहरादून

कैसे बनाएँ **विज्ञान शिक्षण को** लोकप्रिय एवं प्रभावी

अनंत गंगोला

हम सबने अपने आस–पास किसी छोटे बच्चे को बड़ा होते हुए देखा है। बच्चे के लिए पूरा संसार नया है और वह किस तरह बिना थके इस संसार को जानने–पहचानने की कोशिश करता है। उसका, किसी भी चीज को मुँह में डालना एक प्रयोग है, जो चख कर उस वस्तु की पहचान करने की चेष्टा है। उसका अपने खिलौनों को तोड़ देना भी एक प्रयोग है, यह जानने के लिए कि आखिर उस खिलौने के अंदर वह क्या प्रक्रिया है जो इसे संचालित करती हैं। उसका पहली बार नल खोलना, टार्च को जला पाना, पंखे की गति बढ़ा देना या फिर रिमोट से टी0वी0 की आवाज को कम–ज्यादा करना, ये सब प्रयोग हैं जो बच्चा अपने संसार को जानने के लिए बिना किसी प्रोत्साहन या विद्यालय में जाए, स्वयं करता है।

अगर हम उक्त बातों से सहमत हैं तो हमें यह स्वीकारना होगा कि जिज्ञासा एक नैसर्गिक प्रकृति है जिसके साथ हर बच्चा इस दुनिया में आता है और प्रयोगधर्मिता उसका बेहद स्वाभाविक गुण है।

अब एक और बात पर हमें ध्यान देने की आवश्यकता है कि हम इस नैसर्गिक प्रकृति को बच्चे के पालन–पोषण या फिर उसकी विद्यालयी शिक्षा में कितना स्थान व सम्मान दे पाते हैं। कई बार हम विज्ञान शिक्षण के बोझिल तरीकों से, जाने–अनजाने में ही सही, उनकी जिज्ञासाओं को बढ़ाने के स्थान पर धीरे–धीरे नष्ट कर देते हैं।

हमें एक और बात की तरफ अपना ध्यान आकर्षित करने की जरुरत है जो है बच्चों के सवाल। बोलना सीखते ही बच्चे कितने सवाल करते हैं। ये चाँद हमारे साथ क्यों चलता हैं? बारिश क्यों होती है? रात को सूरज कहाँ चला जाता है? कूकर सीटी क्यों बजाता है? हवा दिखती क्यों नहीं है? आदि–आदि।

बिना किसी पूर्वाग्रह के सवाल उठा पाने की इस स्वाभाविक प्रकृति एवं उत्साह का कितना सम्मान हो पाता है यह बात तय करती है कि हम बच्चे में वैज्ञानिक सोच को विकसित करने में कितनी सहायक भूमिका का निर्वहन कर पाते हैं।

विज्ञान शिक्षण को लोकप्रिय बनाने के लिए हमें इन बातों को समझने की जरुरत है। प्रश्न करने की गुंजाइश बनाए रखना और रेडीमेड उत्तर देने की अपेक्षा उन परिस्थितियों को विकसित कर पाना जो बच्चे को स्वयं उत्तर तक ले जाने में सहायक बने अर्थात् विद्यालयी शिक्षा में उत्तर और परिभाषाएँ देने के

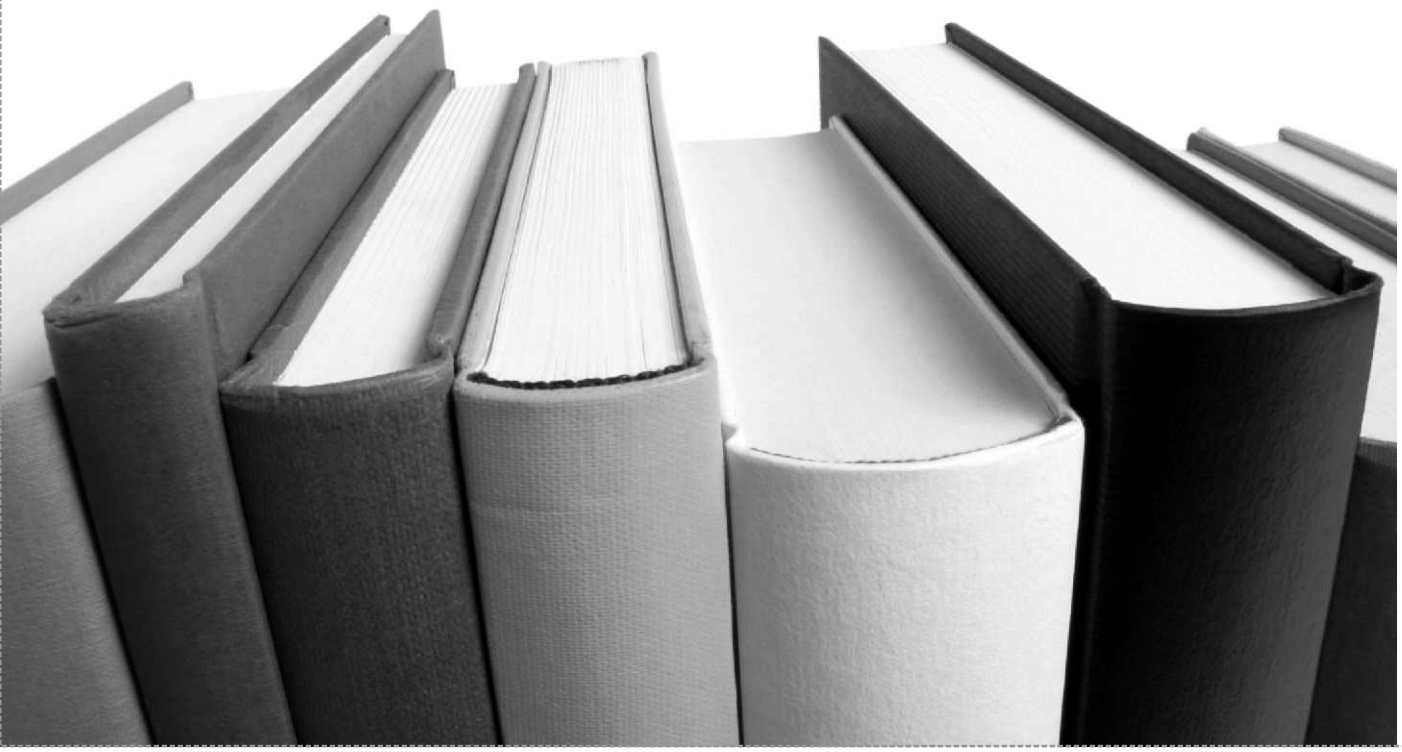

बजाय हमें प्रश्न करने की स्वतंत्रता प्रदान करना और उत्तर खोज पाने के लिए अवलोकन, आंकड़ों का संग्रह, बातचीत, द्वारा विश्लेषण एवं तर्क कर पाने का वातावरण और निष्कर्षों तक पहुँच पाने में सहायता उपलब्ध कराने के उपक्रम करने होंगे।

प्राथमिक शिक्षा में बच्चे हँसी–खुशी के साथ सीखे यह कौन नहीं चाहता? वास्तव में शिक्षक, माता–पिता की चाह होती है कि पाँच साल की शिक्षा बच्चों के लिए सुखद स्मृति बने।

छात्रों की शिक्षा के लिए शिक्षण पद्धति और शिक्षण सामग्री का बड़ा ही महत्व है। प्रस्तुत लेख में प्रांरभिक कक्षाओं में विज्ञान शिक्षण की नवाचारी एवं रोचक विधियों का जिक्र किया गया है।

प्रारंभिक कक्षाओं के छात्र इस विषय में विशेष रुचि लेते हैं कि उनके चारों ओर की दुनिया कैसे और क्या करती है? शिक्षक, इस रुचि का इस्तेमाल बच्चों को अपने आस–पास की चीजों, घटनाओं को विज्ञान की दृष्टि से देखने/खोजने के लिए प्रोत्साहित करने में कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, बच्चों के लिए यह कौतूहल व रुचि का विषय हो सकता है कि ''पत्तियाँ'' अपना रंग कैसे बदल लेती हैं?'' बच्चे अपनी क्षमतानुसार इस मुद्दे पर जानकारियाँ इकट्ठा कर सकते हैं। आपस में चर्चा कर सकते हैं। परियोजना कार्य, साक्षात्कार, अवलोकन, कक्षा–कार्य, शैक्षणिक–परिभ्रमण आदि शैलियों द्वारा अपनी जानकारी/जिज्ञासा बढ़ा सकते हैं। इसके पश्चात बच्चों द्वारा संग्रह की गई सूचनाओं/जानकारियों को आधार बनाकर शिक्षक इस विषय–वस्तु पर कक्षा संपादित कर सकते हैं। इस प्रक्रिया में पाठ्य–पुस्तक को एक संदर्भ–सामग्री के रुप में ही देखा जाना चाहिए।

प्रारंभिक कक्षाओं के बच्चे करके सीखने में ज्यादा रुचि लेते हैं। उदाहरण के लिए उत्प्लावन की समझ विकसित करने के लिए यह प्रयोग कर सकते हैं। एक पानी से भरे टब को बच्चों के बीच रखकर उनसे आस–पास की वस्तुओं को उसमें डालकर यह पता लगाने को कहा जा सकता है कि इनमें से कौन–कौन सी वस्तुएँ पानी में तैरती हैं और कौन डूब जाती हैं? साथ ही सोचने के लिए उनसे कहा जा सकता है कि ''ऐसा क्यों होता है?'' आगे इस पर विस्तार से चर्चा की जा सकती है।

बच्चों की पाँच ज्ञानेन्द्रियों की चर्चा करते हुए शिक्षक बच्चों को पाँच समूहों में विभक्त कर सकते हैं। इसके बाद पाँच डब्बों में पाँच अलग–अलग वस्तुओं को रखकर श्यामपट्ट पर पाँचों कौशलों यथा – स्पर्श, आवाज, दर्शन, गंध व स्वाद की सूची बनायी जा सकती है और बच्चों से इन कौशलों का प्रयोग कर डब्बों में रखी वस्तुओं पर अवधारणा–निर्माण हेतु कहा जा सकता है।

इसी प्रकार बुलबुलों की अवधारणा को समझने के लिए बच्चों से, स्थानीयता आधारित कई तरह के मिश्रण, जिनसे बुलबुले बनते हों, के निर्माण के लिए कहा जा सकता है। पुनः मात्रा (मिश्रण की), बुलबुलों के प्रकार इत्यादि मुद्दों पर वर्ग–सपेक्ष चर्चा की जा सकती है।

आगे इसी प्रकार की कुछ अन्य गतिविधियों की सूची वर्णित है। इनमें से प्रत्येक पर बच्चों से परियोजना कार्य करवाया जा सकता है।

- वर्ग के सभी बच्चों की उँगलियों के निशान इकट्ठा कर उनका वर्गीकरण।
- आस–पड़ोस में उपलब्ध पौधों–वृक्षों की पत्तियाँ इकट्ठा कर उनका वर्गीकरण।
- नमक और पानी के घोल को गर्म कर रवों का निर्माण।
- सिरके व बेकिंग सोडे के मिश्रण में किशमिश के दाने डालकर (रेजिंग्स् डांस)।

उपर्युक्त गतिविधियों/प्रयोगों को वर्ग–कक्ष में संपादित करने से पूर्व शिक्षकों को वर्ग–सापेक्ष दक्षता सूची का निर्माण, उनका वर्गीकरण एवं प्रयोग की जाने वाली शिक्षण पद्धतियों से संबंधित पूरी तैयारी कर लेनी आवश्यक है।

विज्ञान शिक्षण हेतु बच्चों में निम्नांकित कौशलों का विकास अति–आवश्यक है।

- जाँच
- आलोचनात्मक चिंतन
- प्रश्न
- विज्ञान के खेल/प्रयोग
- प्रौद्योगिकी का एकीकरण

विज्ञान के बारे में समाज के सभी अंग कुछ ऐसी अवधारणा बनाते हैं कि यह एक जादू जैसी चीज है या फिर ये विदेशों में कहीं होता है। यह अपने घर की खेती नहीं है।

वास्तव में, उन्हें जीवन के हर पहलू में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने तथा छोटे–छोटे घरेलू प्रयोग करके सीखने की सलाह देकर अथवा करवाकर उनमें वैज्ञानिक सोच एवं दृष्टिकोण का विकास करवाया जा सकता है। विज्ञान शिक्षण का एक तात्कालिक लक्ष्य तो यह बनाया ही जा सकता है कि बच्चे आस–पास की चीजों से कुछ सार्थक निर्माण कर लें जिसे खिलौने की तरह इस्तेमाल किया जा सकता है।

बच्चे हर तरफ बीज से पौधा बनते देखते हैं। वे यदि इस मुद्दे पर चिंतन करें तो वे न सिर्फ ज्यादा सीखेंगे वरन् उनमें खोजने की प्रवृत्ति का भी विकास होगा। अलग तरह के बीजों को एक ही तरह की मिट्टी में डालते हैं। एक फल और दूसरा फूल कैसे बनता है या फिर फल बनाने के लिए फूल क्यों आवश्यक है? चावल को उबाल कर क्यों पकाते हैं? कुछ फल खट्टे व कुछ फल मीठे क्यों होते हैं? गेहूँ का आटा और फिर रोटी क्यों बनाते हैं। इसमें कौन सी प्रक्रिया होती है?

बच्चे यदि खुद से चिंतन करें तो इस प्रकार के हजारों प्रश्न सामने आएंगे। वर्ग में पाँच–पाँच का समूह बनाकर ऐसे प्रश्नों को इकट्ठा करने के लिए काम किया जा सकता है। पुनः इस पर एक प्रोजेक्ट की तरह कार्य किया जा सकता है।

विज्ञान शिक्षण को लोकप्रिय एवं प्रभावी बनाने हेतु बच्चों के दैनिक जीवन में प्रतिदिन हो रही घटनाओं में विज्ञान को ढूंढा जाना चाहिए। यह अति आवश्यक है।

इससे न सिर्फ विषय की प्रासंगिकता बढ़ेगी, वरन् बच्चों की रुचि एवं प्रयोगधर्मिता में भी इजाफा होगा।

राज्य प्रमुख
अजीम प्रेमजी फाउंडेशन उत्तराखण्ड
मयूर विहार, सहस्रधारा रोड, देहरादून

परितंत्र की कहानी

एक था हरियाला वन

दिनेश चन्द्र शर्मा

एक था हरियाला वन। नाम तो उसका हरियाला था लेकिन हरियाली वहाँ बिरले ही दिखायी पड़ती थी। एक दम सूखा और उजाड़ था वह वन। दिन भर वहाँ धूल के गुबार उड़ते थे, और तेज धूप आग बरसाती थी। कहीं कहीं घास, तिनके, छोटी छोटी झाड़ियां या आड़े तिरछे कमजोर से वृक्ष दिखायी पड़ते थे। जीव जन्तुओं की संख्या भी नगण्य थी। कभी–कभार कोई वन्य जीव दिखायी पड़ जाता था। उस वन से होकर एक नदी बहती थी। उसकी धारा एक दम पतली थी। उसमें बहुत थोड़ा सा पानी बहता था। वन के बचे–खुचे जीव जन्तु उसी नदी के पानी से अपनी प्यास बुझाते थे।

एक दिन हिरणों का एक झुण्ड कहीं से आ निकला। हिरण प्यास से व्याकुल थे, तेजी से नदी में उतरे और पानी पीने लगे। झुण्ड के दो हिरण चौकन्ने होकर इधर उधर देख रहे थे, शेष पानी पी रहे थे। तभी चौकन्ने हिरणों ने खतरे का संकेत दिया। धनुष–बाण और भाले लिये शिकारियों का एक दल वहाँ आ धमका। उनके साथ शिकारी कुत्ते भी थे। सारे हिरण सरपट दौड़े। लेकिन दौड़कर जाते कहाँ? छिपने का कोई भी स्थान न था। दूर–दूर तक कोई घास–फूस, झाड़ी या वनस्पतियां न थीं। हिरण दौड़ते रहे तथा शिकारी व उनके कुत्ते उनका पीछा करके उनको मारते रहे। जब वे अपनी आवश्यकता के अनुसार कई हिरणों को मार चुके तब रुके, मृत हिरणों को उठाया और अपने घर की राह ली। बचे हुये हिरण बरी तरह भयभीत थे। वे वन में आगे की ओर भागते चले गये और दूर–दराज की इक्की–दुक्की झाड़ियों के पीछे छिपने का प्रयास करने लगे। एक हिरण और उसका शावक एक झाड़ी के पीछे बैठे हाँफ रहे थे। जब साँसे कुछ संयत हुईं तो शावक ने कहा, "पापा! आज तो हम मारे ही जाते। शिकारी बुरी तरह हमारे पीछे पड़े थे।"

हिरण ने उत्तर दिया, " हाँ बेटा, अपने कई साथी तो मारे भी जा चुके है।" फिर गहरी साँस लेकर बोला, "लेकिन आज ही क्या, अब तो यह रोज की बात हो गयी है। आये दिन कोई न कोई शिकारी दल वन में आता है और अपनी इच्छानुसार पशुओं को मारकर ले जाता हैं।"

शावक ने कहा, "पापा, अपना जीवन भी बड़ा असुरक्षित है। हमेशा हमें जान का खतरा बना ही रहता है।"

हिरण ने लम्बी साँस लेकर कहा, "हाँ, बेटा तभी तो इस वन में वन्य जीवों की संख्या कितनी कम रह गयी है। और इनके लिये भी न तो चरने के लिये घास–पात हैं और न छिपने के लिए झाड़ियाँ। ऊपर से इन शिकारियों के अत्याचार। ऐसी स्थिति में हमारा अस्तित्व ही खतरे में पड़ा हुआ है।"

शावक ने कहा, "पापा, क्या ही अच्छा होता यदि इस वन में खूब घास–पात, झाड़ियां और पेड़–पौधे होते। तब तो हमारे चरने और छिपने की पर्याप्त जगह होती। फिर शिकारी भी हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते थे। बस शिकारियों की आहट पाते ही हम झाड़ियों में छिप जाया करते। फिर तो इस वन में बहुत सारे जीव–जन्तु होते।" हिरण ने लम्बी साँस लेकर कहा, "अरे बेटा शायद तुम्हें पता नहीं है। पहले हमारा हरियाला वन ऐसा ही तो था। इसका हरियाला नाम ऐसे ही थोड़े है। यहाँ के चप्पे–चप्पे पर हरियाली थी। नदियों और सरोवरों में भरपूर पानी था। विविध तरह के जीव जन्तु यहाँ बड़े मजे से रहते थे। किसी को कोई कष्ट न था। सभी सुखी थे।" शावक ने बड़ी उत्सुकता से पूछा, "सच पापा, क्या ऐसा था अपना हरियाला वन?

हिरण ने जोर देकर कहा, " हाँ, हाँ बेटा, ऐसा ही था अपना यह प्यारा वन। जब मैं तुम्हारी आयु का था तब मैं उसी हरे–भरे हरियाला वन में सारे दिन कुलाँचें मारता फिरता था। बहुत ही सुन्दर और आरामदेह था यह वन .....।"

हिरण की आँखों में आँसू भर आये।

शावक ने आश्चर्य से पूछा, "लेकिन पापा, फिर ऐसा क्या हुआ जो इतना हरा–भरा वन एकदम उजड़ गया। मुझे तो आपकी बातों पर विश्वास ही नहीं हो रहा है। मुझे तो ऐसा लग रहा है जैसे आप स्वप्नावस्था में बातें कर रहे है?"

हिरण ने कहा, " नही बेटा, मैं तो पूरी तरह जागृत अवस्था में हूँ और जो कुछ मैने स्वयं अपनी आँखों से देखा है वही बतला रहा हूँ। मैने तो स्वयं इस हरियाला वन को उजड़ते हुए देखा है।"

शावक ने उत्सुकता से पूछा, "पापा, जरा विस्तार से बतलाइये कि आपने क्या क्या देखा है? यह हरियाला वन कैसे बर्बाद हुआ?"

हिरण ने गहरी साँस छोड़ते हुए कहा,"ठीक है बेटा, मैं तुम्हे इस वन के विनाश की कहानी सुनाता हूँ।

ध्यान से सुनो ....।''

(क्रमशः)

राज्य शैक्षणिक संयोजक,
राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस,
उत्तर प्रदेश

माह जून से सितम्बर तक पहल संस्था द्वारा आयोजित गतिविधियों की एक झलक

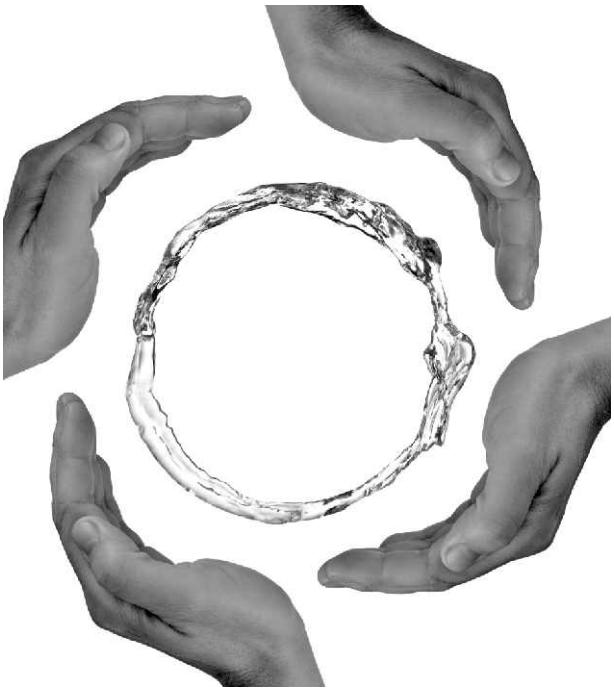

1» ....ताकि भविष्य में पानी के लिए युद्ध न हो।

''उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्यौगिकी परिषद् (यूर्कोस्ट), देहरादून'' के सौजन्य से कुमायूँ सम्भाग के विज्ञान प्रसार केन्द्रों की कार्यदायी संस्था ''पीपुल्स एसोशिएसन ऑफ हिल एरिया लान्चर्स (पहल) , पिथौरागढ़'' के तत्वावधान में ''जल शुद्धिकरण प्रबन्धन का वैज्ञानिक मूल्यांकन'' विषय के अन्तर्गत राज्य के कुमायूँ सम्भाग के विज्ञान प्रसार केन्द्रों के द्वारा कई कार्यक्रम आयोजित किये गये।

कार्यक्रम में विज्ञान प्रसार केन्द्रों, विद्यालयों एवं स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से आयोजित कार्यक्रम के अन्तर्गत जल संरक्षण, स्वच्छता, कूड़ा प्रबन्धन, जल शुद्धिकरण तकनीक आदि को लक्ष्य तक पहुँचाने के उद्देश्य से विज्ञान प्रसार केन्द्रों के द्वारा प्रतियोगिताओं, गोष्ठी, व्याख्यान का आयोजन किया गया जिसके अन्तर्गत समूचे विश्व में जल की समस्या के विकराल रूप को देखते हुए समाज में जल शुद्धिकरण व प्रबन्धन के प्रति संचेतना जागृत की गयी। कार्यक्रम को संचालित करने में कुमायूँ सम्भाग के विभिन्न विज्ञान प्रसार केन्द्रों के प्रभारी, स्वैच्छिक संगठनों के निदेशक, विभिन्न विद्यालयों के प्रधानाचार्य व सामाजिक कार्यकर्तागण आदि ने अपना विशेष योगदान प्रदान किया। विज्ञान प्रसार केन्द्रों द्वारा स्थानीय स्तर पर आयोजित कार्यक्रमों की श्रृंखला निम्नलिखित है-

क्र0 सं०	विज्ञान प्रसार केन्द्र का नाम	संचालित गतिविधि
1.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, गुरना (लोक संचार एवं विकास समिति) पिथौरागढ़	प्रतियोगिताएँ– पोस्टर, निबन्ध,स्लोगन विषयः– 1. जल प्रबन्धन 2. कूड़ा प्रबन्धन
2.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, मुडियानी, (निधि) चम्पावत	व्याख्यानमालाओं का आयोजन
3.	विज्ञान प्रसार केन्द्र , दिगांस, (मानव एवं पर्यावरण विकास समिति), पिथौरागढ़	गोष्ठी का आयोजन
4.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, द्यौनाई (हितैषी) गरूड़, बागेश्वर	गोष्ठी का आयोजन
5.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, लेलू (अनाम संस्था) , पिथौरागढ़	गोष्ठी का आयोजन
6.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, पण्डा (ग्रामोद्योग सेवा कल्याण समिति), पण्डा, पिथौरागढ़	व्याख्यानमाला का आयोजन

2»

...अब भी न चेता मनुष्य तो पछताना पड़ेगा।

''उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्यौगिकी परिषद् (यूकॉस्ट), देहरादून'' के सौजन्य से कुमायूँ सम्भाग के विज्ञान प्रसार केन्द्रों की कार्यदायी संस्था ''पीपुल्स एसोशिएसन ऑफ हिल एरिया लान्चर्स (पहल) , पिथौरागढ़'' के तत्वावधान में ''वाश'' के ''इको वाटर लिटरेसी'' कार्यक्रम अन्तर्गत राज्य के कुमायूँ सम्भाग के विज्ञान प्रसार केन्द्रों के द्वारा कई कार्यक्रम आयोजित किये गये। कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य जल संरक्षण की आधुनिक तकनीकी के प्रयोग हेतु जनजागरण कार्यक्रम था।

प्रत्येक जीवधारी के जीवन की सभी क्रियाएँ जलाधारित होने के कारण जल को

'जीवन' कहा गया है। आयुर्वेद में जल को अन्न की अपेक्षा श्रेष्ठ माना गया है तथा इसे अमृत की संज्ञा दी गई है। मैक्सवेल के अनुसार जल आर्थिक, सांस्कृतिक तथा जैविक दृष्टि से पृथ्वी का अत्यन्त ही उपयोगी संसाधान है। जल को हम पीते हैं, पुनः उत्सर्जित करते हैं, स्नान करते हैं, शांत होते हैं, मछली पकड़ते हैं, खाना बनाते हैं, पौधों को सींचते हैं, ऊर्जा एवं शक्ति प्राप्त करते हैं, परिवहन एवं मनोरंजन करते है। वस्तुतः यही कारण है कि विश्व की प्राचीन सभ्यताएँ नदियों के सहारे ही विकसित हुई। यदि जल संरक्षण हेतु आज से ही संचेतना जागृत नहीं की गयी तो भविष्य में जल संकट के गम्भीर परिणाम सामने आ सकते हैं। इसी उद्देश्य को परिलक्षित कर कुमायूँ सम्भाग के विज्ञान प्रसार केन्द्रों के माध्यम से निम्न कार्यक्रम आयोजित किये गये।

क्र० सं०	विज्ञान प्रसार केन्द्र का नाम	संचालित गतिविधि
1.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, गुरना (लोक संचार एवं विकास समिति) पिथौरागढ़	''जल संरक्षण एवं प्रबन्धन की आधुनिक तकनीक'' विषयक व्याख्यान
2.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, टोटानौला, (मुस्कान), पिथौरागढ़	गोष्ठी, निबन्ध तथा पोस्टर प्रतियोगिताओं का आयोजन
3.	विज्ञान प्रसार केन्द्र ,भटयूड़ा , (स्वाती ग्रामोद्योग संस्थान), पिथौरागढ़	व्याख्यान, नौला सफाई अभियान कार्यक्रम
4.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, काण्डा ,बागेश्वर अरण्य सेवा संस्थान , पिथौरागढ़	व्याख्यान का आयोजन
5.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, निगुणता, अल्मोड़ा (राइज संस्था) , अल्मोड़ा	व्याख्यानमाला का आयोजन
6.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, कोयाटी, लोहाघाट (आशा संस्था), चम्पावत	व्याख्यानमाला, प्रतियोगिताओं का आयोजन
7.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, आरे, बागेश्वर (हिमालयन सेवा समिति), पिथौरागढ़	व्याख्यानमाला का आयोजन
8.	विज्ञान प्रसार केन्द्र पण्डा, पिथौरागढ़ (ग्रामोद्योग सेवा कल्याण समिति), पिथौरागढ़	व्याख्यानमाला का आयोजन
9.	विज्ञान प्रसार केन्द्र विनायक, (ग्रामीण कृषि एवं पर्यावरण विकास समिति) पिथौरागढ़	व्याख्यानमाला का आयोजन
10.	विज्ञान प्रसार केन्द्र, तल्ली मादली, चम्पावत, (निधि) चम्पावत	व्याख्यानमाला का आयोजन

3»

स्वयं सजग रहकर ही किया जा सकता है मिलावटखोरी का सामना

''उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट), देहरादून'' के सौजन्य से राज्य के सामाजिक-वैज्ञानिक संगठन ''पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लान्वर्स (पहल) पिथौरागढ़'' के तत्वावधान में एक दिवसीय खाद्य पदार्थ परीक्षण प्रशिक्षण कार्यशाला का आयोजन दिनाँक 11 सितम्बर 2010 को ''जे बी मैमोरियल मानस एकेडमी मानस विहार, दौला पिथौरागढ़'' में किया गया। कार्यक्रम में जनपद पिथौरागढ़ के चार विद्यालयों- विवेकानन्द विद्या मन्दिर इण्टरमीडिएट कालेज, सरस्वती देव सिंह राजकीय इण्टरमीडिएट कालेज, कृष्णानन्द उप्रेती राजकीय इण्टरमीडिएट कालेज तथा जे बी मैमोरियल मानस एकेडमी मानस विहार, के 41 छात्र-छात्राओं सहित जनपद पिथौरागढ़, चम्पावत, अल्मोड़ा के विज्ञान प्रसार केन्द्रों के 8 प्रतिनिधियों ने प्रतिभाग किया जिनमें विज्ञान प्रसार केन्द्र गुरना, पण्डा, टोटानौला, दिगांस, कोयाटी, तल्लीमादली, बनलेख, दन्या के प्रतिनिधिगण उपस्थित थे।

कार्यक्रम की अध्यक्षता उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट), देहरादून के जिला समन्वयक डा०नीलाम्बर पुनेठा द्वारा की गयी। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि प्रो०आर०सी० पाण्डे पूर्व विभागाध्यक्ष, भौतिक विज्ञान विभाग, एल०एस०एम०रा०स्ना० महाविद्यालय, पिथौरागढ़ तथा विशिष्ट अतिथि, डा० कुमकुम साह, असिस्टेन्ट प्रोफेसर, जन्तु विज्ञान विभाग, एल०एस०एम०रा०स्ना० महाविद्यालय, पिथौरागढ़,कु० रेणु साह प्रधानाध्यापिका, कस्तूरबा गाँधी आवासीय बालिका विद्यालय,दशाईथल, गंगोलीहाट, श्रीमती हेमलता पाण्डे, पूर्व प्रवक्ता, रा०बा०इ०का०, पिथौरागढ़, श्री

आर०एस०खोलिया, प्रवक्ता, रसायन विज्ञान, एस०डी०एस०रा०इ०का० पिथौरागढ तथा कार्यक्रम के सन्दर्भ व्यक्ति श्री योगेश भट्ट, अध्यक्ष, लोक संचार एवं विकास समिति,पिथौरागढ़ थे।

पहल संस्था के वैज्ञानिक सलाहकार डा० अशोक कुमार पन्त ने कार्यक्रम के विषय में बताते हुए कहा कि आज खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता इस कदर प्रभावित हो चुकी है कि बाजार में प्रचलित खाद्य सामग्री की प्रामाणिकता नगण्य हो चली है। मिलावट का धन्धा जोर–शोर से अपने पाँव पसार रहा है जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण मनुष्य का गिरता स्वास्थ्य है। ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि खाद्य सामग्री की प्रामाणिकता का ज्ञान प्रत्येक मनुष्य को हो ताकि वह स्वयं द्वारा उपयोग की जा रही खाद्य सामग्री का परीक्षण स्वयं कर उसका उपयोग कर सकें।

सभी विद्यालयों एवं विज्ञान प्रसार केन्द्रों में कार्यक्रम से पूर्व भेजी सूचना के आधार पर सभी प्रशिक्षणार्थियों को स्वयं के घरों में उपयोग हो रही खाद्य सामग्रियों के सैम्पल कार्यशाला दिवस में लाने हेतु निर्देशित किया गया था। इस आधार पर सभी 49 प्रशिक्षणार्थी अपने साथ दैनिक उपयोग में प्रयोग की जाने वाली वस्तुओं के सैम्पल अपने साथ ले कर आये थे जिसमें चायपत्ती, दूध, चीनी, सरसों का तेल, रिफाइण्ड तेल, मिठाई, हल्दी पाउडर, धनिया पाउडर, मिर्च

पाउडर, लौंग, इलाइची, काली मिर्च, हींग, दालचीनी, शहद, सौंफ, घी, व विभिन्न प्रकार की दालें इत्यादि वस्तुओं का परीक्षण स्पैक्स संस्था, देहरादून द्वारा निर्मित ''रसोई कसौटी'' किट के माध्यम से सन्दर्भ शिक्षक श्री योगेश भट्ट के दिशा निर्देशन में सभी प्रशिक्षणार्थियों द्वारा किया गया। इसके परिणामों को देखकर सभी प्रशिक्षणार्थी चकित रह गये। सभी प्रयोगों के आधार पर 70: खाद्य वस्तुऐं मिलावटी पायी गयीं। सभी परीक्षण घरेलू संसाधनों के माध्यम से किये जाने वाले थे जिसका सभी प्रशिक्षणार्थियों द्वारा स्वागत किया गया। अन्त में सभी प्रशिक्षणार्थियों द्वारा प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त ज्ञान को व्यापक रूप में प्रचारित–प्रसारित करने का आश्वासन दिया गया। इसके उपरान्त मेजबान विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री बी०के० भट्ट एवं श्री आर०एस० खोलिया व श्री जी०एस०बोहरा जी के कर कमलों से सभी प्रशिक्षणार्थियों को प्रमाण–पत्र वितरित किये गये।

कार्यशाला को सफल बनाने में श्री देवाशीष पन्त, श्री राजेश पाण्डेय, श्री विजेन्द्र पटियाल, कु० सुमन बिष्ट, कु० अभिलाषा आर्या, श्री गौरव कापड़ी, श्री मनीष देवलाल, श्री मोहन चन्द्र जोशी, श्री देवराज सिंह सौन, श्री हेम नगरकोटी, श्री हरीश राम, श्री रोहित कुमार आदि का विशेष सहयोग प्राप्त हुआ।

कार्यक्रम का संचालन श्री जी०एस० बोहरा जी द्वारा किया गया।

उत्तराखण्ड में बाल विज्ञान कांग्रेस

की तैयारियोंपर भी देखने को मिला मौसम की प्रतिकूलता का असर

''राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद् (विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग) भारत सरकार नई दिल्ली'' के सौजन्य से उत्तराखण्ड की राज्य समन्वयक संस्था ''पीपुल्स एसोसिएशन ऑफ हिल एरिया लान्चर्स (पहल), पिथौरागढ़'' के दिशानिर्देशन में उत्तराखण्ड राज्य में राज्य स्तरीय १८वीं राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस की तैयारियां इस समय अपने चरम पर हैं।

10–17 वर्ष के बाल वैज्ञानिक सभी जिलों के अपने विकास खण्डों में बाल वैज्ञानिक राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के मुख्य विषयः– **भूमि संसाधनः समृद्धि के लिए उपयोग करें, भविष्य के लिए बचाएँ तथा छः उप विषयों 1. अपनी भूमि को जानो 2. भूमि के कार्य 3. भूमि के गुण 4. भूमि पर मानव हस्तक्षेप 5. भूमि संसाधनों का**

दीर्घकालिक उपयोग 6. भूमि प्रयोग हेतु सामुदायिक ज्ञान पर अपने–अपने क्षेत्रों में शोध अनुभव पत्र तैयार करने में व्यस्त हैं। उनके इस महत्वपूर्ण कार्य में उनके मार्गदर्शक शिक्षक अपनी अहम भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस के राज्य समन्वयक डा० अशोक कुमार पन्त ने अवगत कराया है कि उत्तराखण्ड में इस वर्ष की बाल विज्ञान कांग्रेस की तैयारियों पर मौसम की प्रतिकूलता का असर देखने को मिला है। उत्तराखण्ड राज्य की विषम भौगोलिक स्थिति एवं अधिक बरसात के कारण गतिविधि भी प्रभावित हुई है जिस कारण विकास खण्ड स्तरीय बाल विज्ञान कांग्रेस का आयोजन सितम्बर माह तक भी नहीं हो पाया है। दैवीय आपदाओं के प्रकोप ने राज्य के लगभग सभी जनपदों को प्रभावित किया है। जनपदों के आवागमन के लगभग सभी मार्ग बाधित हो चुके हैं। इसलिये वर्ष 2010 की राज्य स्तरीय बाल विज्ञान कांग्रेस का विकास खण्ड स्तरीय आयोजन अक्टूबर माह के प्रथम सप्ताह तक पूर्ण करने एवं जिला स्तरीय आयोजन अक्टूबर माह के द्वितीय सप्ताह तक पूर्ण करने के निर्देश सभी जिला समन्वयकों को दिये गये हैं।

इस वर्ष का राज्य स्तरीय आयोजन राजकीय बालिका इन्टर कालेज, कोटद्वार पौड़ी गढ़वाल में आयोजित किया जाना है जिसके लिए श्री के०के० जोशी, जिला समन्वयक, पौड़ी को कार्यक्रम समन्वयन का दायित्व सौंपा गया है कार्यक्रम की सम्भावित तिथि 26–27 नवम्बर रखी गई है एवं राष्ट्रीय स्तर की बाल विज्ञान कांग्रेस चेन्नई में दिनाँक 27–31 दिसम्बर तक आयोजित किया जाना सुनिश्चित किया गया है।

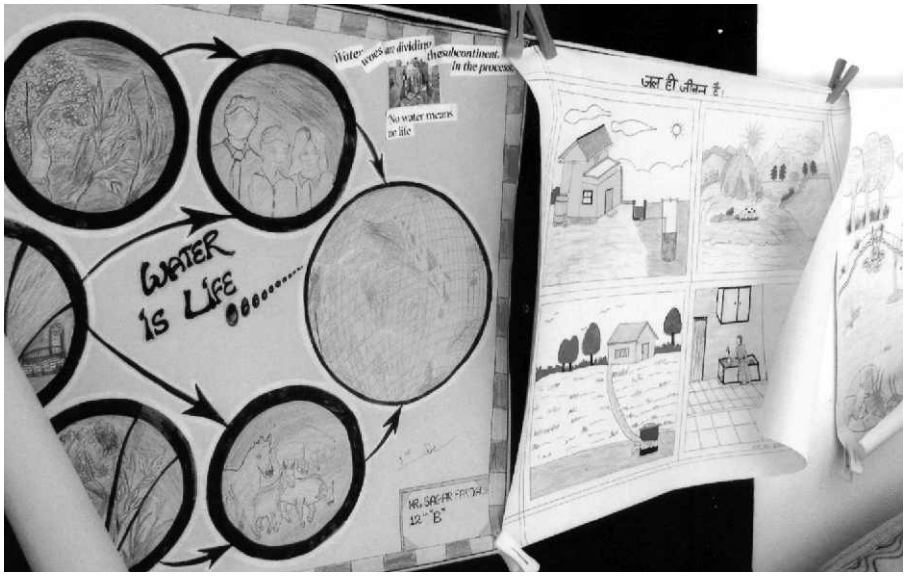

मशरूम उत्पादन
स्वरोजगार का एक सशक्त माध्यम

''उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट), देहरादून'' के सौजन्य से **''लोक संचार एवं विकास समिति'', पिथौरागढ़** के तत्वावधान में पर्वतीय क्षेत्र को मशरूम उत्पादन कर पोषक भोजन तथा स्वरोजगार की एक नई दिशा से अभिभूत करने के उद्देश्य से एक–एक दिवसीय 'मशरूम उत्पादन प्रशिक्षण शिविर' का आयोजन **ग्राम जामिरखेत विकासखण्ड– बिण जनपद– पिथौरागढ** में किया गया जिसमें कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डा० नीलाम्बर पुनेठा, जिला समन्वयक, उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) देहरादून विशिष्ट अतिथि डा०निर्मला भट्ट, वरिष्ठ वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र, गैना, पिथौरागढ़ तथा कार्यक्रम की अध्यक्षता डा० कुमकुम साह वरिष्ठ प्रवक्ता जन्तु विज्ञान विभाग,एल०एस०एम०रा०स्ना०महाविद्यालय पिथौरागढ़ द्वारा की गई।

सर्वप्रथम कार्यशाला में गाँधी ग्राम, जामिरखेत के 35 काश्तकारों ने कार्यशाला से पूर्व मशरूम उत्पादन हेतु आवश्यक सावधानियों के साथ मशरूम उत्पादन के प्राथमिक चरण का तकनीकी ज्ञान डा० निर्मला भट्ट, वरिष्ठ वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र, गैना, पिथौरागढ़ तथा डा० कुमकुम साह वरिष्ठ प्रवक्ता जन्तु विज्ञान विभाग,एल०एस०एम०रा०स्ना० महाविद्यालय पिथौरागढ़ के दिशानिर्देशन में प्रायोगिक रूप में किया जिसके अन्तर्गत काश्तकारों द्वारा भूसे से रसायनों की मात्रा उचित अनुपात में मिश्रण कर ढिंगरी मशरूम की बीजायी की गयी तथा मशरूम बैग बनाये गये।

कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य बताते हुए लोक संचार एवं विकास समिति के अध्यक्ष श्री योगेश भट्ट ने कहा कि पर्वतीय क्षेत्रों में ढिंगरी मशरूम के उत्पादन की अपार सम्भावनाएँ हैं, जिसे यदि स्वरोजगार के रूप में जोड़ा जाए तो यह एक स्वरोजगार का सशक्त माध्यम सिद्ध होगा क्योंकि मशरूम की स्वादिष्टता एवं आहार पौष्टिकता के कारण विशेषकर शाकाहारी लोगों के बीच इसकी लोकप्रियता बहुत अधिक है जिसके कारण यदि व्यापक रूप में मशरूम का उत्पादन स्थानीय स्तर पर किया जाए तो क्षेत्र को स्वरोजगार की नयी दिशा प्राप्त होगी।

कार्यक्रम की सन्दर्भ शिक्षिका डा०निर्मला भट्ट ने बताया कि मशरूम में पाये जाने वाले प्रोटीन फलों एवं सब्जियों में पाये जाने वाले प्रोटीन से उत्तम होते हैं एवं आवश्यक अमीनो अम्ल भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जो शरीर के भीतर रोग–प्रतिरोधक क्षमता विकसित करने में सहायक होते हैं परन्तु आवश्यक तकनीकी ज्ञान के अभाव में मशरूम उत्पादन की विधा से काश्तकार वंचित हैं जिसके कारण आज बाजार में जरूरत की अपेक्षा मशरूम उत्पादन की दर न्यूनतम है, इसके अतिरिक्त प्रतिकूल मौसम व जलवायु के कारण काश्तकारों को परम्परागत खेती से काफी नुकसान उठाना पड़ रहा है जिसके कारण खेती से हताश होकर काश्तकारों का मनोबल टूट रहा है। ऐसे में यदि पूर्ण वैज्ञानिक तरीकों से कम समय में कम लागत में अधिक उत्पादन हेतु मशरूम का उत्पादन किया जाएगा तो निश्चित रुप से काश्तकारों की आर्थिक स्थिति में सुधार होगा ढिंगरी मशरूम की कुछ अन्य प्रजातियों जैसे– प्लूरोट्स सजोरकाजू, प्लूरोटस लेबेलेट्स,प्लू० सेपीड्स, प्लू० ऑस्ट्रिसस, प्लू०साइट्रीनोपाइलियेट्स,

प्लू० फोसूलेटेस, प्ल० इरनजाय के विषय में भी महत्वपूर्ण तथ्य प्रदान किये गये तथा इसे व्यापक रूप में उगाने की अपील की।

डा० कुमकुम साह, पूर्व वैज्ञानिक, रक्षा जैव ऊर्जा अनुसंधान प्रयोगशाला पण्डा द्वारा मशरूम के महत्व एवं उपयोगिता को रेखांकित करते हुए बताया गया कि बीजायी (स्पॉनिंग) से पूर्व प्रयुक्त रसायन बाबस्टीन, फॉर्मलीन की उचित मात्रा, फसल की तैयारी, मशरूम की प्रजातियों का उत्पादन कृषि अवशेषों जैसे गेहूँ का भूसा, धान का पुवाल, ज्वार, बाजरा, भुट्टे की पत्तियाँ, मडुआ एवं लकड़ी का बुरादा आदि में भी आसानी से किया जा सकता है। उन्होंने मशरूम उत्पादन हेतु काश्तकारों से बढ़–चढ़ कर अपनी भागीदारी सुनिश्चित करने का आवाहन किया।

अन्त में श्री योगेश भट्ट संस्थाध्यक्ष, 'लोक संचार एवं विकास समिति' पिथौरागढ़ ने कार्यक्रम में अपनी गरिमामयी उपस्थिति दर्ज करा रहे अतिथिगणों तथा उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् (यूकॉस्ट) देहरादून का विशेष आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम को सफल बनाने में डा० डी०पी० लोहिया, कु० सुमन बिष्ट ने विशेष सहयोग प्रदान किया। कार्यक्रम का संचालन, कु० सुमन बिष्ट, सदस्य लोक संचार एवं विकास समिति, पिथौरागढ़ द्वारा किया गया।

अपना विज्ञान-ज्ञान बढ़ाइये

'मीन' मंथन

मछली जल की रानी है,
जीवन उसका पानी है,
हाथ लगाओगे डर जाएगी,
बाहर निकालोगे तो मर जाएगी।

मछली से संबंधित विविध जानकारी प्रश्नोत्तरों के रुप में प्रस्तुत है। आपको प्रश्नों के उत्तर पता हैं तो उत्तम, कुछ नहीं पता हैं तो आपके लिये लाभदायक। आशा है उपयोगी होगा।

1. ''गैम्बूसिया'' क्या है?
2. भारत का सबसे बड़ा फिश एक्वारियम कहाँ स्थित है?
3. ''मत्स्यविनोद'' क्या है?
4. मत्स्य पालन में प्रथम स्थान किस राज्य का है?
5. मछलियाँ किस वर्ग में आती है?
6. नीली क्रांति किससे सम्बन्धित है?
7. मछलियाँ धरती पर कितने वर्षों से हैं?
8. मछलियों की लगभग कितनी प्रजातियाँ ज्ञात है?
9. वह कैट फिश कौन सी है जो एक्वारियम में पत्थरों और काँच पर लगी काई खा जाती है?
10. नेशनल ब्यूरो आफ फिश जेनेटिक रिसोर्सेस कहाँ स्थित है?
11. भारत का कौनसा राज्य सर्वाधिक मछलियों का उपयोग करता है?
12. विश्व की सबसे बड़ी मछली कौन सी है?
13. विश्व की सबसे छोटी मछली कौन सी है?
14. मछली का तेल किस रोग के लिए लाभदायक होता है?
15. सेन्ट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ फिशरीज एजूकेशन कहाँ स्थित है?
16. सेन्ट्रल इनलैंड फिशरीज रिसर्च इंस्टीट्यूट कहाँ स्थित है?
17. सेन्ट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ फिशरीज टेक्नोलॉजी कहाँ स्थित है?
18. सेन्ट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ फ्रेशवाटर एक्वाकल्चर कहाँ स्थित है?
19. भारत में मत्स्य विज्ञान की शिक्षा कब प्रारम्भ की गई?
20. भारत में पहला फिशरीज कालेज कब और कहाँ स्थापित किया गया?
21. मछली उत्पादन तथा निर्यात करने में प्रथम स्थान किस देश का है?
22. एक्वाकल्चर की शुरूआत कब और कहाँ हुई थी?
23. गंगा नदी में मछली की कितनी जातियाँ पाई जाती हैं?
24. विश्व में सर्वाधिक पालन होने वाली कौनसी कार्प मछली है?
25. 'मछुआरों का शहर' किस जगह को कहा जाता है?
26. डायरेक्टरेट ऑफ कोल्डवाटर फिश रिसर्च कहाँ स्थित है?
27. शार्क लिवर आयल किसका मुख्य स्रोत है?
28. 'मीन महोत्सव' कहाँ मनाया जाता है?
29. भारतीय मेजर कार्प कौन–कौन सी हैं?
30. उत्तराखण्ड की नदियों में पाई जाने वाली कौन–सी मछली को 'स्नो–ट्राउट' कहा जाता है?
31. कौन–सी मछली को 'महाशीर' कहा जाता है?
32. रोहू का वैज्ञानिक नाम क्या है?
33. भारत में समुद्री मछली उत्पादन करने वाले कितने राज्य हैं?
34. मछलियों के शरीर से चिपचिपाहट दूर करने के लिए किससे धोना चाहिए?
35. विश्व के कुल मत्स्य उत्पादन का कितने प्रतिशत हिस्सा मानव भोजन का है?
36. मछलियों में कौनसा मुख्य तत्व पाया जाता है?
37. मत्स्य उद्योग विश्व में लगभग कितनी जनसंख्या को रोजगार उपलब्ध कराता है?
38. समुद्रों में शार्क मछलियों की कितनी प्रजातियाँ पायी जाती हैं?
39. शार्क मछलियाँ समुद्रों में कब से हैं?
40. मछलियाँ पालने पर वे लगभग कितने समय में खाने योग्य हो जाती हैं?
41. सामान्यत : मछली का कितना भाग खाने योग्य होता है?
42. मछली के माँस का पालन आसानी से क्यों हो जाता है?
43. मछली में कौनसा प्रोटीन और कितनी मात्रा में होता है?
44. मछली में कौनसा वसीय अम्ल पाया जाता है?
45. भारत में मछली की कितनी प्रजातियाँ खारे पानी की हैं और कितनी स्वच्छ जल की हैं?
46. कुछ मछलियों को 'कैट–फिश' क्यों कहा जाता है?
47. फ्लाइंग–फिश कौन सी मछली को कहा जाता है?
48. समुद्री घोड़ा किसे कहते है?
49. 'नीडल–फिश' किसे कहते हैं?
50. पर्वतीय क्षेत्रों में कौनसी कार्प मछलियों का पालन किया जाता है?

उत्तर

1. मछली जो मच्छरों का लार्वा खा लेती है।
2. मुम्बई।
3. मछली पकड़ने का एक तरीका।
4. पश्चिम बंगाल।
5. पीसीज़ वर्ग में।
6. मत्स्य उत्पादन से।
7. 450 मिलियन वर्षों से।
8. लगभग 25000 प्रजातियाँ।
9. लोरिकारिया।
10. लखनऊ।
11. पश्चिम बंगाल।
12. व्हेल शार्क (रिंकोडोन टाइपस, 15–18 मीटर लम्बी)
13. फिलीपीन्स में पाई जाने वाली पन्डाका पिग्मीया 7.5–11.0 मिलीमीटर लम्बी।
14. हृदय रोग की रोकथाम के लिए।
15. मुंबई।
16. बैरकपुर, पश्चिम बंगाल।
17. कोच्चि, केरल।
18. भुवनेश्वर, उड़ीसा।
19. 1969।
20. 1969, मंगलौर।
21. चीन।
22. 2000 वर्ष पहले चीन, रोम और इजिप्ट में।
23. 265 जातियाँ।
24. सिप्रीनस कार्पियो
25. मेडिटरेनियन शहर 'सिडोन' को।
26. भीमताल, उत्तराखण्ड में।
27. विटामिन–ए।
28. उत्तराखण्ड के जौनसार–बावर क्षेत्र में।
29. रोहू, नैन और कतला।
30. शाईजोथोरैक्स को।
31. टौर को।
32. लेबियो रोहिता
33. 12
34. नमक के घोल से।
35. 75
36. प्रोटीन।
37. 38 मिलियन।
38. लगभग 370 प्रजातियाँ।
39. डायनासोर के समय से।
40. 12–18 माह।
41. 65 प्रतिशत भाग।
42. संयोजी का प्रतिशत केवल 3–5 होता है जबकि स्तनधारियों के माँस में 15–20 प्रतिशत होता है।
43. मायोफाइब्रिलर या संकुचनशील प्रोटीन (65–70)
44. ओमेगा–3
45. लगभग 1600 खारे पानी की प्रजातियाँ एवं 600 स्वच्छ जल की प्रजातियाँ हैं।
46. उनके मुँह के चारों तरफ बिल्ली की मूछों की तरह धागे नुमा संवेदी संरचनाएँ (बारबल) होती हैं।
47. एक्सोसीटस को।
48. हिप्पोकैम्पस को।
49. जेनेन्टोडोन कैन्सिला को।
50. सिल्वर कार्प (हाईपोथैलमिक्थीस मोलिट्रिक्स), कामन कार्प (सीपरीनस कार्पियो), ग्रास कार्प (टीनोफैरिंगोडोन इडेल्ला)

भूतपूर्व छात्र, एमएस.सी., जन्तु विज्ञान,
डी.बी.एस. महाविद्यालय, देहरादून

विज्ञान कविता

सिकता कण हम

एक बालुका कण छोटा सा सुडौल सा चमकीला
लंबी यात्रा कर आया था, था परिपक्व हठीला
खनिजशास्त्र के दृष्टिकोण से क्वार्ट्ज नाम था उसका
ऑक्सीजन सिलिकॉन योग से देह बना था जिसका

कोटिक वर्ष पूर्व, भूतल के गहरे अन्तस्तल में
विगलित शैल घनन से सारे क्वार्ट्ज खनिज थे जनमे
बड़े बड़े सुन्दर क्रिस्टल थे मनमोहक आकर्षक
रहे वहीं वे अनजाने से सारे जाने कब तक

भू की अन्दर की हलचल ने ठेला उनको ऊपर
शनैः शनैः वे फिर आ पहुँचे कालवशात् सतह पर
वहाँ बने सम्माननीय वे पर्वत के थे मूलाधार
पर्वत थे भूधर औ वे थे गिरिधर उनकी शक्ति अपार

लाखों वर्षों तक भूतल पर पवन, नीर, हिम के आघात
सहते रहे और थे घिसते रहे बचाते पर निःपात
किन्तु एक दिन किसी सरित के प्रवाह के वे भाग बने
निकल पड़े यात्रा पर बरबस चले पंथ पर अनजाने

कलकल जल के संघातों से देह बन रहा गोलाकार
क्रम से लधुतर करती जाती आपस की टक्कर की मार
ढेले से कंकड़ हो जाते, कंकड़ से बन जाते कण
और देह पर टकराहट से पड़ते छोटे मोटे व्रण

ऐसे अगणित सिकता कण फिर कभी सिन्धु तट पर जम कर
धीरे धीरे जुड़ कर मिलकर और दाब अति पा पा कर
घनीभूत होकर तब बनते नूतन एक कठोर शिला
लंबी यात्रा का अस्थायी उनको एक पड़ाव मिला

वह पत्थर फिर घिसता जाता फिर नूतन सिकता का कण
बारंबार यही क्रम चलता, परिवर्तन हर पल, हर क्षण
शैल कथा यह हम सबके ही जीवन भर घटती रहती
कर्ता होने का मद छोड़ो यह धरती कहती रहती

मुकुन्द जोशी

मछली जो मछली नहीं है

जेली–फिश

'जैली–फिश' मछली नहीं वरन् संघ–सीलेन्ट्रेटा के एक समुद्री सदस्य औरेलिया का व्यावहारिक नाम है। इसके शरीर का अधिकांश भाग जेली से निर्मित होता है।

कटल–फिश

'कटल–फिश' मछली नहीं अपितु संघ–मोलस्का के एक समुद्री सदस्य सीपिया को कहा जाता है। यह 30 सेमी तक लम्बा होता है। यह मछली, झींगा, केकड़े आदि खाता है।

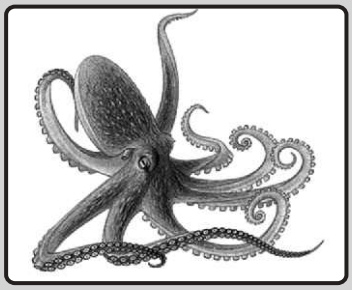

डेविल–फिश

'डेविल–फिश' मछली नहीं वरन् संघ–मोलस्का के समुद्री सदस्य आक्टोपस का व्यावहारिक नाम है।

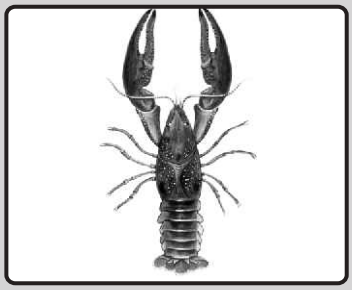

क्रे–फिश

'क्रे–फिश' भी मछली न होकर संघ–आथ्रोपोडा के समुद्री झीगों का व्यावहारिक नाम है।

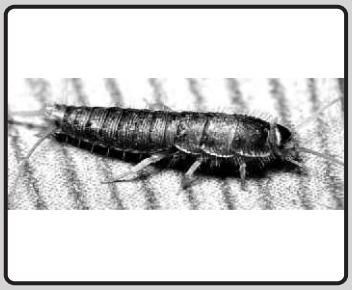

सिल्वर–फिश

'सिल्वर–फिश' 'पुस्तक–जूँ' (पुस्तकों, फाइलों आदि की गोंद खाने वाली) नामक कीट का व्यावहारिक नाम हैं। इसका वैज्ञानिक नाम लेपिस्मा है और यह संघ–आर्थ्रोपोडा का सदस्य है।

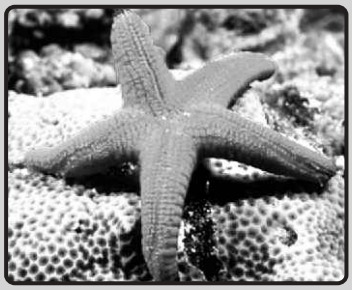

स्टार–फिश

'स्टार फिश' (सितारा मछली) मछली नहीं अपितु संघ–इकाइनोडरमेटा के समुद्री सदस्य एस्टेरियास का व्यावहारिक नाम है।

व्हेल

मछली जैसी समुद्री 'व्हेल' भी एक मछली न होकर स्तनधारी समुद्री वर्ग (शिशुओं को दूध पिलाने वाले) का सदस्य है। यह लगभग 35 मीटर लम्बी होती है। इसका भार 150 टन तक होता है।

डाल्फिन

गंगा में पायी जाने वाली डाल्फिन (स्थानीय भाषा में 'सुस' के नाम से प्रचलित) मछली नहीं अपितु स्तनधारी वर्ग के सदस्य का व्यावहारिक नाम है। इसका शरीर 2 से 3 मीटर लम्बा होता है। इसके जबड़े में लगभग 200 दाँत होते हैं और मुँह चिड़िया की चोंच की तरह होता है।

विज्ञान व्यंग चित्र

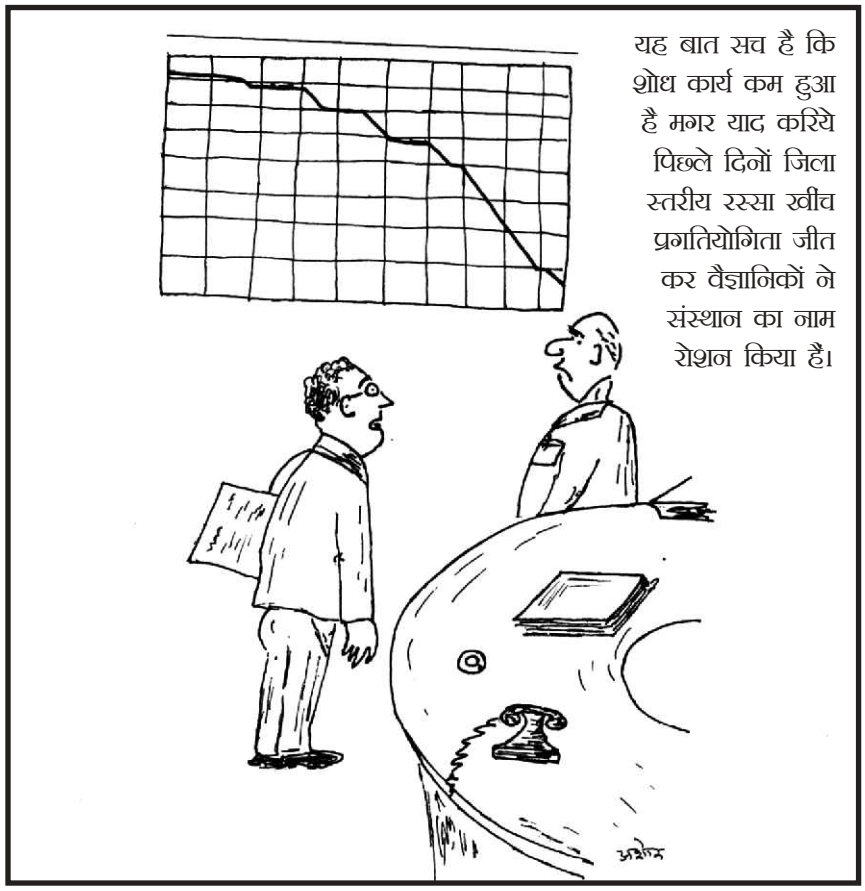

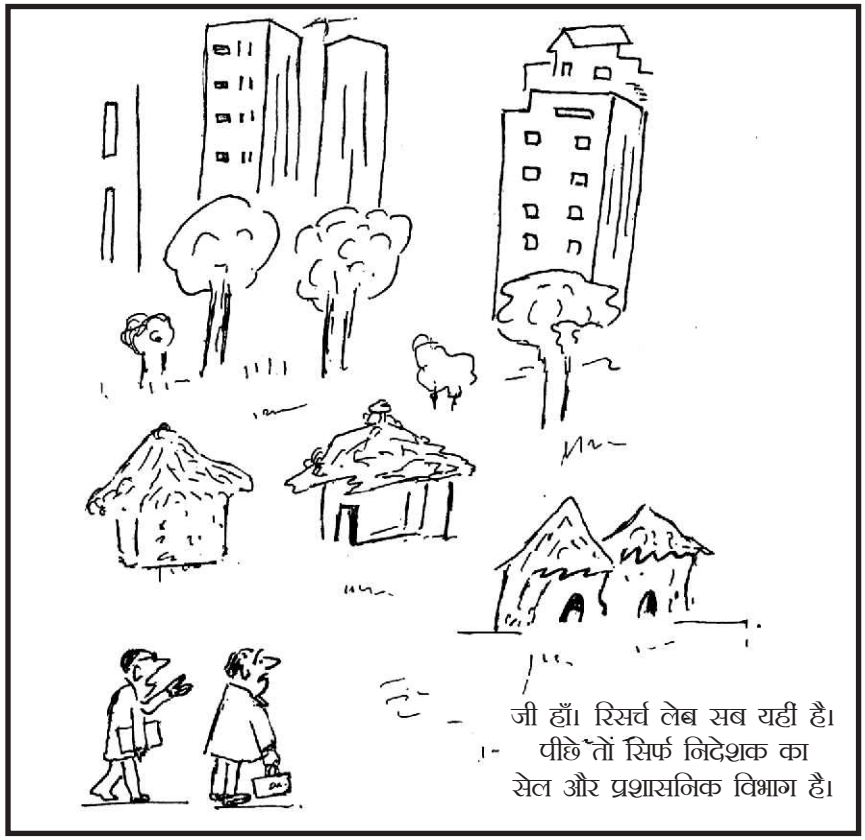

अशोक कुमार दुबे

विज्ञान कविता

ग्लोबल वार्मिंग (वैश्विक तापन)

धरती प्रभु की अनुपम रचना,
इसका है सानी तो कौन?
शांत गाय सी जितना दुह लो
पर बेचारी रहती मौन

इसका सब कुछ अपनों के हित
रखा हुआ है करके संचित
अतुल संपदाएं, हरियाली
नदियां, झरने स्वच्छ अपरिमित

लेकिन अपने सुख की खातिर
किया धरा को पल–पल खंडित
फिर मानव कुकृत्यों खातिर
क्यों न धरा से हो वह दंडित?

जंगल काटे, छीनी खुशियाँ
किया जीव का जीना दूभर
बढ़ा प्रदूषण, रोग, शोक सब
कैसे लौटे स्वर्ग धरा पर?

हुआ कठिन जीवों का जीना
बना मौत पानी का पीना
हुए खत्म संसाधन जिसने
चैन–अमन हम सबका छीना

परा बैंगनी, सूरज की जो
रह–रह किरणें नित्य बचाता
करें संरक्षण ओजोन परत का
बचे तभी यह धरती माता

मानव जन्य ग्रीन गैसों से
बढ़ रहा हरित गृह प्रभाव
कार्बन, नाइट्रस और मीथेन ग्रीन
बढ़कर बदले फिर धरा स्वभाव

जैव विविधता घट जाएगी
समृद्धि धरा की बंट जाएगी
आओ इस सबका संरक्षण
कर धरती को स्वर्ग बनाएं

दिनेश चमोला 'शैलेश'
संपादक विकल्प
भारतीय पेट्रोलियम संस्थान
देहरादून

विज्ञान वर्ग पहेली - १

पाठकों के वैज्ञानिक मनोरंजन के लिये यह वर्ग पहेली प्रस्तुत है। इसे सुलझाइये, अपने इष्ट मित्रों, विद्यार्थियों और बच्चों को भी हल करने के लिये दीजिये। पहेली का स्तर सामान्य वैज्ञानिक जानकारी का रखा गया है तथा उसे अत्यधिक तकनीकी होने से बचाने का प्रयास किया गया है। वैज्ञानिक शब्द हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों के हैं। हिंदी शब्द वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा स्वीकृत हैं।

1		2		3		4	5
				6			
7			8				
		9			10		
11					12		
				13			14
15			16			17	

संकेत बांये से दांये

1. रक्त का एक महत्वपूर्ण घटक
4. नाग (अंग्रेजी)
6. चमक की इकाई, मीटर कैंडल
7. जुड़वांपन (ट्विनिंग) (क्रिस्टल विज्ञान)
9. बिजली की शक्ति की इकाई
10. कान के मध्य भाग की तीन हड्डियों में से एक 'इंकस' का आकृति के आधार पर प्रयुक्त हिंदी नाम
11. फूलों में पुंकेसरों के स्त्रीकेसर तक पहुंचने की क्रिया
12. क्रिप्टोक्रिस्टलाइन सिलिका का एक खनिज
13. एक हजार किलोग्राम
15. बेल
16. ठोस जल
17. गणित में 'वैरिएबल' राशि

संकेत ऊपर से नीचे

1. एक तत्व जिसका परमाणु भार 4 तथा परमाणु संख्या 2 होती है
2. वैश्विक तापमान वृद्धि (अंग्रेजी)
3. घर में पानी प्राप्त करने का साधन;
5. एक वनस्पति वर्ग जिसमें दीवाल पर लगी काई (मॉस) संमिलित है
8. कठोर सूखा फल; बोल्ट का साथी (अंग्रेजी)
10. पुं बीज तथा स्त्री बीज का मिलन (वनस्पति विज्ञान)
11. तह, परत, अवसाद का अति पतला स्तर (भू विज्ञान)
13. कृत्रिम घास का मैदान
14. अम्ल से क्रिया कर लवण बनाने वाला पदार्थ

ईश्वर का अस्तित्व हो सकता है या नहीं भी हो सकता परन्तु ईश्वरत्व या देवत्व की हमारी खोज निश्चित रूप से श्रेष्ठ है और साथ ही साथ मानवीय भी। सत्य की गहराइयों की खोज में जुटे मानव ने जितने भी मार्गों का अबलम्बन किया उन सब से यही बात सिद्ध होती है। कुछ लोगों को ध्यान, धारणा और प्रार्थना में शांति मिलती है। कुछ अन्य परोपकार तथा दूसरों की सेवा में ही सुख प्राप्त करते हैं। कई ऐसे भाग्यशाली और प्रतिभाशाली भी होते हैं जो अपनी कलाओं की साधना में ही रमे रहते हैं। जीवन तथा प्रकृति के रहस्यों को जानने और समझने का प्रयास भी ऐसा ही एक कार्य है जिसे हम विज्ञान कहते हैं। इसका अर्थ यह बिल्कुल नहीं है कि हर वैज्ञानिक सत्यशोधक ही होता है; बल्कि अधिकांश नहीं होते। लेकिन विज्ञान की हर शाखा में कुछ तो ऐसे निश्चित रूप से होते ही हैं जो अपने विषय के सत्य को पाने के लिये सदैव प्रयत्नशील और उत्सुक होते हैं। गणितज्ञ संख्याओं का रहस्य जानना चाहता है; जीवविज्ञानी जीवन को समझने का प्रयत्न करता है; भौतिक विज्ञानी दिक्काल के बारे में सोचता और सृष्टि की उत्पत्ति को समझना चाहता है। इन सारे मौलिक प्रश्नों का उत्तर पाना बहुत कठिन है और उत्तर सीधे मिल भी नहीं सकते। कुछ गिने चुने वैज्ञानिकों में ही ऐसी बातों के लिये वक्त और धीरज होता है। यह एक अत्यन्त दुरूह मार्ग है पर उतना ही सन्तोषदायी भी। जब भी किसी को अपने विषय के किसी प्रश्न का मूल आधार प्राप्त हो जाता है तो वह ज्ञान तब तक हमें प्राप्त सारी जानकारी का स्वरूप ही बदल देता है।

ली स्मोलिन 'द ट्रबल विथ फिजिक्स' पुस्तक में
(संदर्भ : करेंट साइंस, संपादकीय, 99(5), 10 सिंतबर, 2010)

सलाहकार मण्डल

प्रो. ए.एन.पुरोहित,
पूर्व कुलपति,
हेनब.गढ़वाल विश्वविद्यालय,
आलमी आँचल,
डोभालवाला,
देहरादून

डॉ. राजेन्द्र डोभाल,
निदेशक,
उत्तराखण्ड राज्य विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद,
देहरादून

डॉ. एस.एस.नेगी,
निदेशक,
वन अनुसंधान संस्थान,
देहरादून

प्रो. एस.सी.सक्सेना,
निदेशक,
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान,
रूड़की

डॉ. ए.के.गुप्ता,
निदेशक,
वाड़िया हिमालय भूविज्ञान संस्थान,
देहरादून

डॉ. मनोज पटेरिया,
निदेशक,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी संचार परिषद्, नई दिल्ली

श्री लीलाधर जगूड़ी,
सीताकुटीर, बदरीपुर, देहरादून

डॉ. एम.ओ.गर्ग,
भारतीय पेट्रोलियम संस्थान,
देहरादून

प्रो. धीरेन्द्र शर्मा,
निदेशक,
सेंटर फॉर साइंस पॉलिसी रिसर्च,
निर्मल निलय, भगवंतपुर, देहरादून

डॉ. रवि चोपड़ा,
पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट,
252, वसंत विहार, फेज–1,देहरादून

डॉ. बी.एस.बिष्ट,
कुलपति,
जी.बी.पन्त कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,
पन्तनगर

डॉ. जी.एस. रौतेला,
डी.जी.,
राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद्,
कोलिकाता

डॉ. डी.के. पाण्डे,
राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद,
नई दिल्ली

XPRESSIONS 9219552563